RNI-UPBIL/2011/38102

ISSN-2231-5837

Indian Journal of Social Concerns

इण्डियन जर्नल ऑफ सोशल कन्सर्न्स

(मानविकी एवं समाज विज्ञान पर केन्द्रित अन्तरराष्ट्रीय त्रैमासिक शोध पत्रिका)

Volume - 9 : Issue - 36 Jan. - June 2020 Gaziabad

A RESEARCH JOURNAL OF HUMANITIES AND SOCIAL SCIENCES

(An International Peer-Reviewed & Refereed Journal)

Journal Impact Factor No. : 2.821

Editor
Dr. RAJ NARAYAN SHUKLA

Asstt. Editor
MUKTA SONI

Art Editor
Dr. (MS) PANKAJ SHARMA

Legal Advisor
Dr. JASWANT SAINI
SHRI BHAGWAN VERMA

Office Assistant
JITENDER GIRDHAR

Chief Editor
Dr. HARI SHARAN VERMA

Sub Editor
Dr. PUSHPA
Dr. BEENA PANDEY (SHUKLA)

Managing Editor
Dr. SATISH AHUJA
Dr. SANGEETA VERMA

Joint Editor
Dr. PRIYANKA SINGH

Computer Operator
MS. NEHA VERMA

Dr. Hari Sharan Verma
Chief Editor

Dr. Raj Narayan Shukla
Editor

Dr. Satish Ahuja
Managing Editor

Dr. Sangeeta Verma
Managing Editor

☆ The responsibility of the originality of the articles/papers shall be of the author.

☆ The editor does not owe any kind of responsibility in this regard.

मानविकी शोध पीठ प्रारम्भ सोसायटी,
गाज़ियाबाद द्वारा संचालित

Created by Universal Document Converter

प्रकाशक : डॉ० राजनारायण शुक्ला, सम्पादक
SH, A-5, कविनगर, गाजियाबाद (उ० प्र०)
दूरभाष : 9910777969
E-mail : *harisharanverma1@gmail.com*
WWW.IJSCJOURNAL.COM

सहयोग राशि (भारत में)
(व्यक्तिगत) (आजीवन 4100 रुपये)
(संस्थागत) (आजीवन 6100 रुपये)

विदेश में :–
(व्यक्तिगत) 26 यू.एस. डॉलर (आजीवन) (संस्थागत) 32 यू.एस. डॉलर (आजीवन)

कृपया सहयोग राशि बैंक ड्राफ्ट से ही भेजें।
बैंक ड्राफ्ट, संपादक "इण्डियन जर्नल ऑफ सोशन कन्सर्न्स" के पक्ष में देय होगा। आजीवन सदस्यता केवल दस वर्षों के लिए मान्य होगी। यदि किसी कारण वश पत्रिका का प्रकाशन बन्द हो जाता है तो आजीवन सदस्यता स्वतः ही समाप्त हो जायेगी।

संपादकीय कार्यालय :

1. **डॉ० हरिशरण वर्मा, प्रधान सम्पादक**
F-120, सेक्टर–10, DLF, फरीदाबाद (हरियाणा)
harisharanverma1@gmail.com 09355676460
WWW.IJSCJOURNAL.COM
2. **डॉ० राजनारायण शुक्ला, सम्पादक**
SH, A-5, कविनगर, गाजियाबाद (उ०प्र०)

क्षेत्रीय कार्यालय

1. डॉ० वाई.आर. शर्मा, A-24, रेजिडेंसल कैम्पस, न्यू कैम्पस, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू–180001, फोन : 09419145967
2. डॉ० पी.के. शर्मा, (ई–36 बलवन्त नगर विश्वविद्यालय मार्ग, गवालियर, मध्यप्रदेश फोन : 09039131615
3. डॉ० राजकुमारी सिंह (प्रोफेसर एफ.टी.एम. विश्वविद्यालय लोधीपुर राजपुत मुरादाबाद उत्तर प्रदेश। फोन : 09760187147
4. श्री मोहनलाल, 11 अशोक विहार, संजय नगर, पो. इज्जत नगर बरेली (उ०प्र०) फोन : 09456045552
5. श्री जितेन्द्र गिरधर, कार्यालय सहायक 105/26 जवाहर नगर,कॉपरेटिव बैंक के पीछे, रोहतक 09896126686

स्वत्त्वाधिकारी, प्रकाशक एवं मुद्रक डॉ० राजनारायण शुक्ला द्वारा आदर्श प्रिंट हाऊस, बी–३२, महेन्द्रा एन्क्लेव, शास्त्री नगर, गाज़ियाबाद में मुद्रित कराकर, SH, A-5, कविनगर, गाजियाबाद (उ०प्र०) से प्रकाशित।

सम्पादक : डॉ० राजनारायण शुक्ला। **पंजीकरण संख्या :** ISSN-2231 - 5837

नोट : 1. प्रकाशित आलेखों के विचारों से सम्पादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
2. सभी पद मानद एवं अवैतनिक हैं।
3. शोध–पत्रिका से सम्बन्धित सभी विवाद केवल गाजियाबाद/फरीदाबाद न्यायालय के अधीन होंगे।

संरक्षक मण्डल :

1. **डॉ० रामसजन पाण्डेय** (कुलपति, बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय, रोहतक (हरियाणा)
2. **डॉ० योगेन्द्र नाथ शर्मा ''अरूण''** (पूर्व प्राचार्य, रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, ७४/३, नया नेहरूनगर, रूड़की, उत्तराखण्ड)
3. **डॉ० राजेन्द्र सिंह,** (पूर्व प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय राहतक
3. **डॉ० एस.पी. वत्स,** (पूर्व कुलसचिव, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
4. **डॉ० रमेशचन्द लवानिया,** (पूर्व अध्यक्ष हिन्दी विभाग, शम्भु दयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद
5. **डॉ० वाई.आर.शर्मा,** (राजनीति शास्त्र विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू)

परामर्शदात्री समिति :

1. **डॉ० नरेश मिश्रा** (पूर्व आचार्य, हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
2. **डॉ० सुधेश** (पूर्व आचार्य, हिन्दी विभाग, जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली)
3. **डॉ० गिरिराजशरण अग्रवाल** (पूर्व रीडर एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, वर्धमान कॉलेज, बिजनौर)
4. **डॉ० राजकुमारी सिंह,** प्रोफेसर एफ.टी.एम. विश्वविद्यालय लोधीपुर राजपूत मुरादाबाद, उत्तर प्रदेश 9760187147
5. **डॉ० प्रतिभा त्यागी,** (प्रोफेसर, अंग्रेजी विभाग, चौधरी चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ)
6. **डॉ० जंगबहादुर पाण्डेय,** (प्रोफेसर एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग) रांची विश्वविद्यालय, रांची–**834008**
फोन : 09431595318
7. **डॉ० माया मलिक,** (प्रोफेसर हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
8. **डॉ० ममता सिहल,** (एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्षा अंग्रेजी विभाग) जे०वी० जैन कॉलेज सहारनपुर

संपादकीय विशेषज्ञ समिति :
हिन्दी विभाग:

1. **डॉ० राजेश पाण्डे** (डी.वी. कॉलेज, उरई, जिला जालौन, उ०प्र०)
2. **डॉ० संजीव कुमार,** प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
3. **डॉ० सुशील कुमार शर्मा** (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय शिलांग, मेघालय)
4. **डॉ० शशि मंगला,** एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पलवल
5. **डॉ० के०डी० शर्मा,** एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पलवल
6. **डॉ० उत्तरा गुप्ता** (पूर्व रीडर एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, आर. एन. कॉलेज, मेरठ)
7. **मुकेश चन्द्र गुप्ता** (हिन्दी विभाग, एम.एच.पी.जी. कॉलेज, मुरादाबाद)
8. **डॉ० गीता पाण्डेय** (रीडर एवं अध्यक्षा, हिन्दी विभाग, एस.डी.

Created by Universal Document Converter

कॉलेज, गाजियाबाद)

9. **डॉ० प्रवीण कुमार वर्मा** (सह प्रोफेसर) हिन्दी विभाग, गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म महाविद्यालय, पलपल
10. **कु० महाविद्या उपाध्याय** (हिन्दी विभाग, राजकीय महाविद्यालय, आरोना (गुना) म०प्र०)
11. **डॉ० रूबी,** (सीनियर सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर (कश्मीर) 09419058585
12. **डॉ. सुरेश कुमार** (सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, बी.एल.जे. एस. कॉलेज, तोशाम, भिवानी)
13. **डॉ० उर्मिला अग्रवाल,** पूर्व प्राचार्या, नेशनल इस्माईल महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मेरठ
14. **डॉ० शशिबाला अग्रवाल** (रीडर, हिन्दी विभाग, कनोहर लाल स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय, मेरठ)
15. **डॉ० अनिल कुमार विश्वकर्मा** (जनता महाविद्यालय अजीतमल, औरेया, उ०प्र०)
16. **डॉ० एम. के. कलशेट्टी,** हिन्दी विभाग, श्री माधवराव पाटिल महाविद्यालय, मुरूम तह० अमरगा, जिला उस्मानाबाद (महाराष्ट्र)–413605
17. **डॉ० मनोज पंड्या,** व्याख्याता हिन्दी विभाग, श्री गोविन्द गुरु, राजस्थान महाविद्यालय, बांसवाड़ा–327001, मो० 09414308404
18. **डॉ. कृष्णा जून,** प्रो० हिन्दी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
19. **डॉ. विपिन गुप्ता,** सहायक प्रोफेसर, वैश्य कॉलेज भिवानी
20. **डॉ० सीता लक्ष्मी,** पूर्व प्रो० एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आन्ध्र विश्वविद्यालय, विशाखापट्टनम, आन्ध्रप्रदेश
21. **डॉ० जाहिदा जबीन,** (वरिष्ठ सहायक प्रो०, हिन्दी विभाग, कश्मीर विश्वविद्यालय, श्रीनगर–६)
22. **डॉ० टी०डी० दिनकर,** (एसो० प्रो० एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, अग्रवाल कॉलेज, बल्लभगढ़)
23. **डॉ० शीला गहलौत,** प्रोफेसर (हिन्दी विभाग) महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
24. **डॉ० राजीव मलिक,** (प्रो. एवं अध्यक्षा, हिन्दी–विभाग, भगत फूलसिंह महिला विश्वविद्यालय, खानपुर)
25. **डॉ० सुभाष सैनी,** (सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग दयालसिंह कॉलेज, करनाल, हरियाणा
26. **डॉ० उर्विजा शर्मा,** (सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग शम्भु दयाल स्नातकोत्तर, महाविद्यालय, गाजियाबाद
27. **डॉ० कामना कौशिक,** (सहायक प्रोफेसर हिन्दी विभाग एम.के. स्नातकोत्तर, महाविद्यालय, सिरसा 09896796006
28. **डॉ० मधुकान्त,** (वरिष्ठ साहित्यकार) 211- L मॉडल टाऊन, रोहतक

अंग्रेजी विभाग:

1. **डॉ. ममता सिहल, अध्यक्षा,** अंग्रेजी विभाग, जे.वी. जैन कॉलिज, सहारनपुर, उ.प्र.
2. **डॉ. रणदीप राणा, प्रोफेसर,** अंग्रेजी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
3. **डॉ. जयबीर सिंह हुड्डा, प्रोफेसर,** अंग्रेजी विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
4. **डॉ० रविन्द्र कुमार,** एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष अंग्रेजी विभाग, चौ० चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ
5. **डॉ. अनिल वर्मा** (पूर्व रीडर, अंग्रेजी विभाग, जे.वी. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सहारनपुर)
6. **डॉ. जे.के. शर्मा,** एसो. प्रोफेसर, अंग्रेजी विभाग, एस.जे.के कॉलेज, कलानौर (रोहतक)
7. **डॉ. रेशमा सिंह,** (एसो. प्रोफेसर, अंग्रेजी–विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर)
8. **डॉ. पी.के. शर्मा,** (प्रो., अंग्रेजी–विभाग, राजकीय के.आर.जी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर)
9. **डॉ. गीता रानी शर्मा,** (सहायक प्रोफेसर) गो.ग.दत्त सनातन धर्म कॉलेज, पलवल
10. **डॉ. किरण शर्मा,** (एसोसिएट प्रोफेसर) राजकीय स्नातकोत्तर महिला महाविद्यालय रोहतक

वाणिज्य विभाग:

1. **डॉ० नवीन कुमार गर्ग** (वाणिज्य विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
2. **डॉ० ए.के. जैन,** रीडर (वाणिज्य विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर)
3. **डॉ० दिनेश जून,** एसोसिएट प्रोफेसर, वाणिज्य विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, फरीदाबाद
4. **डॉ० एम.एल. गुप्ता,** (पूर्व एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, वाणिज्य एवं व्यवसायिक प्रशासन संकाय, एस.एस.वी. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, हापुड़ एवं संयोजक–शोध उपाधि समिति एवं संयोजक बोर्ड ऑफ स्टीडिज चौधरी चरणसिंह विश्वविद्यालय, मेरठ)
5. **डॉ० वजीर सिंह नेहरा,** प्रोफेसर वाणिज्य विभाग, म.द.वि. रोहतक
6. **डॉ० संजीव कुमार,** प्रोफेसर वाणिज्य विभाग, म.द.वि. रोहतक
7. **डॉ. गीता गुप्ता,** (सहायक प्रोफेसर) वाणिज्य विभाग, वैश्य महिला महाविद्यालय, रोहतक)
7. **डॉ. नरेन्द्रपाल सिंह,** (एसोसिएट प्रोफेसर) वाणिज्य विभाग, साहू जैन कॉलेज, नजीबाबाद, उ.प्र.)

राजनीति शास्त्र विभाग:

1. **साकेत सिसोदिया,** (राजनीति शास्त्र विभाग, एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद)
2. **डॉ० रोचना मित्तल** (रीडर एवं अध्यक्षा, राजनीति शास्त्र–विभाग, शम्भु दयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
3. **डॉ० राजेन्द्र शर्मा** (एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद, उ०प्र०)
4. **डॉ० कौशल गुप्ता,** एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, देशबन्धु महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली **Mob.: 09810938437**
5. **डॉ०पी.के. वार्ष्णेय**, एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, जे.वी.जैन कॉलेज, सहारनुपुर
6. **डॉ० सुदीप कुमार,** सहायक प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, डी.ए.वी. कॉलेज, पेहवा (कुरुक्षेत्र) **Mob.: 9416293686**
7. **डॉ० वाई०आर० शर्मा,** एसो० प्रो०, राजनीति शास्त्र विभाग, जम्मू

Created by Universal Document Converter

विश्वविद्यालय, जम्मू (कश्मीर)

8. **डॉ. रेनू राणा,** (सहायक प्रोफेसर, राजनीति शास्त्र विभाग, पं. नेकीराम शर्मा राजकीय महाविद्यालय रोहतक 124001
9. **डॉ. ममता देवी,** (सहायक प्रोफेसर, राजनीतिक शास्त्र विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

इतिहास विभाग:

1. **डॉ० भूकन सिंह** (प्रवक्ता, इतिहास विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
2. **डॉ० मनीष सिन्हा,** पी.जी. विभाग, इतिहास, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया, बिहार–824231
3. **डॉ० राजीव जून,** सहायक प्रो० इतिहास, सी.आर इन्स्टीट्यूट ऑफ ला, रोहतक
4. **डॉ० मीनाक्षी** (सहायक प्रोफेसर इतिहास विभाग) सी.आर. किसान कॉलेज, जीन्द
5. **डॉ० जगवीर सिंह गुलिया,** (सहायक प्रोफेसर इतिहास विभाग राजकीय महाविद्यालय मकड़ौली कलां रोहतक

भूगोल विभाग:

1. **डॉ० पी.के शर्मा,** पूर्व रीडर एवं अध्यक्ष, भूगोल विभाग, जे.वी. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सहारनपुर
2. **रश्मि गोयल** (भूगोल विभाग, एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद)
3. **डॉ० भूपेन्द्र सिंह,** एसोसिएट प्रोफेसर, भूगोल विभाग, राजकीय पी.जी. कॉलेज, हिसार
4. **डॉ० विनीत बाला,** सहायक प्रो. भूगोल विभाग, वैश्य पी.जी. कॉलेज, रोहतक

शिक्षा विभाग:

1. **डॉ० उमेन्द्र मलिक,** एसिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, म.द.वि. , रोहतक
2. **डॉ० सरिता दहिया** असिस्टेंट प्रोफेसर, शिक्षा विभाग, म.द.वि. , रोहतक
3. **डॉ० संदीप कुमार,** सहायक प्रो० शिक्षा विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
4. **डॉ० तपन कुमार बसन्तिया,** एसोसिएट प्रोफेस, सैंटर फॉर एजुकेशन, सैंट्रल यूनिवर्सिटी ऑफ साउथ विहार, गया कैम्या, विनोभा नगर, वार्ड नं. **29**, **Behind ANMCH** मगध कालोनी, गया–**823001**बिहार**Mob.: 09435724964**
5. **डॉ० नीलम रानी,** प्राचार्या, गोल्ड फील्ड कॉलेज ऑफ एजुकेशन, बल्लभगढ़ (फरीदाबाद)
6. **डॉ० उमेश चन्द्र कापरी,** सहायक प्राफेसर, शिक्षा विभाग, गोल्ड फील्ड कॉलेज ऑफ एजुकेशन, बल्लभगढ़ (फरीदाबाद) **Mob.: 09711151966, 7428160135**
7. **डॉ० सुनीता बडेला,** एसो० प्रो०, शिक्षा विभाग, हेमवतीनंदन बहुगुणा केन्द्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर, गढ़वाल–२४६१७४
8. **डॉ० (प्रो०) अनामिका शर्मा,** प्राचार्या, एम.आर. कॉलिज ऑफ एजुकेशन, फरीदाबाद
9. **डॉ० मनोज रानी,** सहायक प्रोफेसर (अंग्रेजी) एम.एल.आर.एस. कॉलिज ऑफ एजुकेशन, चरखी दादरी (भिवानी)
10. **डॉ० अनीता ढाका,** (प्राचार्या, आर.जी.सी.ई. कॉलेज, ग्रेटर, नोएडा।)
11. **डॉ० ममता देवी,** (सहा. प्रो. बी.आई.एम.टी. कॉलेज कमालपुर गढ़ रोड़, मेरठ)

शारीरिक शिक्षा विभाग:

1. **डॉ० राजेन्द्र प्रसाद गर्ग,** एसोसिएट प्रोफेसर शारीरिक शिक्षा विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
2. **डॉ० सरिता चौधरी,** सहायक प्रोफेसर, शारीरिक शिक्षा विभाग, आर्य गर्ल्ज कॉलेज, अम्बाला कैंट, हरियाणा
3. **डॉ० वरुण मलिक,** सहायक प्रोफेसर, म.द.वि., रोहतक
4. **डॉ० सुनील डबास,** (पद्मश्री व द्रोणाचार्य अवार्ड) HOD in physical education"DGC Gurugram
5. **डॉ० हरेन्द्र सांगवान,** सहायक प्रोफेसर, शारीरिक शिक्षा विभाग, गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म महाविद्यालय, पलपल

समाज शास्त्र विभाग:

1. **प्रवीण कुमार** (समाजशास्त्र विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)
2. **डॉ० कमलेश भारद्वाज,** समाज शास्त्र विभाग, एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद
3. **डॉ० (श्रीमती) रश्मि त्रिवेदी,** अध्यक्षा, रानी भाग्यवती महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बिजनौर एवं संयोजक रूहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली

मनोविज्ञान विभाग:

1. **डॉ० चन्द्रशेखर,** सहायक प्रोफेसर साईक्लोजी विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू
2. **डॉ. रश्मि रावत,** (मनोविज्ञान विभाग, डी.ए.वी. कॉलेज, देहरादून)
3. **अनिल कुमार लाल** (प्रवक्ता, मनोविज्ञान विभाग, शम्भुदयाल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गाजियाबाद)

अर्थशास्त्र विभाग:

1. **डॉ० जसवीर सिंह** (पूर्व रीडर अर्थशास्त्र विभाग, किसान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मवाना)
2. **डॉ० रेणु सिंह राना** (रीडर, अर्थशास्त्र विभाग, गिन्नी देवी मोदी कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोदीनगर)
3. **डॉ० सुशील कुमार** (एस.डी. कॉलेज, गाजियाबाद, उ०प्र०)
4. **डॉ० अखिलेश मिश्रा** (प्राध्यापक, अर्थशास्त्र–विभाग, एस.डी.पी.जी. कॉलेज, गाजियाबाद)
5. **डॉ० सत्यवीर सिंह सैनी,** एसो०प्रो० (अर्थ०वि०, गो०ग० सनातन धर्म पी०जी० कॉलेज, पलवल)
6. **डॉ० सारिका चौधरी,** अध्यक्ष अर्थशास्त्र विभाग, दयाल सिंह कॉलेज करनाल

विधि विभाग:

1. **डॉ० नरेश कुमार,** (प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
2. **डॉ० विमल जोशी,** (प्रोफेसर, विधि–विभाग भगत फूलसिंह महिला विश्वविद्यालय खानपुर, सोनीपत)

Created by Universal Document Converter

3. **डॉ० जसवन्त सैनी,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
4. **डॉ० वेदपाल देशवाल,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
5. **डॉ. अशोक कुमार शर्मा,** एसो. प्रोफेसर, विधि विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर
6. **डॉ. राजेश हुड्डा,** सहायक प्रो०, विधि विभाग, बी.पी.एस. महिला विश्वविद्यालय, खानपुर कलां, सोनीपत
7. **डॉ० सत्यपाल सिंह,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
8. **डॉ० सोनू,** (सहायक प्रोफेसर, विधि–विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक)
9. **डॉ० अर्चना वशिष्ठ,** (सहायक प्रोफेसर, के०आर० मंगलम विश्वविद्यालय, सोहना रोड, गुरुग्राम)
10. **डॉ० आनन्द सिंह देशवाल,** (सहायक प्रोफेसर, सी०आर० कॉलेज ऑफ लॉ रोहतक)
11. **अनसुईया यादव,** (सहायक प्रोफेसर, विधि विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा)

गणित विभाग:

1. **डॉ० संजीव कुमार सिंह** (रीडर गणित विभाग, ए.आर.ई.सी. कॉलेज, खुरजा)
2. **डॉ० विनोद कुमार,** रीडर एवं अध्यक्ष गणित विभाग, जे.वी. जैन कॉलेज, सहारनपुर
3. **डॉ० मीनाक्षी गौड,** रीडर एवं अध्यक्षा गणित विभाग, नानकचन्द ऐंग्लो, संस्कृत कॉलेज, मेरठ
4. **डॉ० विरेश शर्मा,** लेक्चरर गणित विभाग, एन.ए.एस. कॉलेज, मेरठ

कम्प्यूटर विभाग:

1. **डॉ० रेखा चौधरी,** एसोसिएट प्रोफेसर, कम्प्यूटर विभाग, राजकीय इंजीनियरियंग कॉलेज, भरतपुर, राजस्थान
2. **प्रो० एस.एस. भाटिया** (अध्यक्ष, स्कूल ऑफ मैथमेटिक्स एण्ड कम्प्यूटर एप्लीकेशन, थापर विवि, पटियाला)
3. **सर्वजीत सिंह भाटिया** (प्रवक्ता, कम्प्यूटर साईंस, खालसा कॉलेज, पटियाला)
4. **डॉ० बालकिशन सिंहल,** सहायक प्रोफेसर, कम्पयूटर विभाग, म०द०विश्वविद्यालय, रोहतक

संस्कृत विभाग:

1. **डॉ० रामकरण भारद्वाज** (रीडर एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग, लाजपत राय कॉलेज, साहिबाबाद (गाजियाबाद)
2. **डॉ० सुनीता सैनी,** प्रवक्ता, संस्कृत विभाग, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक
3. **डॉ० साधना सहाय** पूर्व प्राचार्या, नेशनल इस्माईल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मेरठ
4. **डॉ० सुमन,** (सहायक प्रोफेसर, संस्कृत–विभाग, आदर्श महिला महाविद्यालय, भिवानी।)

रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग:

1. **डॉ० आर०एस० सिवाच,** प्रो० एवं अध्यक्ष, रक्षा एवं स्त्रातजिक अध्ययन विभाग, म०द०वि०, रोहतक

दृश्यकला विभाग:

1. **डॉ० सुषमा सिंह,** एसोसिएट प्रोफेसर, दृश्यकला विभाग, म०द० विश्वविद्यालय, रोहतक

पंजाबी विभाग:

1. **डॉ० सिमरजीत कौर,** सहायक प्रो० (पंजाबी), ईश्वरजोत डिग्री कालेज, पेहवा (कुरूक्षेत्र)

संगीत विभाग:

1. **डॉ० संध्या रानी,** अध्यक्षा, संगीत विभाग, यूआरएलए, राजकीय पीजी कॉलेज, बरेली
2. **डॉ० हुकमचन्द,** एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष तथा डीन, संगीत विभाग महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक, हरियाणा
3. **डॉ. अनीता शर्मा,** (संगीत–गायन प्राध्यापिका, जयराम महिला महाविद्यालय लोहारमाजरा (कुरुक्षेत्र)
4. **डॉ. वन्दना जोशी,** (सहायक प्राध्यापक, विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग, एस.एस.जे. परिसर, अल्मोड़ा)

पत्रकारिता एवं जन संचार विभाग:

1. **डॉ० सरोजनी नंदल,** प्रोफेसर (पत्रकारिता एवं जन संचार विभाग) महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय, रोहतक

उर्दू विभाग:

1. **डॉ० मो. नूरूल हक,** (एसोसिएट प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष, उर्दू, बरेली कॉलेज, बरेली)

Created by Universal Document Converter

An update on UGC - List Journals

The UGC List of Journals is a dynamic list which is revised periodically. Initially the list contained only journals included in Scopus, Web of Science and Indian Citation Index. The list was expanded to include recommendations from the academic community. The UGC portal wasa opended twice in 2017 to universities to upload their recommendations based on filtering criteria available at https://www.ugc.ac.in/journallist/methodology.pdf. The UGC approved list of Journals is considered for recruitment, promotion and career advancement not only in universities and colloges but also other institutions of higher education in India. As such, it is the responsibillity of UGC to curate its list of approved journals and to ensure the it contains only high-quality journals.

To this end, the Standing Committee on Notification on Journals removed many poor quality/predatory/questionable journals from the list between 25th May 2017 and 19th Septemeber 2017. This is an ongoing process and since then the Committee has screened all the journals recommended by universities and also those listed in the ICI, which were re-evaluated and rescored on filtering criteria defined by the Standing Committee. Based on careful and analysis, 4,305 journals were removed from the current UGC-Approved list of Journals on 2nd May, 2018 because of poor quality/incorrect or insufficient information/false claims.

The Standing Committee reiterates that removal/non-inciusion of a journal does not necessarily indicate that it is of poor quality, but it may also be due to non-availability of information such as details of editorial board, indexing information, year of its commencement, frequency and regularity of its publication schedule, etc. It may be noted that a dedicated web site for journals is once of the primary criteria for inclusion of journals. The websites should provide full postal addresses, e-mail addresses of chief editor and editors, and at least some of these addresses ought to be verifiable official addresses. Some of the established journals recommended by universities that did not have didicated websites, or websites that have not been updated, might have bee dropped from the approved list as of now. However, they may be considered for re-inclusion once they fulfil these basic criteria and are re-recommended by universities.

The UGC's Standing Committee on Notification on Journals has also decided that the recommendation portal will be opened once every year for universites to recommend journals. However, from this year onwards, every recommendation submitted by the universities will be reviewed under the supervision of Standing Committee on Notification of Journals to ascertain that only good-quality journals, with correct publication details, are included in the UGC approved list.

The UGC would also like to clarity that 4,305 journals which have been removed on 2nd May, 2018 were UGC-approved journals till that date and, as such, articles published/accepted in them prior to 2nd May 2018 by applicants for recruitment/promotion may be considered and given points accordingly by universities.

The academic community will appreciate that in its endeavour to curate its list of approved journals, UGC will enrich it with high-quality, peer-reviewed journals. Such a dynamic list is to the benefit of all.

Created by Universal Document Converter

पत्रिका यूजीसी एप्रूव्ड

यूजीसी ने जर्नल अथवा पत्रिकाओं की एप्रूवल को आप्शनल कर दिया है ज्यादातर शोधार्थियों व प्राध्यापकों के अंदर अभी भ्रम की स्थिति की बनी हुई है कि ये पत्रिका में आलेख छपवाने से एपीआई में मान्य होगा या नहीं और ये जर्नल अथवा पत्रिका यूजीसी की लिस्ट में है या नहीं।

आपको जानकारी के लिए बता दूं कि यूजीसी ने अपने 18 जुलाई 2018 को जारी ऑर्डिनेंस में साफ कर दिया है कि जर्नल अथवा पत्रिका यूजीसी एप्रूव्ड अथवा **Peer Reviewed** (पूर्व समीक्षित) हो।

यानि जर्नल यूजीसी एप्रूव्ड नहीं भी है और **Peer Reviewed** (पूर्व समीक्षित) है तो उसमें छापे आपके आलेख एपीआई में मान्य होंगे। जर्नल के मुख्य पेज पर ही लिखा जाता है कि कौन सी पत्रिका यूजीसी एप्रव्ड है और **Peer Reviewed** (पूर्व समीक्षित) है।

Created by Universal Document Converter

LIFE MEMBERS OF INDIAN JOURNAL OF SOCIAL CONCERNS

1. **Dr. Praveen Kumar Verma**
   Associate Professor, Hindi Department, GGD Sanatan Dharam Post Graduate College, Palwal.

2. **Smt. Veena Pandey (Shukla)**
   Hindi Teacher, Jawahar Navodya Vidyalya, Dhoom Dadri, Distt. Gautambudhnagar - 203207 (U.P.)

3. **Dr. Kiran Sharma**
   Asso.Professor, English Department, Govt. P.G. College (Women), Rohtak (Haryana)

4. **Dr. Narayan Singh Negi**
   H.No. 15, Umracoat, langasu-246446, Distt. Chamoli, Uttrakhand.

5. **Dr. Sarika Choudhary**
   Head Department of Economics, Dyal Singh College, Karnal (Haryana)

6. **Dr. Suman**
   H.No. 1001, Radha Swami Colony, Rohtak Road, Bhiwani (Haryana)

7. **Dr. Reshma Singh**
   Assistant Professor, English Department, J.V. Jain College, Saharanpur (U.P.)

8. **Dr. Savita Budhwar**
   Assistant Professor, K.V.M. Narsing College, Rohtak.
   H.No. 196/29, Gali No. 9, Ram Gopal Colony, Rohtak.
   Mob. 9996363764

9. **Principal**
   Sat Jinda Kalyana College, Kalanaur (Rohtak, Haryana) 124113

10. **Dr. Renu Rana**
    Assistant Professor Department of (Political Science) Pt. Nekiram Sharma Govt. College Rohtak-124001
    H.No. 1355, Sect-2, Rohtak

11. **Dr. Mamta Devi**
    Assistant Professor Department of Polt. Science Hindu Girls College, Sonepat (Haryana)
    H. No. 2066, Sect. 2 (P), Rohtak 124001

12. **Dr. Subhash Chand Saini** (Hindi Department, Dyal Singh College, Karnal, Haryana

13. **Dr. Sarita Dahiya** (Department of Education, Maharshi Dayanand University, Rohtak 8222811312

14. **Dr. Vimla Devi,** Associat Professor (History), Swami Vivekanand Govt. (PG) College, Lohaghat, Champawat (Uttrakhand)

15. **Princepal,** Associat Professor (Hindi), Aggarwal College, Ballabhgarh (Haryana)

Created by Universal Document Converter

सम्पादकीय

''इण्डियन जर्नल ऑफ सोशल कन्सर्न्स' का 36वा अंक समर्पित करते हुए हमें प्रसन्नता हो रही है। आज मैं आपका ध्यान नई–पुरानी पीढ़ी के बीच संघर्ष जो अतीत काल से अब तक चला आ रहा है। उस विषय पर यदि हम विचार करें तो नई–पुरानी पीढ़ी में विचारो का मतभेद और नई पीढ़ी के नये परिवर्तनों को शंकालु दृष्टि से देखना, उनके साथ विचारों में तालमेल न बैठ पाना और नई पीढ़ी का पुरानी पीढ़ी के प्रति उपेक्षापूर्ण व्यवहार एवं अवहेलना और बगैर सोचे–समझे पुरानी पीढ़ी की प्रत्येक मान्यता का उपहास करना। ये सभी बाते नई–पुरानी पीढ़ी के संघर्ष को जन्म देती है। प्रत्येक माता–पिता अपने अधूरें सपनों को अपने बच्चों के द्वारा पूरा होता हुआ देखना चाहता है। परन्तु नई पीढ़ी के बच्चे माता–पिता को बिना किसी अंकुश के अपना जीवन अपने ढ़ंग से जीना चाहते हैं। दोनों ही पक्ष अपनी–अपनी बात अपनी–अपनी भावनाओं को ठीक मानकर अड़े रहकर अपनी विचारधाराओं को ठीक मानते हैं। दोनों पीढ़ियो में से कोई भी झुकने के लिए तैयार नहीं होता। इसके परिणामस्वरूप संबंधों में तनाव पैदा हो जाता है। पुरानी पीढ़ी यदि अपनी सोच को कुछ उदार बनाये और नई पीढ़ी पुरानी पीढ़ी के अर्जित ज्ञान और अनुभवों से लाभ उठाये, उन पर विचार करें तो दोनों पीढ़ियों का जीना आसान बन सकता है और पारिवारिक कठिनाइयों का मुकाबला करने की क्षमता पैदा की जा सकती है, किन्तु नई पीढ़ी जिसमें बेहद जोश–खरोश और उत्साह भरा होता है, उसकी सबसे बड़ी कमजोरी है क्योंकि सोचने के लिए उसे फुर्सत नहीं है। अपरिपक्वता और ठहराव के अभाव में नई पीढ़ी के लोग कई बार गलत कदम उठा लेते हैं, जिसके कारण बाद में उन्हें पछताना पड़ता है, और उनका भविष्य खतरे में पड़ जाता है।

यह तो उचित है कि बच्चों पर अपनी मर्जी थोपना ठीक नहीं परन्तु यहां पर यह भी उचित है कि उन पर आवश्यक अंकुश लगाना भी उचित है, जिससे बड़े होकर वे स्वेच्छाचारी और उद्दंड न बन सके। बच्चों को प्रारम्भ से ही इस प्रकार का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए कि घर की समस्याओं में उनकी भी भागीदारी है। क्योंकि तभी वे माता–पिता को सहयोग दे सकेंगे और उनमें अच्छी–बुरी परिस्थितियों का दृढ़ता से मुकाबला करने की क्षमता पैदा होगी और माता–पिता का सहयोग दे सकेंगे।

आधुनिक युग में दिन–प्रतिदिन मंहगाई द्रौपदी के चीर की तरह बढ़ने के कारण प्रत्येक व्यक्ति नौकर रखने की क्षमता नहीं रखता, ऐसी स्थिति में यदि बच्चों में आत्मनिर्भता नहीं आ पायेगा तो घर का काम कैसे चलेगा। बच्चे आलसी बन जायेंगे, प्रत्येक छोटे–बड़े काम के लिए दूसरों पर निर्भर हो जायेंगे। जिस वातारण में बच्चों का लालन–पोषण किया जायेगा उस वातावरण का प्रभाव हमेशा बच्चों पर रहता है। कई माता–पिता बच्चों की हर अच्छी–बुरी बात मानते रहते हैं। इसका परिणाम भविष्य में चलकर बच्चों के लिए ठीक नहीं होता यह बच्चों के लिए ठीक नहीं होगा जिस के कारण बच्चों को मनमानी करने की आदत पड़ जाती हैं। इस प्रकार से बच्चों का भविष्य भी उज्ज्वल नहीं बन पाता। इसलिए बचपन से ही बच्चों में अच्छे संस्कार डालने चाहिए उसी के अनुरूप उनको व्यक्तित्व का विकास होता है।

आधुनिक युग में नगरों एवं महानगरों में माता–पिता बच्चों के साथ मित्रता का व्यवहार बनाये रखते हैं इसमें कोई बुराई प्रतीत नहीं होती परन्तु कुछ मर्यादाओं का पालन माता–पिता व बच्चों के बीच रहना चाहिए जो उनके हित में है, बच्चों के चरित्र निर्माण के लिए आज्ञापालन और अनुशासन आवश्यक हैं। नारी स्वतन्त्रता के साथ आधुनिक युग में परिवार में काफी बदलाव आया है। अतीतकाल में स्त्रियाँ पुरुषों से दबी रहती थी क्योंकि वे अशिक्षित होती थी और कोई काम नहीं करती थी। आज नारी शिक्षित है और पुरुषों की तरह नौकरी करके धन कमाती है इसलिए आज वे पुरुषों से दबी हुई नहीं रहना चाहती, बल्कि पुरुषों के हावी रहती हैं।

पीढ़ियों का अन्तर प्रत्येक युग में रहा है, परन्तु समझदारी इसी में है कि नई व पुरानी पीढ़ी अपने–अपने दृष्टिकोण को सही ढंग से एक–दूसरे के सम्मुख प्रस्तुत करें तथा एक–दूसरे की बातें धैर्यपूर्वक सुने व समझें। इस प्रकार से दोनों पीढ़ियों के बीच की दूरी को समाप्त किया जा सकता है।

आजकल वृद्धों की स्थिति बहुत खराब होती जा रही है। पिता नौकरी पर होता है और बेटा भी अन्य शहर में नौकरी करने के कारण उसी शहर में मकान बना लेता है। जिसके फलस्वरूप माता–पिता से दूर रहने के कारण बेटा–बहू स्वेच्छाधारी बन जाते हैं। वृद्धावस्था में जब पिता सेवानिवृत हो जाता है तो माता–पिता सोचते है कि चलो तमाम जीवन बच्चों के बिना रहे हैं अब वृद्धावस्था में बच्चों के पास जाकर आराम से रहेंगे, परन्तु जब माता–पिता बेटा–बहू के पास आकर रहने लगते है तो बेटा तो माता–पिता की सेवा करके अपने को भाग्यशाली समझता है परन्तु बहू सास–ससुर को स्वीकार नहीं करती, अपनी सास से यहां तक कह देती है कि ये मेरा घर है यहाँ से निकल जाओ। इसके अतिरिक्त पोता–पोती भी दादा–दादी को स्वीकार नहीं करते वे यहां तक कह देते हैं कि आपके आने से पहले हम यहां पर ठीक प्रकार से रह रहे थे आपके आने के उपरान्त सब कुछ गड़बड़ हो गया और अब हम परेशान हैं। इन परिस्थितियों में वृद्धावस्था में माता–पिता जहर के–सा घूंट भरकर रह जाते है क्योंकि उनके पास एक ही बेटा है इन परिस्थितियों में उनके पास और कोई विकल्प नहीं है। आज का वृद्ध घुट–घुट कर अपना जीवन व्यतीत कर रहा है अतः सभी पाठकों को इस समस्या का विकल्प ढूढ़ना चाहिए।

डॉ0 राजनारायण शुक्ला,
सम्पादक

डॉ0 हरिशरण वर्मा,
प्रधान सम्पादक

Created by Universal Document Converter

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ सं.
1.	सामाजिक क्रांति के अग्रदूत महात्मा जोतिबा फुले	**धर्मवीर लाँगयान**	11 - 15
2.	पंकज राग के काव्य-संग्रह 'यह भूमंडल की रात है' में संवेदना और शिल्प	**डॉ0 मोनिका**	16 - 19
3.	गुरु नानक वाणी में निहित मानवीय संदेश	**डॉ० सुमन रानी**	20 - 23
4.	प्रमुख स्मृतियों में राजा के अधिकार व कर्त्तव्य : एक अनुशीलन	**डॉ. सुनीता देवी**	24 - 26
5.	हिन्दी-साहित्य और रामकाव्य परम्परा में तुलसीदास	**लाजवन्ती**	27 - 28
6.	प्रेमचंद की कहानियों में चित्रित किसान शोषण तथा संघर्ष	**डॉद्ग सुमन देवी**	29 - 32
7.	झोलाछाप चिकित्सा 'एक समस्या' एवं समाधान	**महीपाल सिंह**	33 - 34
8.	हिन्दी साहित्य और हरियाणवी कवियों का सम्बन्ध	**लाजवन्ती**	35 - 36
9.	'गीत चतुर्वेदी की कहानियों में सामाजिकता सामाजिक यथार्थ चित्रण	**पुनम रानी**	37 - 42
10.	उपन्यासकार प्रेमचन्द की उपन्यासकला का क्रमिक अध्ययन	**लाजवन्ती**	43 - 44
11.	उत्तर आधुनिकता एवं हिन्दी साहित्य	**डॉ. अंजु देशवाल**	45 - 46
12.	झोलाछाप चिकित्स के कारण एवं परिणाम	**महीपाल सिंह**	47 - 48
13.	मोहन राकेश के नाटक ''आधे अधूरे'' का विवेचन	**लाजवन्ती**	49 - 50
14.	वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारत-चीन सीमा विवाद और	**डॉ० राजेन्द्र सिवाच, डॉ० सतीश कुमार**	51 - 52
15.	राष्ट्रीय संकट से निपटने में सहायक : सरकार तथा जनता का सहयोग	**अन्नु**	53 - 55
16.	भारत में चुनाव सुधार : एक समीक्षा	**डॉ० ममता देवी**	56 - 59
17.	हिन्दी साहित्य और स्त्री विमर्श का सम्बन्ध	**लाजवन्ती**	60 - 61
18.	संगीत एवं नाट्य कला का सामंजस्य	**डॉ. अनिता शर्मा**	62 - 63
19.	दुष्यंत कुमार त 'एककंठ विषपायी' का मिथकीय चिंतन	**डॉ. सरोज जैन**	64 - 66
20.	विशिष्टाद्वैत दर्शन में रामानुजाचार्य अभिमत तत्त्वचिन्तन	**ज्योत्सना**	67 - 69
21.	नरेन्द्रमोदी शासनकाल में भारत-चीन संबंधों में उतार-चढ़ाव	**प्रवीण कुमार**	70 - 72
22.	आर्थिक विकास एवं सांस्कृतिक भू-दृश्यावली का.....	**डॉ0 जिलेदार, डॉ0 विपेन्द्र कुमार अरूण**	73 - 79
23.	हिन्दी कहानी साहित्य में सांस्कृतिक युगबोध	**डॉ० प्रवीण कुमार वर्मा**	80 - 83
24.	चीन की "स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स" की रणनीति और भारत की ...	**डॉ० राजेन्द्र सिंह सिवाच, डॉ० सुगन्धा**	84 - 86
25.	आधुनिकता बोध : एककण्ठ विषपायी-प्रबन्धकाव्य के संदर्भ	**डॉ० प्रवीण कुमार वर्मा**	87 - 88
26.	EFFECT OF THINK-PAIR-SHARE STRATEGY ON.....	**DR. UMENDER MALIK**	89 - 91
27.	'THE THOUSAND FACES OF NIGHT' AND 'FUGITIVE..	**DR. MAMTA SINGHAL, AJAYKUMAR SHARMA**	92 - 95
28.	A COMPARATIVE STUDY OF GENERAL.....	**DR. RAMKISHOR**	96 - 88
29.	PICTURE OF WOMEN ENTREPRENEURSHIP....	**MS GARGI SHARMA**	100 - 104
30.	IMPORTANCE OF ADR (ALTERNATIVE MODES	**DR. VINEET BALA**	105 - 106
31.	REASON AND MOTIVES FOR AMALGAMATION,	**DR. SANTOSH KUMAR SHARMA**	107 - 109
32.	UTOPIAN AND DYSTOPIAN LITERATURE: A.....	**ISH KUMAR**	110 - 113
33.	JOB SATISFACTION AND PERFORMANCE OF.....	**JITENDER KUMAR, DR.DHARMPAL, DR RAMCHANDER**	114 - 116
34.	LADAKH UT: CHALLENGES AND OPPORTUNITIES	**KONCHOK CHHOROL**	117 - 119
35.	ACADEMIC STRESS OF SENIOR SECONDARY....	**JITENDER KUMAR, SEEMA CHANDNA**	120 - 123
36.	ATIRICAL ASPECTS IN THE NOVELS OF.....	**DR. PRABHAT KUMAR SHARMA**	124 - 125
37.	GOODS TRANSPORTATION SERVICES.....	**DHEERAJ PACHNANDA**	126 - 128
38.	A STUDY OF JOB SATISFACTION OF MALE AND..	**DR. UMENDER MALIK, NIDHI MADAN**	129 - 134
39.	ट्रिपल तलाक : एक समीक्षा	**डॉ० हरिशरण वर्मा ममता कुमारी**	135

Created by Universal Document Converter

सामाजिक क्रांति के अग्रदूत महात्मा जोतिबा फुले

धर्मवीर लाँगयान

सारांश : ''महादेव गोविन्द रानाडे के शब्दों में – सच्चा सुधारक कोरे स्लेट पर नहीं लिखता जो वाक्य आधा–अधूरा रह चुका है, उसे बार–बार पूर्ण करते जाना, यही उसका काम होता है। यथार्थ और यथार्थ की सहायता से ही उसे आदर्श निर्माण करना पड़ता है।''[1]

11 अप्रैल 1827 में पुणे के निकट धनखड़ी गावं के निवासी मा. झगडे. की पुत्री चिमणाबाई और गोविन्द के घर माली परिवार में जन्में महात्मा जोतीराव फुले उन्नीसवीं शताब्दी के महान व्यक्तियो में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। वे एक दूरदर्शी सामाजिक चिंतक एवम् क्रांतिकारी समाज सुधारक थे। उन्होंने जीवन भर निम्न जाति, महिलाओं और दलितों के उद्धार के लिए कार्य किया। इस कार्य मे उनकी धर्मपत्नी सावित्रीबाई फुले ने भी पूरा योगदान दिया। ''आधुनिक महाराष्ट्र की सामाजिक क्रांति के अग्रदूत, परम्परागत समाज व्यवस्था के विरूद्ध बगावत करने वाले पहले महापुरूष, हजारों वर्षों से चली आई धार्मिक तानाशाही को चुनौती देकर उसके अंजर–पंजर ढीले कर देने वाले कर्मठ समाज–सुधारक, सच्चे अर्थों में मानवतावादी महात्मा! महात्मा वहीं होता है, जो सभी स्त्री–पुरुषों को समानता, स्वतंत्रता तथा बंधुता का लाभ दिलाने के लिए संघर्ष करता है, जो किसी मनुष्य का द्वेष नहीं करता और जो मानव के प्रति करूणा से भरकर सभी मानवों के समान अधिकारों के लिए जीवनभर लड़ता है। जोतिराव ने समाज की प्रगति में अवरोधक दुष्ट रूढ़ियों को ताडे कर हिन्दू धर्म को विकासोन्मुख किया। जोतिराव ने महाराष्ट्र को धार्मिक गुलामी से मुक्त कर दिया। जोतिराव धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक आदि किसी भी क्षेत्र में गुलामी को रहने देना नहीं चाहते थे और वे जनता को शूद्र धर्मों, पंथों, सम्प्रदायों के संकीर्ण दायरे से निकालकर मानव धर्म के महासागर में ले जाना चाहते थे।''[2]

जोतिबा के जीवन में महत्वपूर्ण मोड़ वर्ष 1848 में आया जब वे अपने एक ब्राह्मण मित्र की शादी में हिस्सा लेने के लिए गए। शादी में दूल्हे के रिश्तेदार ने निम्न जाति का होने के कारण उनका अपमान किया। उनमें से एक ने क्रोध भरे स्वर में जोतिराव से पूछा – ''क्यों रे शूद्र लड़के, तू हमारे साथ कैसे जा रहा है? तेरी यह हिम्मत कैसे हुई? इस पर जोतीराव ने कहा, ''इसमें हिम्मत की बात कहाँ आती है? दूल्हा सखाराम मेरा मित्र है और उसने मुझे विवाह में आमंत्रित किया है।'' जोतीराव का उत्तर सुनकर एक ब्राह्मण ने कहा, ''सखाराम तुझे लाख बुलाए, लेकिन तुझे तो अपनी हैसियत को भूलना नहीं चाहिए। जाति–पाति के सारे बंधन तोड़कर और सामाजिक प्रथा को ताक पर रखकर तू हमारी बराबरी करना चाहता है? यह हमारा और धर्म का घोर अपमान है। चल हट यहाँ से और सबके पीछे हो ले!'' फिर अन्य ब्राह्मणों की ओर देखकर वह बोला, ''अंग्रेजों के शासन के कारण सचमुच ये लोग बेशर्म होने लगे है।''[3] घर पहंचु ने पर पिता ने उदासी व क्रोध का कारण पूछा। पिता ने समझाया स्थापित सामाजिक व्यवस्था का विरोध संभव नहीं है।

वे कहते हैं कि – ''बेटा हम ठहरे नीची जातवाले लोग! हम उनकी बराबरी कैसे कर सकते हैं? इसे सुन जोतीराव गुस्से में उबल पड़े, ''हम नीची जातवाले? किसने बनाया हमें नीच? यह सारा ब्राह्मणों का ढकोसला है। बारात की घोड़ी को छूने से उन्हें छूत नहीं लगती और हमारे छूने से छूत लग जाती है? क्या हम जानवरों से भी गये बीते हैं? इस पर गोविन्दराव ने कहा, ''बटेा, यही हमारे भाग्य में लिखा है। ब्राह्मणों ने तुझे दंड दिये बिना छोड दिया, यह क्या कम उपकार है उनका? पशेवा राज्य में ऐसा होता तो तुझे हाथी के पांवों तले कुचल दिया जाता।''[4]

जोतिबा ने निर्णय लिया कि इस जाति–पाति और धर्म की आड़ में बैठे ब्राह्मणों का एक दिन वे भंडाफाडे. अवश्य करेगें। भारत में पहली सामाजिक क्रांति गौतम बुद्ध और महावीर ने की, दूसरी सामाजिक क्रांति संतों ने तथा तीसरी सामाजिक क्रांति फुले, पेरियार और अछूतानंद हरिहर डॉ० अम्बेडकर के विचारों ने की। समाज सुधारक, दलित चिंतक जोतिराव गोविन्दराव फुले ने भारतीय समाज–व्यवस्था एवम् हिन्दू धर्म की एक सम्यक् समीक्षा प्रस्तुत की, जो भारतीय समाज की वर्ण–व्यवस्था पर आधारित था। उन्होंने इसके दैवी निर्धारण के विचार को चुनौती दी। वर्णव्यवस्था को पूर्णतः नकारा और जाति संस्था को भी नकारा। चातुर्वर्ण्य तथा उसे आधार देने वाले धर्म को भी उन्होंने नकारा और धर्म ग्रंथ भी नकारे। केवल उक्ति से ही नहीं, बल्कि कृति से भी उन्होंने जाति तथा जाति व्यवस्था को नकारा। जाति भेद पर उन्होंने कठोर प्रहार किये। उनका मानना था कि दलित समाज को छलने के लिए ही ये दैवी विधान बनाये गये है। जातिभेद ही यहाँ के सभी अन्यायमूलक विषमता का स्त्रोत है। मनुष्य–मनुष्य में तथा जाति–जाति में उच्च–नीचता का भाव किस कारण निर्माण हुआ? जाति भेद के कारण। 'गुलामगिरी' की प्रस्तावना में वे कहते हैं कि – ''उन ब्राह्मणों ने अपना प्रभाव, अपना वर्चस्व इन लोगों के दिलों–दिमाग पर कायम रखने के लिए, ताकि उनकी स्वार्थपूर्ति होती रहे, कई तरह के हथकंडे अपनाए और वे सभी इसमें कामयाब भी होते रहे। ..... ब्राह्मण पुरोहितों ने इन पर अपना वर्चस्व कायम करने के लिए, इन्हें हमेशा–हमेशा के लिए अपना गुलाम बनाकर रखने के लिए, केवल अपने निजी हितों को ही मद्देनजर रखकर, एक से अधिक बनावटी ग्रंथों की रचना करके कामयाबी हासिल की। उन नकली ग्रंथों में उन्होनें यह दिखाने की पूरी कोशिश की कि उन्हें जो विशेष अधिकार प्राप्त हैं, वे सब उन्हे ईश्वर द्वारा पद्रत्त है। इस तरह का झूठा प्रचार उस समय के अनपढ़ लोगों में किया गया और इस समय के शद्रादि–अतिशूद्रों में मानसिक

Created by Universal Document Converter

गुलामी के बीज बोए गए। उन ग्रंथों में यह भी लिखा गया कि शद्रूों को (बह्म द्वारा) पैदा करने का उद्देश्य बस इतना ही था कि शद्रूों को हमेशा–हमेशा के लिए ब्राह्मण–पुरोहितों की सेवा करने में ही लग रहना चाहिए; और ब्राह्मण–पुरोहितों की मर्जी के खिलाफ कुछ भी नहीं करना चाहिए। मतलब तभी इन्हें ईश्वर प्राप्त होगें और इनका जीवन सार्थक होगा।''[5]

हिन्दू समाज के ह्रास और त्रासदी के महत्वपूर्ण पडाव कौन से है? वर्णव्यवस्था को जन्माधिष्ठित अवस्था प्राप्त होना, उस व्यवस्था में केवल ब्राह्मण एक मात्र उच्चवर्ण रह जाना, इतरों को शूद्रों में समाविष्ट करना और कुछ समूहों पर अस्पृश्यता लाद कर अति शूद्रों का पांचवा वर्ण निर्माण करना, ये हिन्दू समाज की अवनति के तथा त्रासदी के प्रमुख पड़ाव हैं। हिन्दू समाज का इतिहास वास्तव में वर्ण–संघर्ष का इतिहास है। 'व्यक्ति स्वतंत्रता को नकारना' जाति व्यवस्था का महत्वपूर्ण लक्ष्य है।' हिन्दू धर्म ने एक ओर ब्राह्मणों का दैवतीकरण किया तो दूसरी ओर शूद्रातिशूद्र तथा स्त्रियों का अमानवीकरण किया। मनुष्य की एकात्मकता में सामाजिक समता के तत्व में बाधा पैदा करने वाले किसी भी प्रकार के भदे भाव को फुल ने मान्यता नहीं दी। जातिभेद हो, धर्म भेद हो, वांशिक रंगभेद हो अथवा लिंग भेद। इस प्रकार का भेदभाव न्याय तथा बंधुत्व भाव को प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से नकाराते ही रहता है।''[6] समान अधिकार, समान न्याय, समान प्रतिष्ठा, जाति, धर्म, सम्प्रदाय, जन्म, लिंग वंश अथवा राष्ट्रीयत्व के भेदभावों के कारण प्रत्येक का सहज रूप से मिलना संभव नहीं है। इसलिए फुले कहते है कि – ''जब ईश्वर ने ही वर्ण बनाये हैं, तब श्रेष्ठतम वर्ण की, ब्राह्मणों की, श्रेष्ठता भी ईश्वर की ही बनाई हुई है। ऐसी स्थिति में अन्य जातियों के लिए इसे मानना अनिवार्य है। ..... लेकिन मनुष्य का शोषण करने वाली यह जाति–व्यवस्था बनावटी है आरै इसे मनुष्यों ने ही बनाया है। अपने स्वार्थ की पूर्ति हेतु आरै अन्य जातियों के लोगों का शोषण कर मुफ्तखोरी से जीवन–यापन करने के उद्देश्य से संबंधित वर्ग ने यह समाज–व्यवस्था कर रखी है।''[7]

फुले ने ब्राह्मणों द्वारा स्थापित दासता की तुलना दक्षिण अमेरिका और अफ्रीका की दास प्रथा से की और दिखाया कि शूद्रों को अमेरिकी ब्लैक लोगों और अफ्रीकियों की तुलना में बहुत अधिक यातनाएँ झेलनी पड़ी। उनके विचार से स्वार्थगत अंधविश्वास एवम् कट्टरता पर आधारित व्यवस्था ही भारतीय समाज में बाह्य जड़ता और युगों पुराने दुराचार के लिए जिम्मेदार है। माली–शूद्र जाति से सम्बन्धित फुले शूद्रों के लिए नहीं, बल्कि अतिशूद्रो, अछूतों, के लिए भी चिन्तित थे। इसलिए सदियों से दबे–कुचले लोगों को उनके अधिकारों के ज्ञान होने के साथ–साथ वे अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए संघर्षशील बनने में समर्थ हो इसके लिए फुले ने 24 सितम्बर 1873 ई. को महाराष्ट्र राज्य में 'सत्यशोधक समाज' की स्थापना की।

धर्मशास्त्रों के आधार पर समाज में जो विषमता है उसे समाप्त कर इस सामाजिक व्यवस्था में समानता स्थापित कर भारतीय समाज का सही रूप में उत्थान करना सत्यशोधक समाज का प्रमुख उद्देश्य था[8] –

1. ब्राह्मणी शास्त्रों की मानसिक तथा धार्मिक गुलामी से लोगों को मुक्त करना।
2. पुरोहितों द्वारा किये जाने वाले शोषण को रोकना।
3. शिक्षा का प्रचार–प्रसार करना।
4. महिलाओं को शिक्षा देना।
5. अछूतों का उद्धार कर छुआछूत को मिटाना।
6. महिलाओं के मानवाधिकारों की रक्षा करना।
7. दीन–शिशुओं तथा अंधो–ं लूलों के प्रति सहानुभूति रखना।
8. सत्याचरण और सत्य निष्ठा को अपनाना।

महात्मा फुले ने एक हाथ में संत तुकाराम, कबीर का निर्गुण ईश्वरत्व पकड़ा और दूसरे हाथ में शिवाजी महाराज का राजकीय शौर्य का इतिहास लेकर रास्ते पर उतर गये। उन्होंने लोगों को अपने सत्य सोधक समाज के मचं से भारतीय श्रमिक (शूद्रो/अतिशूद्र) लोगों की मुक्ति का बिगुल बजाया।

आधुनिक भारत में समाज–प्रबोधन का जो युग अवतरित हुआ वह ब्रिटिश सत्ता के कारण; इसे स्वीकारना होगा। ब्रिटिश काल में यहाँ जो दी गई शिक्षा और दिया गया ज्ञान उपलब्ध हुआ; वह बुद्धिवाद एवं उदारमतवाद पर आधारित था। महात्मा फुले की विचारधारा प्रखर बुद्धिवाद से और बुनियादी मानवतावाद से निर्मित हुई थी। ब्राह्मण वर्ग ने शोषण के सभी माध्यम हासिल किए थे। ऐसे अमानुष शोषण के विरोध में शूद्रों तथा अतिशूद्रों को शिक्षा के बिना खड़े रहना संभव नहीं था।

जिसका माल उसके हाल बैठी टुकड़खोरों की पांत।
बच्चे ये गैरों के ही पढ़ाते।।
माली कुनबी खेतों में जुतते करते अनाज की भरती।
मिलती नहीं लंगोटी भली भांति।।
छोटे–छोटे बच्चे करते पशुओं की रखवाली।
जूते नहीं पांव की चमड़ी जलती।।
पढ़ने को समय नहीं पिता मन में कुढता।
दोष देखिए नसीब को देता।।
पढ़ाने के बहाने प्रजा को मूर्ख बनाते।
द्विज पंडित को भेजते।।
पटवारी की मदद कुछ बच्चे इकट्ठा करते।
संख्या रपट में लिखते।
महारों के बच्चों को पढ़ाने में अपवित्र मानते।
अंग्रेजों के हाथ में हाथ मिलाते।।[9]

फुले की सामाजिक क्रांति का प्रमुख आधार था शिक्षा। शिक्षा के अभाव के कारण ही समाज गतिहीन, मतिहीन, नीतिहीन और अर्थहीन बना, शिक्षा के बिना बहुजन समाज अपने बुनियादी अधिकारों के लिए शोषकों के विरूद्ध संघर्ष नहीं कर सकेगा। फुले

Created by Universal Document Converter

की धारणा थी कि शिक्षा के आधार पर ही धार्मिक, सामाजिक एवम् आर्थिक सुधार हो सकेगा।

विद्या बिन गई मति, मति बिन गई नीति,
नीति बिन गई गति, गति बिन गया वित्त,
वित्त बिन चरमराये शूद्र,
एक अविद्या ने किये इतने अनर्थ।[10]

1873 ई0 में फुले द्वारा स्थापित सत्यशोधक समाज ने गांव –गांव जाकर शिक्षा का प्रचार किया।

बच्चों को स्कूल में लाने हेतु प्रयास किए। उन्होंने शिक्षा–प्रचार के उद्देश्य से लगभग अठारह पाठशालाएं खोली थी। जिनमें शूद्रातिशूद्र वर्गों के छात्र और महिलाएं शिक्षा प्राप्त कर रही थी। जोतीराव चाहते थे कि शूद्रातिशूद्र वर्गों के लोगों को इस प्रकार शिक्षा दी जाए कि वे अपनी सामाजिक समानता और वैयक्तिक स्वतंत्रता के अधिकारों के लिए लड़ने को तैयार हो जाए और यह तभी हो सकेगा जब शिक्षा के कारण वे समझ सकें कि अच्छा–बुरा क्या है; अपना हित अहित किसमें है।

हिन्दू धर्म में जिन्हें सदियों से शिक्षा से वंचित रखा ऐसे शूद्रादि–अतिशूद्रों की लड़कियों के लिए फुले ने 1848 के अगस्त माह में पूना के बुधवारपठे में भिडे के बाड़े में पाठशाला शुरू की थी। उस समय वे केवल 21 वर्ष के थे। उन्होंने उम्र के 21वें साल में महार–मातंग अतिशूद्रों (अछूतों) की लड़कियों के लिए पाठशाला शुरू कर के समाज में क्रांति की थी। लड़कियों के लिए भारतीय व्यक्ति द्वारा शुरू की गयी यह पहली पाठशाला थी। अपने स्वयं के खर्चे से फुले इस पाठशाला को चलाते थे।

ब्राह्मणेत्तर समाज के फुले द्वारा चलाई जा रही स्त्री पाठशाला को देखकर पुणे के कट्टरपंथियों का खून खौल उठा। महिलाओं को शिक्षा देना उनकी नजर में घोर पाप था। जोतिराव के चरित्र पर कीचड़ उछालने और धर्म के नाम पर लोगों को भड़काते हुए कट्टरपंथियों ने कहा कि – ''महिलाओं को पढ़ाना बड़ा पाप है, वे दुष्ट, चंचल तथा अविचारशील होती है, उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता। यदि महिला को पढ़ाया जाए तो वह कुमार्ग पर चलेगी, घर का सुख चनै धूल में मिला देगी।'' जिस पाठशाला में पुरुष अध्यापक हो उस पाठशाला में लड़कियों को भेजना तो उनकी नजर में भयंकर अपराध था। हिन्दू शास्त्रों के प्रभाव से लोगों की यही धारणा बन गई थी। चारों ओर नारी शिक्षा का विरोध होने लगा। जोतिराव ने लोगों का सामना करते हुए स्पष्ट कहा –

अब तो आप पीछे न हटें धिक्कारें मनु–मत,
शिक्षा पाते ही मिलेगा सुख, जोती की यह बात सुने।[11]

एक ओर उच्चवर्गीय पाठशाला बन्द करवाने पर तुले थे, तो दूसरी ओर समाज द्रोही जोतिबा फुले पाठशाला निरन्तर रखने को कटिबद्ध थे। सावित्री बाई फुले को शिक्षण कार्य का भी प्रशिक्षण दिया गया। कुछ ही समय में सावित्रीबाई फुले शिक्षित हो गई। उनके सामने जोतिबा ने शिक्षक बनने का प्रस्ताव रखा, वे इसके लिए खुशी–खुशी तैयार हो गई। सावित्री बाई फुले आधुनिक भारतीय इतिहास के रंगमंच पर प्रथम भारतीय अध्यापिका के रूप में दृष्टिगोचर होती है।

'तृतीय रतन' नाटक में ब्राह्मणों द्वारा शोषित पुरुष पादरी के द्वारा सदियों से होते आ रहे शोषण की हकीकत को जानकर शिक्षा ग्रहण करने की इच्छा को प्रकट करते हुए अपनी पत्नी से कहता है कि – पुरुष – अरी, आज तू भी अपना भोजना जल्दी कर ले। आज जिस तरह उस दयालु पादरी साहब जी के उपदेशों से, भगवान और धर्म के नाम पर ब्राह्मण पंडित–पुरोहित लागे चालाकी और कपट से हम जैसे सभी अज्ञानी माली कुनबी आदि शूद्र जातियों को किस प्रकार से लूटते है, इसका पर्दाफाश हुआ है। उसी प्रकार हमको आज शिक्षा का महत्व भी समझ में आया है। इसलिए आज हम लोग अपना भोजन जल्दी से समाप्त करके अपने घर के सामने वाले जोतीराव गोविन्दराव फुले के मकान में पढ़ने के लिए जाएंगे। उनकी श्रीमती सावित्री बाई फुले ने सयानी महिलाओं के लिए रात की पाठशाला शुरू की है, उसमें तू आज से जाना शुरू कर दे और जोतीराव फुले की सयाने पुरुषों के लिए रात की पाठशाला में आज से ही जाना शुरु कर देता हूँ। इन दोनों पाठशालाओं में ये दोनों लोग सभी को मुफ्त शिक्षा देते हैं।''[12]

फुले ने बेड़ियों में जकड़ी नारी को शिक्षा जगत में लाकर प्रतिक्रियावादियों को संकेत दिया कि अब हम आधुनिक युग में प्रवेश कर चुके है। प्राचीनकालीन रूढ़िगत सारी बातें अब व्यावहारिक नहीं है। सावित्री बाई जब पाठशाला जाती तो धर्म और संस्कृति के ठेकेदार कट्टरपंथी और उनके पिट्ठू ताने कसते, गालियां देते, उन पर कीचड़ और गोबर फेंकते, पत्थर भी बरसाते किन्तु सावित्रीबाई को उसके लक्ष्य से न झुका सके।

जोतिबा फुले के अनथक प्रयास व अद्भुत प्रयोग की प्रशंसा करते हुए मुंबई के तत्कालीन राजनीतिक ऋषि मामा परमानंद ने लिखा है – ''एक मराठा व्यक्ति ने अपनी पत्नी को पढ़ा–लिखाकर उससे ब्राह्मण की लड़कियों को पढ़ाने–लिखाने का प्रयास उनके गढ़ में जाकर किया।

यह अपूर्व साहस का कार्य था लेकिन उनके गढ़ में रहकर अछूतों के लिए पाठशालाएं खोलना और उन्हें समाज के संगटक बनाना शेर की मांद में घुसकर उसकी अयाल उखाड़ने जैसा कार्य है।''[13]

जब ईसाई मिशनरीज के स्कूल पूना में सफल नहीं हो रहे थे, ऐसे में जोतिबा की पाठशाला बिना किसी सरकारी सहायता के सफलतापूर्वक कार्य कर रही थी। यह मिशनरीज और ब्राह्मणों के लिए बड़े आश्चर्य की बात थी। समाचार पत्र पूना आब्जर्वर के अनुसार – ''जोतिबा की पाठशालाओं में पढ़ने वाले छात्रों की संख्या सरकारी पाठशालाओं की छात्र संख्या से दस गुनी अधिक थी। इसका मुख्य कारण है सरकारी पाठशालाओं की तुलना में जोतिबा की पाठशालाओं की अध्यापन प्रणाली श्रेष्ठ है।''[14]

Created by Universal Document Converter

जोतिबा व उनकी पत्नी सावित्री बाई के त्याग और परिश्रम के कारण बालिकाओं का भविष्य सुधर रहा था। 'तृतीय रत्न' नाटक में 'शिक्षा की अलख जगाते हुए विदूषक जोशी (ज्योतिषी) से कहता है कि – 'ब्राह्मणों ने शूद्र अतिशूद्र जातियों पर जो शिक्षाबंदी लगाई थी, उसको समाप्त करके उनको शिक्षा का मौका प्रदान करके, होशियार बनाने के लिए भगवान ने इस देश में अंग्रेजों को भेजा है। शूद्र–अतिशूद्र पढ़कर पेशवा ही से भी सौ गुना अंग्रेजी राज को पसंद करेगें। लेकिन आगे यदि मुगलों की तरह अंग्रेज लागे इस देश की प्रजा का उत्पीड़न करेगें तो शिक्षा पाकर होशियार हुए शूद्र–अतिशूद्र लोग पहले के जमाने में हुए जवांमर्द शिवाजी की तरह अपने शूद्रादि–अतिशूद्रों के राज की स्थापना करेगें और अमेरिका के लोगों की तरह अपनी सत्ता खुद चलाएंगे। लेकिन ब्राह्मण पंडों की वह दुष्ट और भ्रष्ट पेशवाही को अब आगे इस देश में कभी भी आने नहीं देगें, यह बात जोशीपंडों को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए; और सच बात तो यह है कि जिस ईश्वर का साक्षात्कार इन ब्राह्मण पंडों को नहीं हुआ, उसका वे शूद्रों को कहाँ से करवाएंगे?''[15]

महात्मा फुले ने शिक्षा के प्रसार के कार्य पर बहुत बल दिया था। उन्होनें तत्कालीन अंग्रेज सरकार से मांग की कि शूद्रतिशूद्र को नौकरियों में हिस्सा मिले। वे कहते हैं कि – ''इस कारण शूद्र किसान के बेटे सरकारी प्रशासन में काम करने योग्य तैयार होने तक ब्राह्मणों को उनकी जाति की संख्या से अधिक सरकारी नौकरियां नहीं दी जानी चाहिए।''[16] इस प्रकार फुले ने सामाजिक न्याय के लिए प्रयत्न किया।

फुले ने जात–पात एवं स्त्रियों की स्थिति के विरूद्ध कड़ा संघर्ष किया। अछूतों के लिए कुएं और तालाबों से पानी भरने पर लगे प्रतिबन्धों को उन्होंने खुद ही पानी भरकर तोड़ा। उन्हें हिम्मत और साहस दिया। बाल–विवाह, सती–प्रथा, कन्या–हत्या आदि के विरोध में फुले ने अनेक आन्दाले न चलाये और उन्हें दूर करने की कोशिश की। महिलाओं की दशा अत्यनत सोचनीय थी। पति के मर जाने पर पति के साथ सती होना पड़ता था। इन्कार करने पर उसे जबरदस्ती चिता में धकेला जाता था। उसके आभूषण और ब्याह के समय पहने हुए सुहाग के सारे अलंकार, जोड़ा आदि वहाँ उपस्थित हुए ब्राह्मण को दान दिये जाते। यदि इस तरह दान नहीं दिया गया तो वह सती स्वर्ग नहीं जाएगी। पुरुषों के लिए ऐसा कोई बंधन नहीं था। 'सार्वजनिक सत्यधर्म पुस्तक' में जोतिबा कहते है कि – ''जिस समय किसी नारी का पति मर जाता है उस समय वह बहुत दुखी होती है। आगे उसको भारी कठिनाइयां बर्दाश्त करनी पड़ती है। मरते दम तक सारा समय रंडापे में गुजारना पड़ता है। इतना ही नहीं पहले के जमाने में कई औरतें सती भी हो जाती थी। लेकिन यदि स्त्री मर जाए तो उसका पति उसके मर जाने के दुख से दुखी होकर वह भी 'सत्ता' हो गया हो, क्या इस तरह का एक ही उदाहरण मिल सकेगा? वह चाहे जितनी शादियां कर सकता है, लेकिन औरतों के बारे में ऐसा नहीं है।''[17]

अतः कहा जा सकता है कि जोतिबा ने ईमानदारी और निष्ठा से स्त्री और दलितों की लड़ाई लड़ी, उन्हें सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक गुलामी से मुक्त कराने का प्रयास किया और बहतु हद तक उसमें सफलता भी पायी। नारी शिक्षा, नारी स्वतंत्रता, नारी जागृति के साथ–साथ विधवा–विवाह की समस्या का भी समाधान किया। जोतिबा ने विधवा मुंडन को बंद कराकर विधवा–विवाह के पक्ष में प्रचार किया तथा विधवाओं के अवैध बच्चों के लिए बालहत्या प्रतिबंधक गृह खोला। सन् 1956 में अंग्रेजी शासन ने भारत में विधवा–विवाह का कानून बनाया तथा विधवा को पुनर्विवाह का अधिकार दिया। बहू–विवाह के विरूद्ध जोतिबा ने आवाज उठाई। महात्मा फुले जीवन पर्यन्त लड़ते रहे मनुष्य के संघटित स्वार्थ के विरूद्ध। वे सही अर्थों में सत्यशोधक, सत्यसमर्थक तथा सत्याग्रही थे। महर्षि विट्ठल राम जी शिंदे ने महात्मा की प्रशंसा करते हुए कहा है कि –

सत्य का पालनकर्त्ता
यह धन्य जोतिबा हुआ
पतितों का पालन वाला
यह धन्य महात्मा हुआ।।

जोतिबा ने अनेक सामाजिक प्रश्नों को अपने हाथों में लिया। ज्ञान पर बंधन, व्यवसाय पर बंधन, रोटी पर बंधन, बेटी व्यवहार पर बंधन ऐसे चार बंधनों की बेड़ियों में भारतीय समाज जकड़ा हुआ था इन बेड़ियों को ताडे ने के लिए फुले ने शूद्र–अतिशूद्रों का आवाहन किया। पाखडं पूर्ण धर्म का विरोध किया।

निष्कर्ष : डॉ० रामकुमार अहिरवार के शब्दों में – ''गरीब माली परिवार में जन्में फुले जी ने अपना समस्त जीवन शूद्र और अतिशूद्र जातियों के मन में स्वाभिमान और आत्म गौरव की भावना को जगाने के लिए ही बिताया। वे किसान, मजदूरों, महिलाओं और तमाम पिछड़े–दलित लोगों के मानवीय अधिकारों को दिलाने के लिए हमेशा संघर्षशील रहे। उनका संघर्ष अंधकार ग्रस्त सामाजिक मानवता के लिए अविच्छिन्न आलाके स्त्रोत बन गया। उन्होनें सुख एवम् शांति के आधारभूत सिद्धान्त, सत्य तथा सामाजिक समानता के जीवन के समग्र पक्षों में चरित्रार्थ करके विश्व के समक्ष मानव कल्याण की राह दिखाई।''[18]

संदर्भ –

1. डॉ० जनार्दन बाघमरे, दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि, पृ0 3
2. श्री मुरलीधर जगताप, युगपुरुष महात्मा फुले, महात्मा फुले चरित्र साधने प्रकाशन समिती, महाराष्ट्र शासन मंत्रालय, मुबंई, पृ0 1
3. वहीं, पृ0 30–31
4. वहीं, पृ0 31
5. सं० डॉ० एल.जी. मेश्राम (अनुवादक), महात्मा जोतिबा फुले रचनावली (खण्ड–1), राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 136

Created by Universal Document Converter

6. डॉ० जनार्दन बाघमरे, दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि, शिवालिक प्रकाशन, (अनु. डॉ सूर्यनारायण रणसुभे), दिल्ली, पृ0 124
7. श्री मुरलीधर जगताप, युगपुरुष महात्मा फुले, पृ0 32
8. वहीं, पृ0 84
9. महात्मा जोतिबा फुले रचनावली खण्ड–1, पृ0 89
10. मुरलीधर जगताप, युगपुरूष महात्मा फुले, पृ0 133
11. वहीं, पृ0 37
12. महात्मा जोतिबा फुले रचनावली खण्ड–1, पृ0 49
13. युगपुरुष महात्मा फुले, पृ0 45
14. वहीं
15. महात्मा जोतिबा फुले रचनावली खण्ड–1, पृ0 47
16. डॉ० जनार्दन बाघमरे, दलित साहित्य की वैचारिक पृष्ठभूमि, पृ0 137
17. महात्मा जोतिबा फुले रचनावली खण्ड–2, पृ0 107
18. डॉ० हेमलता आचार्य, भारत की सामाजिक क्रांति के पथ प्रदर्शक जोतिबा फुले, पृ0 9

धर्मवीर लाँगयान (शोधार्थी)
हिन्दी – विभाग
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय,
रोहतक

लघुकथा

असली अपराधी

डॉ. प्रकाश कुमार अग्रवाल

सोनू धड़धड़ाते हुए त्वरित गति से अपनी नई बाइक से कॉलेज पहुंचा।कॉलेज परिसर में उसकी मुलाकात सुदर्शन से हुई जो साइकिल से कॉलेज आया हुआ था और उसे स्टैण्ड में लगा रहा था।सुदर्शन और सोनू दोनों बी.ए. द्वितीय वर्ष के विद्यार्थी थे। जहां एक ओर सुदर्शन पढ़ाई–लिखाई में अव्वल था तो वहीं सोनू को पढ़ने–लिखने में कोई दिलचस्पी नहीं थी।मां–बाप की इकलौती संतान होने के कारण वह बड़े लाड़–प्यार से पला था और एक अजीब–सी फूहड़ता का शिकार हो गया था। व्यसनी तो था ही, बदतमीज और जिद्दी भी हो गया था।कक्षा में शिक्षकों के साथ मुँहजोरी तो आम बात थी। कई बार शराब पीकर भी कॉलेज आ चुका था।उसके जितने भी दोस्त थे, सब– के– सब इसी मानसिकता के शिकार थे। घर पर उसके मां–बाप को उसकी हर करतूतों की खबर मिल जाती थी। लेकिन वे उसे कुछ कहते नहीं थे बल्कि उसकी जायज–नाजायज हर मांगों के सामने झुक जाते थे।'जो कुछ है इसी का तो है' की दलील के आगे कोई उन्हें कुछ न कहता था।सोनू ने सुदर्शन से कहा 'देख मेरी नयी बाइक, चलेगा घूमने'?, नहीं भाई! अभी क्लास करना है कहकर सुदर्शन क्लास करने चला गया। क्लास समाप्त करने के बाद जब वह घर जा रहा होता है तो देखता है कि रास्ते मेंभारी भीड़ जमा है। वह भीड़ के बीच पहुंचकर देखता है कि एक ठेलेवाला खून से लथपथ मरा पड़ा है और सोनू को भी गंभीर चोटें आईं हैं। सोनू ने उस ठेलेवाले को टक्कर मार दी थी जिससे उसकी मौत हो गई थी। उसी समय पुलिस के साथ–साथ एम्बुलेंस भी आ गई और दोनों को अस्पताल ले गई। सुदर्शन ने सोनू के मां–बाप को इस घटना की सूचना दी। सोनू पर मुकदमा चला और उसे सात सालकी सजा मिली। सोनू के मां– बाप सजा सुनाए जाने के दौरान फूट– फूटकर रो रहे थे और सुदर्शन अदालत में बैठा असली अपराधियोंको निहार रहा था।

डॉ. प्रकाश कुमार अग्रवाल
प्राध्यापक, हिंदी–विभाग,
खड़गपुर कॉलेज,खड़गपुर–721305,प.बं
मो.9932937094

Created by Universal Document Converter

डॉ० मोनिका

पंकज राग के काव्य–संग्रह 'यह भूमंडल की रात है' में संवेदना और शिल्प

सारांश : 'संवेदना' का शाब्दिक अर्थ है –''मन में होने वाला बोध या अनुभव'' ।[1] साधारणतः संवेदना शब्द का प्रयोग सहानुभूति के अर्थ में होता है। मूलतः वेदना या संवेदना का अर्थ ज्ञान या ज्ञानेन्द्रियों का अनुभव है। मनोविज्ञान में भी इसका यही अर्थ ग्रहण किया जाता है। उसके अनुसार संवेदना हमारे मन की चेतना की वह कूटस्थ अवस्था है, जिसमें हमें विश्व की वस्तु विशेष का बोध न होकर, उसके गुणों का बोध होता है।

यद्यपि सामान्यतः अंग्रेजी में इसे 'सिम्पैथी' या 'फेलो फीलिंग' कह सकते हैं किन्तु मनोविज्ञान में सेंसेशन के रूप में ही इसका विशिष्ट प्रयोग होता है।[2]

पंकज राग की कविताएँ भी सदैव विचारों व संवेदनाओं से संश्लिष्ट रही हैं। उनके काव्य के विविध आयामों का आकलन हम इस प्रकार कर सकते हैं।

पंकज राग के काव्य–संग्रह 'यह भूमंडल की रात है' में सौन्दर्यानुभूति भारतीय संस्कृति की छत्रछाया में पल्लवित हुई है। इस प्रकार प्रकृति के साथ कवि का अटूट संबंध रहा है। 'कहानी' कविता में कवि मानव की प्रकृति के प्रति उपेक्षा तथा उसके सौंदर्यमय रूप को दर्शाना चाहता है और कहता है कि आज मानव प्रकृति के सौंदर्य की ओर कोई ध्यान नहीं दे रहा है बल्कि उसे सदा से ही हानि पहुँचाता आया है। इसलिए मानव का ध्यान प्रकृति की ओर आकर्षित करने के लिए कवि कहता है–

वह नक्षत्रों की आहट थी
पर उससे एक भी किस्सा नहीं बनाया मैंने
चिड़ियों ने चहचहाना तक बंद नहीं किया
मैं चौका नहीं
पूर्वजों के लगाए तुलसी के पौधे की गंध भी धूमिल नहीं हुई

जब कुछ भी अजीब न हुआ
तो उसने मुझे टोका
और बताया कि वह काफी देर से आ चुकी है
और हमें चाहिए कि उस पर ध्यान दें।[3]

'फूटने दो रंग' शीर्षक कविता में कवि प्रकृति को सदा सुंदर बने रहने की प्रार्थना करता है। वह चाहता है कि मनुष्य उसे कोई हानि न पहुँचाए। वह कालजयी रहे तथा प्रकृति रूपी पेड़–पौधो, जीव–जन्तुओं को कोई कष्ट न पहुँचे–

तुम भरी पूरी रहो, न रहो,
पर सलामत रहो
पराकाष्ठा या चरम पर भी न पहुँचो
पर निरन्तर रहो,
कालजयी नहीं, आत्मजयी बनो
ऐसे ही हिलोरती रहो पर छिटको नहीं।[4]

'दोपहर' शीर्षक कविता में कवि ने नारी के नख–शिख का वर्णन शीतकालीन कवियों की तरह ही नहीं किया बल्कि उन्होंने एक अंधेड औरत की बेबसी और रहन–सहन में भी सौन्दर्य के विभिन्न उपमानों की तलाश कर ली है। इसके अतिरिक्त कवि वृद्धावस्था की बेबसी तथा अेकेलेपन एवं उसकी प्रतिक्रियाओं में भी सौंदर्य को ढूंढने का प्रयास करता हुआ कहता है कि–

वह औरत बिना हाथों को हिलाए बोलती थी
उसके बदन पर कोई धागा था न ताबीज
उसके हिलते होठों के साथ समय चलता था
बोलते हुए भी उसकी परेशानी साफ रहती थी, पीठ सीधी
उसकी आंखों में पानी नहीं था
वह मुस्कुराती भी नहीं थी
शायद उसका कोई नहीं था
पर वह इतनी पूरी थी
कि मुझे लगता जैसे पूरी दोपहर उसी की हो।[5]

'प्रेम' नामक कविता में कवि प्रेम की बुनियादी आवश्यकता महसूस करता है। उसकी प्रेमानुभूति आशा एवं उत्साह से परिपूर्ण है। वह अपनी प्रेमिका से बिछुड़ना नहीं चाहता बल्कि उसकी आत्मा को भी अपनी आत्मा में ही मिला लेना चाहता है। इसीलिए संयोग श्रृंगार का वर्णन करते हुए कवि कहता है–

यूं तुम्हारे शरीर को संयोजित कर
मैंने तुम्हारी आत्मा को अपनी आत्मा में मिला लिया,
हम प्रेम करने लगे।[6]

कवि केवल प्रेमिका से ही प्रेम की आशंका नहीं करता बल्कि वह अपने पिता से भी प्रेम पाना चाहता है। 'पापा, फुग्गा दो' शीर्षक कविता में कवि प्रेम एवं सेवा के माध्यम से अपने पिता के मुख पर हर खुशी देखना चाहता है तथा उनके जीवन में आशाओं एवं उम्मीदों का प्रकाश फैलाना चाहता है–

पापा, फुग्गा दो
मेरा फुग्गा अभी भी है तिरंगा
पापा, थोड़ी हवा भी दो
पापा, एक छत दो
पापा, अपना हाथ दो
पापा, अब उड़ाओ
पापा, अब हंसाओ
पापा, अब तुम भी हंसो।[7]

Created by Universal Document Converter

'पत्नी' शीर्षक कविता में कवि अपनी पत्नी से बहुत प्रेम करता है तथा उसकी दिनचर्या की प्रशंसा करते हुए कहता है कि मेरी पत्नी इतनी कर्मठ है कि वह सारा दिन कार्य करके भी अपने चेहरे की सौंदर्यमय कांति को नहीं खोती–

वह हर खबर से पहले गलत होती जा रही है
वह हर दबी राख को कुरेदती जा रही है
वह थोड़ा कुछ खोज रही है, वह बहुत कुछ बीन रही है
वह मशमूल कर रही है, वह मंजूर हो रही है
वह हर दिन बटोरती जा रही है, वह रात टटोलती जा रही है
वह मेरी पत्नी है।[9]

पंकज राग की दृष्टि सामाजिक यथार्थ की टकराहटों को देखती और सुनती रही है। यही कारण है कि उन्होंने मानव को वर्तमान जीवन की कठिनाईयों एवं उनका सामना करने का संदेश दिया है जिससे कवि का दार्शनिक चिन्तन उभरकर हमारे सामने आया है।

'अभी वक्त है' शीर्षक कविता में कवि आज के जीवन की तथा वृद्धावस्था के यथार्थ को उजागर करता हुआ कहता है कि माता–पिता बच्चों से यही उम्मीद करते हैं कि वे बुढ़ापे में हमें सहारा देगें किन्तु बाद में उनकी सारी आशाएँ धूमिल हो जाती हैं जैसे–

अभी वक्त है उस रात के आने में
जब मेरे बच्चे इन मिथकों की खिड़कियाँ खोलेंगे
वह एक व्यस्क रात होगी
और मैं अगली सुबह बूढ़ा होकर उठूंगा
पर अभी वक्त है
अभी तो मैं जवान हूँ
और मेरे बच्चे भींगे–भींगे से हैं।[9]

'जो हुआ वह भयावह था' शीर्षक कविता में कवि तकनीकीकरण की भयावह सच्चाई को उजागर करता हुआ तथा साधारण जन की प्रतिष्ठा पर कटाक्ष करता हुआ कहता है कि हे साधारण जन! तुमने मशीनी युग में आज सब पा लिया है किन्तु कहीं न कहीं मानवीय मूल्यों व भावनाओं से तुम दूर चले गए हो–

जो हुआ वह भयावह था

गति ही गति
पर एक विराट स्थितप्रज्ञता
गुब्बारे की तरह फूलता शून्य
शून्य की हवाई हलचल
अदृश्य वाचालता
अंतर्राष्ट्रीय शोर
नए मापक, यंत्रचालित तराजू
डोलते हाथ, थिरकते पैर
खाली मस्तिष्क रीतते विचार
इस तरह हम पहुँचे इक्कीसवीं सदी में
आगे की कहानी बताने की जरूरत नहीं
आप कभी भी डाउनलोड कर सकते हैं।[10]

'कहानियों के अंत' शीर्षक कविता में कवि वर्तमान जीवन शैली को अपनाने वाले माता–पिता को सचेत करते हुए कहता है कि उन्हें अपने बच्चों को बुराई पर अच्छाई की विजय पाने की कहानियों को सुनाना बंद कर देना चाहिए क्योंकि आज के बच्चों में पाश्चात्य संस्कृति के कारण जो बदलाव आ रहा है उसका कारण स्वयं वे ही हैं। आज माता–पिता बच्चों को पैसा तो देते हैं किन्तु अच्छे संस्कार देने के लिए उनके पास समय नहीं है–

एक परोपकारी राजा था,
एक करूणामयी रानी थी,
एक दुष्ट राक्षस था....
ऐसी कहानियों के अंत बदल देने चाहिए
बच्चे बड़े हो रहे हैं।[11]

'सम्पूर्ण साक्षरता' शीर्षक कविता में कवि समाज को पूर्ण रूप से साक्षर देखना चाहता है ताकि सभी व्यक्ति साक्षर होकर एक उन्नत समाज की स्थापना कर सकें–

मनसुखवा के हाथ में पकड़ाकर अपना चौक
उससे अपने बोले हुए शब्द लिखवाना
लिखवा कर पढ़वाना
पढ़वा कर सुनवाना
नुमाइश को देखकर
साहब का रीझ रीझ जाना
मनसुखवा का रीत रीत जाना
यही सम्पूर्ण साक्षरता है[12]

'गौरव–यात्रा' शीर्षक कविता में कवि समाज में फैली भिक्षावृत्ति और महंगाई का कारण बाजारवाद को मानता है और कहता है कि–

मंगना असहिष्णुता है, पूर्व जन्मों के फल का अनादर है
किसी को लोक बनाने से रोकना उचित नहीं परलोक बिगड़ जाएगा।
वैसे हमारा बाजार मजबूत होता ही जा रहा है
कितनी ही चीजें सस्ती होती जा रही हैं

हमारे यहाँ थाई फूड आ चुका है
सिलिकॉन वैली ने अपनी भंगिमाएँ भेज दी हैं
हमारी सड़कों पर ऐलेन सौली के रंग छा रहे हैं
हम माइक्रोचिप पर बहस कर रहे हैं।[13]

'सूचित तो होना ही पड़ेगा' नामक कविता में कवि मानव द्वारा बनाए गए सूचनाओं एवं संचार के यंत्रों की महत्ता तथा उनकी भयावहता का वर्णन करते हुए कहता है कि आज यंत्रों के कारण व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति के साथ समय व्यतीत करने का समय नहीं रह गया है–

बदल जाएगी दुनिया जब मिल जाएगा सूचना का अधिकार
सूचनाएँ गले मिला करेंगी चौराहों पर
सूचनाएँ बना करेंगी पिछवाड़ों में

Created by Universal Document Converter

इश्तहारों में ब्रांड नेम के साथ बिकेगी सूचना
सूचनाएँ यूजर फ्रेंडली होंगी, कोलेस्ट्राल से मुक्त होंगी
बड़े टी.वी. के चौंतीस चैनलों पर विज्ञापित होंगी।
तो सूचनाएँ खरीदनी ही होंगी।[14]

'दिल्ली : शहर दर शहर' शीर्षक कविता में कवि दिल्ली जैसे संवेदनहीन शहरों पर कटाक्ष करता है, जहाँ के लोग अपराध होते चुपचाप देखते रहते हैं तथा समस्याओं से पीछे हटकर अपनी जिम्मेदारियों से दूर भागना चाहते हैं–

सीरी फोर्ट ऑडिटोरियम में अंतर्राष्ट्रीय फिल्म समारोह चल रहा था और वहीं बाहर की कार पार्किंग में एक स्विस महिला के साथ बलात्कार भीड़ अंदर थी, बाहर सन्नाटा था और वैसे भी दिल्ली की भीड़ ऐसे मौकों पर अगल ही पाई जाती है।[15]

'बड़े साहब' शीर्षक कविता में कवि सामाजिक न्यायालयों में फैले भ्रष्टाचार पर कटाक्ष करता है और कहता है कि आज के न्यायाधीश पैसों के लिए सच्चाई का साथ नहीं देते बल्कि अपराधी की ही मदद करते हैं–

वे बड़े साहब हैं
छोटे से बड़े सवाल करते हैं
छोटे जवाबों से संतुष्ट नहीं होते
बड़े उत्तर से चिढ़ जाते हैं
हर सुबह
हवाओं में लकीरें खींचकर
जवाबों के पलड़े बनाते हैं
हर शाम
हवा से फूलकर
सवालों को भूलकर
झुके हुए पलड़े से हाथ मिलाते हैं।[16]

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि पंकज राग की संवेदनशील दृष्टि समाज तथा वर्तमान में फैली अमानुषिकता, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, स्त्रियों पर होने वाले अत्याचार एवं बलात्कार जैसी समाज विरोधी विकृतियों की ओर गई है।

पंकज राग इन सूक्ष्म संवेदनाओं की अभिव्यक्ति करने के साथ–साथ कुशल शैल्पिक हस्ताक्षर भी हैं–

अभिनव भाषा प्रयोग, परंपरागत एवं मौलिक प्रतीकों की योजना, सुन्दर बिम्ब–विधान, सघन अलंकृति और भाषानुकूल लयात्मकता कवि पंकज राग के शैल्पिक संसार की ऐसी विशेषताएँ हैं जो उन्हें वर्तमान कवियों में विशिष्ट बनाते हैं। इसी विशिष्टता का साक्षात्कार हमें उनके प्रस्तुत काव्य–संग्रह में मिलता है।

उनके काव्य–संग्रह में हिन्दी, अंग्रेजी, उर्दू, तत्सम व तद्भव आदि शब्दों की बहुलता देखने को मिलती है–

जब–जब यह रात बरसती है
तारे टपकते हैं
कीमती पोशाकों पर लगे सेक्विन की तरह
जमीन के ऊपर ही ऊपर
पूरे कमरे को आच्छादित करते हुए
चमचमाते चिकने चेहरों के आदमी
ऑ द' वूर कुतरती औरते
यह मलाहत का उजला नजारा है
यहीं मुफलिसी को दरकिनार करती विकास की बढ़ी दर भी है।[17]

यहाँ पर 'बरसना' तद्भव, 'आच्छादित' तत्सम, 'नजारा', 'मुफलिसी' उर्दू तथा 'ऑ द' वूर' अंग्रेजी आदि के शब्दों का प्रयोग किया गया है जो कवि की भाषा–प्रियता को स्पष्ट करता है।

प्रस्तुत काव्य–संग्रह में कवि ने विभिन्न प्राकृतिक, सांस्कृतिक एवं नए (मौलिक) प्रतीकों का प्रयोग किया है जैसे निम्न पंक्तियों में कवि ने प्रकृति को विश्वचेतना और सृष्टि का प्रतीक माना है जिसमें वह हर रंग भरकर विश्व में शांति एवं एकता को कायम करना चाहता है।

उगने दो गेंहू की बालियों को
फैलने दो वटवृक्ष, फुल, पौधे, बांस
फूटने दो रंग, चटकने दो गंध
होने दो सब गाढ़ा–गाढ़ा,
तुम यूं ही मद्धम रहो।[18]

प्राकृतिक प्रतीकों के अलावा कवि ने कुछ नए प्रतीक भी अपनाए हैं जो कवि के अपने हैं और मौलिक भी हैं। कवि बादल को संकट का तथा आदमी को संघर्षशील व्यक्ति का प्रतीक मानता हुआ कहता है–

आकाश की परछाईयों से भरे रणक्षेत्र में
जमीन की कोई परिभाषा नहीं बन पाती है
और यूं भी बादलों के मौसम में
बहुत अनमना होता है आदमी[19]

'विमुक्त' शीर्षक कविता में कवि आदमी को विभिन्न समस्याओं का प्रतीक मानता है और कहता है–

आदमी समस्याहीन नहीं मरता
जो विमुक्त मरते हैं
शायद वे आदमी नहीं होते।[20]

पंकज राग सांस्कृतिक चेतना के कवि हैं। उनके काव्य का व्यापक परिपार्श्व भारतीय संस्कृति एवं पौराणिकता से जुड़ा हुआ है। उन्होंने शिव को ईश्वर का तथा सृष्टि के संहारकर्त्ता का प्रतीक माना है और नश्वर शब्द को विनाश का प्रतीक माना है–

मैंने गर्दन में सांप लटकाए शिव के कई
प्रतिरूप भी देख लिए हैं
मैं उनकी तीसरी आंख से डरने भी लगा हूँ
मैं चबाने भी लगा हूँ, निगलना भी सीख गया हूँ
मैं यह भी जानने लगा हूँ कि सब कुछ नश्वर है।[21]

Created by Universal Document Converter

'मत फाड़ो' शीर्षक कविता में कवि पुरानी इमारत को प्राचीन संस्कृति का और पाश्चात्य संस्कृति को बुराई का प्रतीक मानता है–

शहर की बदरंग हो चुकी दीवारों के बीच
महफूज है एक पुरानी इमारत–एक कोना सम्हाले
तारीख के उस मजबूत हिस्से को
इश्तहार की तरह
मत फाड़ो
मेरे सरमायादारो।[2]

प्रस्तुत काव्य–संग्रह में कवि ने शब्दों के माध्यम से विभिन्न बिम्ब भी सृजित किए हैं।

दृश्य बिम्ब का उदाहरण देता हुआ कवि कहता है–

वह जो छा रहा है
वह नींदो का आकाश है।[3]

प्रस्तुत काव्य–संग्रह में कवि फूलों व चन्दन की महक चारों दिशाओं में महसूस कर रहा है। इसलिए घ्राण–बिम्ब की भी काव्य में उद्भावना हुई है जैसे–

यह फूलों का बोझ है
या उनकी महक
या मात्र दिशाएँ बदल–बदल कर महक रहा चन्दन।[4]

कवि हर क्षण समय की महत्ता एवं उसकी शक्ति को बारिश के तांडव में सूनता है। इसलिए श्राव्य–बिम्ब को दर्शाता हुआ कवि कहता है–

समय मेरे छत पर है
हर रोज सूनता हूँ मैं बारिश का तांडव
दहलता भी हूँ कि समय कहीं मेरे ऊपर पूरा न गिर जाए।[5]

बिम्बों के अतिरिक्त कवि ने अलंकारों से भी अपने काव्य–संग्रह को सुसज्जित किया है। उनके काव्य–संग्रह में उपमा, पुनरूक्ति, अनुप्रास आदि अलंकार जैसे स्वतः ही आए हुए हैं। उपमा और पुनरूक्ति प्रकाश अलंकार की उद्भावना निम्न पंक्तियों में देखी जा सकती है–

वह मेरी पत्नी है
वह छुपी–छुपी सी कुछ जमा रही है,
वह उड़ी–उड़ी सी कुछ गंवा रही है।[6]

यहाँ पर छुपी–छुपी और उड़ी–उड़ी शब्दों में पुनरूक्ति प्रकाश अलंकार है तथा सी शब्द की व्यंजना होने के कारण उपमा अलंकार है, जो सर्वथा अनूठापन और कौतूहल भी पैदा कर देते हैं।

कवि को रूपक अलंकार विशेष रूप से प्रिय है जैसे–

समय छोटा नहीं है, समय दीर्घ है

लेकिन हमने उसे उड़ा दिया
बुलबुल की तरह
या बुलबुले की तरह[7]

यहाँ पर कवि के कहने का तात्पर्य है कि हे मानव! समय बहुत बड़ा है लेकिन तू उसका सदुपयोग नहीं करता और उसे बुलबुले की तरह उड़ा देता है। समय रूपी बुलबुल या बुलबुले के कारण यहाँ पर रूपक अलंकार की तथा समय और बुलबुल शब्दों की बार–बार आवृत्ति होने के कारण अनुप्रास अलंकार की आवृत्ति हुई है।

निष्कर्ष में हम कह सकते हैं कि पंकज राग दृष्टि सम्पन्न कवि हैं। उनकी कविताएँ संवेदना और शिल्प के माध्यम से अपने मूल्यों का प्रचार–प्रसार करती दिखाई देती हैं और हमारे जीवन के इतिहास से जुड़ी ये कविताएँ हमारे साथ रस लेकर बतियाती हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. विशाल शब्द सागर, नवल जी, पृ0 1385
2. हिन्दी साहित्य कोश, भाग–1, पारिभाषिक शब्दावली, पृ0 863
3. पंकज राग, यह भूमंडल की रात है, पृ0 11
4. वही, पृ0 99
5. वही, पृ0 41
6. वही, पृ0 58
7. वही, पृ0 65
8. वही, पृ0 69
9. वही, पृ0 84
10. वही, पृ0 11
11. वही, पृ0 74
12. वही, पृ0 61
13. वही, पृ0 104
14. वही, पृ0 75
15. वही, पृ0 19
16. वही, पृ0 62
17. वही, पृ0 9
18. वही, पृ0 93
19. वही, पृ0 52
20. वही, पृ0 60
21. वही, पृ0 67
22. वही, पृ0 59
23. वही, पृ0 85
24. वही, पृ0 53
25. वही, पृ0 51
26. वही, पृ0 69
27. वही, पृ0 49–50

डॉ0 मोनिका
पता – 1065/20, दुर्गा कालोनी,
नया बस स्टैण्ड रोड़, रोहतक–124001 (हरियाणा)
फोन नं0:– 9416371239

Created by Universal Document Converter

गुरु नानक वाणी में निहित मानवीय संदेश

डॉ० सुमन रानी

सारांश : भारत ऋषियों, मुनियों, युगपुरूषों, पीरों, पैगम्बरों, अवतारों, तपस्वियों एवं मनस्वियों की तपोभूमि है जिन्होंने जीवन के विभिन्न क्षत्रों में आदर्श संस्थापन के द्वारा मानवता को एक नवीन दिशा प्रदान की है।

भारतवर्ष को कुछ ऐसे लाके नायक, समाज सुधारक तथा क्रांतिकारी मिले जिन्होनें अपनी उदात्त काव्यमयी वाणी द्वारा, निराश, पतनोन्मुख, पददलित, वंचित, पीड़ित, शोषित, जनों के हृदय में आशा एवम् आस्था की सुधा–वर्षा का महती कार्य सम्पन्न करके उन्हें संस्कारित एवम् आत्मोन्नत किया।

यह मध्यकाल था जिसमें अलौकिक आत्मज्ञान एवम् ईश–भक्ति–रंजित काव्यादर्श अपने चरमोत्कर्ष पर था। ''भक्तिकालीन काव्य भारतीय चिंतनधारा का सार तत्व प्रतिकूलताओं में अनुकूलता और विभिन्नताओं में एकता के सामंजस्य का काव्य है।''[1] सुकरात का कथन है कि जब ईश्वर को धरती के जीवों से वार्तालाप करना होता है जो वह कवियों की वाणी के माध्यम से अपना दिव्य संदेश प्रदान करता है।

सुकरात का यह कथन युगचेतना के मार्गदर्शक गुरु नानक देव पर पूर्णतः लागू होता है। 'सतिगुरु नानक परगटिया मिटि धुंध जग चानणु होआ' के अनुसार गुरु जी की वाणी भारतीय अध्यात्मवाद में उच्चकोटि का काव्य है जिसमें आध्यात्मिक रस आस्वाद्य रूप में है ही, इसके साथ–साथ धर्म, नीति, सदाचार, दशर्न, समाज–सुधार, जनान्दोलन के अनेक पक्ष व्यंजित हुए है।

गुरुनानक देव का व्यक्तित्व सार्वदेशिक और समन्वयकारी है और उनकी वाणी में पंजाब के ही नहीं हिन्दी भाषी प्रदेशों के निवासियों और दुनिया–भर के लोगों को भी बहुत गहरे में प्रभावित किया है।

उत्तरप्रदेश, बिहार, मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र आदि प्रदेशों में नानकपंथी साधु–संतों की एक प्राचीन और पुष्ट परम्परा है और इसके माध्यम से गुरुनानक की वाणी इस विशाल भू–भाग के जनमानस में सदियों से संचरित होती रही है। गुरुनानक देव ने अपने समय के संकटों को देखते हुए एक बहुधर्मी, बहुजातीय और बहुभाषी सामाजिक संरचना अैर बहुल सांस्कृतिकता के सपनों को अपनी वाणी में तरतीब दी थी।

मानव जाति के अनुपम रत्न नानक का जन्म तलवंडी (पाकिस्तान) में सन् 1469 में हुआ। इस क्रांतिकारी समाज सुधारक का जीवन दर्शन अपने समकालीन समाज के ही नहीं यूगों–युगों तक मानव समाज के मार्गदर्शन की भरपूर सामर्थ्य रखता है। वस्तुतः नानक उस अनवरत शाश्वत अनंत चेतना की ही एक प्रबल उत्ताल तरंग का नाम है जो कभी उस असीम चेतना सागर से उठकर मानव के अज्ञानजनित दुखों के कल्मष को धोने के लिए आई थी। जिस युग में गुरु नानक देव का अवतरण हुआ वह युग शोषण, बर्बरता एवम् अत्याचार का युग था। दीन–दुखियों के आँसू पाछे ने वाला कोई नहीं था। गणपति चन्द्र गुप्त के अनुसार – ''मुगलकालीन भारत में जब कि उच्चवर्ग की जनता अपने शासकों का अनुकरण करती हुई विलासिता के रंग में डूबी हुई थी। मंदिर, तीर्थ और धर्म–स्थान व्यभिचार के केन्द्र बन रहे थे। ऐसी स्थिति में निम्न वर्ग के अशिक्षित जन–समुदय का अनैतिकता, अनाचार और अधःपतन की चरम सीमा तक पहुंचकर मटियामटे हो जाना स्वाभाविक था, किन्तु संत–मत के विभिन्न उन्नायकों ने उन्हे ं एक ऐसा नेतृत्व प्रदान किया जिससे राष्ट्र का यह बहुसंख्यक वर्ग विनाश से बच सका।''[2]

भारतीय मध्ययुगीन धर्म–साधना में गुरुनानक अपना गौरवपूर्ण स्थान रखते हैं। गुरु नानक का महिमामय गौरव उनके प्रखर व्यक्तित्व, उनको अतलस्पर्शी दृष्टि, युग के प्रति जागरूक, लोक संग्रह की भावना, मिथ्याचारों का निशंक प्रत्याख्यान तथा घट–घट वासी की अपरोक्षानुभूति के गहनीय तत्वों पर आश्रित है। नानक जैसी ईश्वरीय विभूति का किसी भी रूप में मूल्यांकन मानव की सीमित बुद्धि और सीमित वाणी के वश की बात नहीं; फिर भी किसी भी विषय की गहराई में जाने से पूर्व उसके बारे में बौद्धिक रूप से संतुष्ट होना जरूरी है। यदि हम अपनी दृष्टि को नानक से सम्बन्धित किसी स्थान विशेष और युग की सीमाओं तक सीमित न रखें और उन्हें सिक्खों के प्रथम गुरू, मध्य युग के संत कवि या सिक्ख धर्म के संस्थापक जैसी परिधियों से बाहर निकलकर देखने–समझने का प्रयास करें तो पाएगें कि वे उस आदर्श मानव धर्म के प्रवर्तक है, जिसके आत्मिक उत्थान के लिए भक्ति, ज्ञान, योग, विवेक, वैराग्य, विनम्रता, निष्काम वर्ग और आत्मसमर्पण संयम और सहनशीलता जैसे सद्गुण भी है। यह धरा को स्वर्ग बनाने का राजमार्ग है। कोई इस पर चलकर तो देखे।

गुरु नानक ने अपनी वाणी में सभी जागतिक विषयों, सामाजिक तत्वों और युगीन धाराओं की अवतारणा की है। गुरु नानक का क्रांतिकारी व्यक्तित्व अपनी अखिल विभूति के साथ वहाँ प्रदीप्त हुआ है जहाँ उन्होंने सामाजिक विषमता, रूढ़िवादिता और जाति–पाति का तीखे स्वरों में खंडन किया है और मानव मात्र को अपने गले से लगाने का आमंत्रण दिया है। उनकी धारणा थी कि समाज की इस दुर्व्यवस्था का कारण वर्णगत भेदभाव है। ईश्वर की दृष्टि में सब समान है। प्रत्यके जीव ईश्वर का अंश है। ब्रह्म के एकत्व का वर्णन करते हुए गुरु नानक देव कहते हैं कि –

साहिबु मेरा एकु है अवरू नहीं भाई।
किरपा ते सुखु पाइआ साचे परथाई।[3]
साहिबु मेरा एको है। एको है भाई एको है।
आपे मारे आपे छोडै आपे लेनै देइ।
आपे वेखै आपे विगसै आपे नदरि करेइ।।
जो किछु करणा सो करि रहिआ अवरु न करणा जाई।

Created by Universal Document Converter

जैसा वरतैं तैसो कहीऐ सभ तेरी वडिआई।।[4]

एकोंकार नानक वाणी का मूल अथवा बीज मंत्र है। कबीर के समान नानक एकेश्वरवादी थे। समाज में अनेक देवी–देवताओं की उपासना प्रचलित थी। उनका खंडन करते हुए गुरु नानक देव ने कहा– वह एक ही है। वह सत्य स्वरूप, सबका स्रष्टा, परम समर्थ, निर्भय, अजन्मा, स्वयं भू, कालातीत अस्तित्व वाला है।

इक ओकोंर सति नामु करता पुरखु निरभउ निरवकै
अकाल मूरति; अजूनी सैभं गुर प्रसादि।
आदि सचु जुगादि सचु।। है भी सचु नानक होसी भी सचु।[5]

जीवात्मा को परमात्मा से मिलाने का बीड़ा उठाने वाले संतों ने जब तत्कालीन समाज को एक परमात्मा की अराधना की अपेक्षा अनेक आराध्य देवों के नाम पर विभाजित देखा ता` उन्हे ं निराकार एकेश्वर की सत्ता का उद्घोष करना पड़ा। एक परमसत्ता को सृष्टि का रचयिता तथा रचना को उसकी संतान घोषित कर हर प्रकार के भेदभाव को नकार दिया। जब प्रत्येक जीव का जनक एक है तो फिर किसी भी प्रकार का भेदभाव आधारहीन हो जाता है। नानक के समय का समाज धर्म, जाति, वर्ण, अर्थ आदि कितने ही आधारों पर विभक्त था। मानव की दुर्दशा देखकर मानव चते ना को जागृत करने के लिए उन्हें सांस्कृतिक उत्थान के अग्रदूत का कर्त्तव्य निर्वहन करना पड़ा। और मानव–मानव के बीच की प्रत्येक विभाजन रेखा पर प्रहार करना पड़ा क्योंकि किसी भी प्रकार का भेदभाव उनके मूल आध्यात्मिक उद्देश्य के मार्ग का अवरोध था; जिसे हटाने के बाद ही लक्ष्य प्राप्ति संभव थी।

धर्म के आधार पर विभिन्न सम्प्रदायों में विभक्त तत्कालीन समाज जो साम्प्रदायिकता के आधार पर एक–दूसरे से विद्वेष भाव रखता था को एकेश्वर की आराधना के द्वारा मानव–एकत्व का संदेश देना निश्चय ही उनकी क्रांति चेतना का द्योतक है। तत्कालीन धार्मिक क्षेत्र में अनेक विकृतियों का प्रवेश हो चुका था लोगों की भक्ति साधना केवल कर्मकांड तक सीमित हो चुकी थी। तीर्थाटन, मूर्तिपूजा, तंत्र–मंत्रों जैसे अंधविश्वासों में उलझे लोग इन्हीं को मोक्ष प्राप्ति का साधन मान संतुष्ट हो चुके थे। वास्तविकता से विमुख हुए को गुरु नानक ने ईश्वर की घट–घट व्याप्ति से परिचित कराया।

गुरु नानक देव ने परमात्मा का साक्षात्कार किया और प्रत्यक्ष अनुभूति प्राप्त की। नानक 'ओंकार' का अमृत पीकर मस्त है। उन्होंने चरम सत्य परमात्मा को बतलाया और उसी को जनता के सम्मुख रखा।

जपु जी में वे कहते हैं –

ता कीआ गला कथीआ ना जाहि।
जे को कहै पिछै पछुताई।।[6]

वह ब्रह्म एक है, वह सत्यस्वरूप एवं एकरस है। वही सब कुछ करने वाला तथा सबका स्रष्टा है। उसे किसी का भय नहीं और किसी से द्वेष नहीं। उसका अस्तित्व काल की पहंचु से परे है। उसे किसी ने पैदा नही किया; वह स्वयंभू है। सृष्टि से पहले जब कुछ नहीं था तब भी वह (सत्यस्वरूप) परमात्मा था; जिस समय युगों का आरम्भ हुआ उस समय भी वह था, अब भी वह है, और आग` भी वह होगा। यह 'इक ओंकार' सिख धर्म का मूलमंत्र है। वह किसी एक स्थान पर नहीं अपितु सर्वत्र व्याप्त है। पानी में, पवन में, धरती में और आकाश में वह सब जगह विद्यमान है।

गुरुनानक ने अपनी वाणी में समाज में फैले अंधविश्वास पर कुठाराघात किया। सोमनाथ के मंदिर पर महमूद गजनबी ने आक्रमण किया तो मंदिर के पुजारियों ने बड़े विश्वास से कहा कि भगवान सोमनाथ अपना तीसरा नेत्र खाले कर इस अधर्मी को भस्म कर देगें परन्तु हुआ क्या? जब मुगलों ने आक्रमण किया तो यहीं के पठान शासकों ने अगणित पीरों, फकीरों से उन्हें राके ने के लिए टाने–टोटे के करवाए। गुरुनानक ने ऐसे पाखंडियों, अंधविश्वासियों से बड़े व्यंग्य से पूछा – मीर (बाबर) तो तुम पर चढ़ आया, किले और महल जल कर राख हो गए। राजपुत्रों को टुकड़े– टुकड़े करके मिट्टी में मिला दिया गया। तुम समझते थे कि टोने–टोटके वाले पर्चों से मुगल सिपाही अंधे हो जाएंगे। परन्तु वहाँ तो एक भी मुगल अंधा नहीं हुआ।

कोटि हू पीर बरजि रहाए जा मीरू सुणिआ धाइया।
धान मुकाम जले बिज मन्दर मुछि मुछि कुइरूं रूलांइया।।
कोई मुगलु न होआ अंधा किनै न परचा लाइया।।[7]

गुरु नानक के व्यक्तित्व में आक्रोशी स्वर विद्यमान है। वे पीड़ितों के पक्षधर थे और तत्कालीन क्रूर राजाओं, बादशाहों की कड़ी आलाचे ना करते थे। जिस समय शासक वर्ग अनेक निरपराध व्यक्तियों को तलवार के घाट उतार रहा था, उस समय गुरु नानक का हृदय करुणा से द्रवित हो उठा। उन्होंने अपने प्रभु 'करतार' से सहसा प्रश्न किया – ''हे परमात्मा बाबर ने खुरासान पर आक्रमण किया, परन्तु तुमने उसकी रक्षा कर ली और हिन्दुस्तान को उसके आक्रमण से आतंकित कर दिया। तुम स्वयं इस स्थिति को उत्पन्न करते हो, परन्तु अपने को दोष न देने के लिए तुमने मुगलों को यमदूत बनाकर इस देश पर आक्रमण करा दिया। चारों आरे इतनी मारका हुई कि लागे त्राहि–त्राहि कर रहे हैं और तुम्हारे मन में इन निरीहजनो के प्रति कोई दर्द नहीं उत्पन्न हो रहा है। हे करतार, तुम तो प्राणियों के समान रूप से रक्षक होने का दावा करते हो? और फिर एक शक्तिशाली दूसरे शक्तिशाली को मारे तो मन में रोष उत्पन्न होता, परन्तु यदि शक्तिशाली सिंह निरपराध पशुओं के झुंड पर आक्रमण कर दे तो उनके स्वामी को कुछ तो पुरुषार्थ दिखाना चाहिए।

खुरासान खसमाना कीआ हिन्दुस्तानु डराइआ।
आपै दीसु न देइ करता जमु करि मुगलु चढ़ाइआ।
एती मार पई कुरलाणै तै की दरदु ना आइआ।।
करता तू समन का सोई।।
जे सकता सकते को मारे तामनि रोसु न होई।।
सकता सीहुं मारे पै वगै खसमै सा पुरसाई।।[8]

गुरु नानक के समय हिन्दू तथा इस्लाम दोनों धर्म भ्रष्ट तथा अवनत हो चुके थे। वे अपनी पुरानी शान तथा पवित्रता खो चुके थे। लोगों के लिए वदे अब कठिन ग्रंथ बन चुके थे तथा उनकी जगह तान्त्रिक साहित्य ने ले ली थी। जाति व्यवस्था कठोर बन चुकी थी तथा कई

Created by Universal Document Converter

उप–जातियाँ भी बन गई थी। हिन्दु धर्म की आत्मा लुप्त हो चुकी थी और उसका बाह्य आवरण भर ही रह गया था। केवल वही रीति–रिवाज बच रहे थे जिनसे विशेष रूप से ब्राह्मणों का कोई निजी लाभ होता था। इस्लाम में भी यही हालत थी।

हिन्दू कै घरि हिंदू आवै। सुतु, जनेऊ पडि गलि पावै।
सुतु पाइ करे बुरिआई। नाता धोता थाइ न पाई।।
मुसलमानु करे बडिआई।
विणु गुरु पीरै को थाइ न पाई।।
राहु दसाइ ओथै को जाई।
करणी बाझहु भिसति न पाई।
जोगि कै घरि जुगति दसाई। तित कारणि कनि मुंद्रा पाई।।
मुंद्रा पाई फिरै संसारि। जिथै किथै सिरजणहारू।।
जेते जीअ तेते वाटाऊ। चीरी आई ढिल न काऊ।।
एथै जाणै सु जाइ सिआणै। होरु पकड़ हिंदू मुसलमाणै।।
समना का दिर लेखा होई। करणी बाझहु न तैर न कोई।।
सचो सचु बखौन कोई। नानक अगै पंछु न होई।।[9]

उस युग में, जब विदेशी प्रभाव के कारण लागे अपने स्वत्व को भलू रहे थे, गुरु नानक ने लोगों में सांस्कृतिक पुनर्जागरण पैदा किया। उनकी भाषा, उनकी लिपि, उनकी विचार पद्धति, उनकी आस्था के शब्द गुरु नानक की वाणी के माध्यम से सामान्य जन के पास पहुंचे और उन्हें लगा कि वे राजनीतिक दृष्टि से चाहे बहुत कुछ खो चुके हो परन्तु सांस्कृतिक दृष्टि से उनके पास बहुत कुछ है जिसके आधार पर वे स्वाभिमान से जी सकते है।

सांस्कृतिक पुनर्जागरण के इस कार्य में गुरु नानक ने मिथ्याडम्बर को कभी प्रश्रय नहीं दिया। परम्परागत मान्यताओं, आस्थाओं और मूल्यों का निरन्तर परीक्षण और संशोधन नही उनकी उपादेयता को बनाए रख सकता है। अंधानुगमन मे ं व्यक्ति सार तत्व लो खो देता है और अनके प्रकार पाखंडों और विसंगतियों का शिकार हो जाता है ऐसी ही विसंगति के शिकार एक हिंदू कर्मचारी को फटकारते हुए उन्होंने कहा था – तुम गऊ ब्राह्मण पर कर लगाते हो और गोबर का सहारा लेकर तर जाना चाहते हो। धोती, तिलक और माला धारण करते हो और धान मलेच्छों का खाते हो। घर के अन्दर पूजा करते हो और बाहर शासकों को प्रसन्न करने के लिए कुरान पढ़ते हो। यह सब पाखंड छोड़ क्यों नहीं देते।

गऊ बिराहमण कउ करु लावहु गोबरि तरणु जाई।
धोती टिका तै जपमाली धानु मलेछो खाई।।
अंतरि पूजा पड़हि कतेवा संजमु तुरका भाई।।
छोड़ीले पाखंडा। नामि लइए जाहि तरंदा।।[10]

गुरु नानक देव ने ईश्वर या पैगंबर बनकर किसी दैविक शक्ति के दावे नहीं किये। उन्होंने सभी से प्रेम किया और किसी के प्रति बुराई की भावना नहीं रखी। कब्रगाहों में कई–कई दिनों तक बैठै और अल्लाह की स्तुति में गायन कर उन्होंने मुसलमानों का विश्वास भी जीत लिया। मुसलमानी इबादतों में शामिल होने में उन्हें कोई हिचक न होती, किन्तु वे देखते कि प्राथर्ना में आए हुए लोग खुदा से ध्यान न लगाकर अपने मन को घर–बार और व्यापार की बातों में भटकने देते हैं। इस तरह उन्होंने उन पांच प्रार्थनाओं (नमाजो) का महत्त्व बताया जिन्हें करना मुसलमान जरूरी समझते थे।

पंजि निवाजा बखत पंजि पंजा पंजे नाउ।
पहिला सचु हलाल दुइ तीजा सैर खुदाइ।।
चउथी नीयति रासि मन पंजनी सिफति सनाइ।
करणी कलमा आखि कै ता मुसलमाणु सदाइ।
नानक जेते कूड़िआर कूड़ै कूड़ी पाइ।।[11]

गुरु नानक ने बताया कि सच्चा मुसलमान वही है जो नेक काम करता है, बाकी सब गलत है। हिन्दुओं के प्रति घृणा इस्लाम के अनुकूल आचरण नही है, क्योंकि हिन्दू तथा मुसलमान दोनों ईश्वर के बंदे है, वास्तव में हिन्दू–मुसलमान नामक चीज कुछ है भी नहीं, इंसान तो आखिर इंसान ही कलाएगा। अलग–अलग चिह्न लगाकर अपने को औरों से भिन्न मानने वाले लोग तो उस इंसान की – सच्चे अर्थों में सुसंस्कृत इंसान की शान को नहीं छू सकते जो जाति, धर्म देश, राष्ट्र आंचलिकता अथवा रंग का भेद परे हटाकर मानव मात्र से ऐक्य की भावना रखता है। गुरु नानक के साथ मर्दाना की उपस्थिति का मुस्लिम श्रोताओं पर परिवर्तनकारी प्रभाव पड़ा।

गुरु नानक देव ने कहा कि अपने आपको मुसलमान कहना तो बहुत मुश्किल काम है। अपने आप को मुसलमान तो वही कह सकता है जो अपने औलियों के बताए मजहब को प्रिय मानता है, (गुरु नानक ने मुसलमानों से उस मजहब को मानने को कहा था जिसकी व्याख्या मुसलमान संतों ने की थी न कि (मुसलमान शासकों ने) अपनी कमाई को गरीबों में वितरित करता है, रब की रजा को सिर माथे मानता है, उसके सामने अपने आपको मिटा देता है, जो सभी लोगों पर महे रबान है, ऐसा मुसलमान ही जीवन–मरण के भ्रम को मिटा कर सच्चा मुसलमान कहलाने का अधिकारी होता है।

मुसलमान कहावणु मुसकलु जा होइ ता मुसलमाणु कहावै।
अवलि अउलि दीनु करि मिठा मसकल माना मालु मुसावै।।
होइ मुसलिमु दीन मुहाणै मरण जीवण का भरमु चुकावै।
रब की रजाइ मन्ने सिर उपरि करता मन्ने आपू गवावै।।
तउ नानक सरब जीआ मिहरंमति होई त मुसलमाण कहावै।।[12]

मध्ययुग में हिन्दू और मुस्लिम संस्कृति समानांतर रेखाओं में चलते हुए भी दूसरे के साथ सांस्कृतिक सांझ उत्पन्न कर रही थी। मध्ययुग का पंजाब रणभूमि के साथ–साथ भारतीय भाषाओं के विकास की कर्मभूमि भी रहा है। यहाँ एक आरे हिन्दू भक्त और सतं अपने सीधे–सीधे शब्दों में लाके भावना के माध्यम से नई चेतना फूंक रहे थे; गुरु साहिबान मानवता और सरबत के भले का संदेश दे रहे थे। नानक नाम चढ़ दी कला, तेरे भाणे सरबत दा भला।

वहीं मुस्लिम और पीर संत फकीर अपनी रूहाणी वाणी ब्रज भाषा में व्यक्त कर संकीर्णताओं से ऊपर उठ कर लिपियों की दूरी को कम करते हुए नया इतिहास रच रहे थे। यह नया इतिहास उनके धर्मनिरपेक्षता के संकल्प को ठीक गवाही दे रहा था। तभी तो गुरु अर्जुन देव जी ने इनकी वाणी के महत्व को समझते हुए शेख फरीद और कबीर

Created by Universal Document Converter

जैसे मुस्लिम संतों की वाणी को गुरु ग्रंथ साहिब में स्थान दिया।

यद्यपि गुरु नानक देव ने मुगल आक्रामणकारियों की निंदा की और मुस्लिम शासकों की निंदा उनके गलत आचरण और राजनीतिक भ्रष्टाचार के कारण की तथापि मुस्लिम जनसाधारण से उनके प्रेम का उदाहरण इस बात से मिलता है कि उनका प्रिय साथी मरदाना मुसलमान था, जिसकी रवाब पर वे अपनी वाणी का उच्चारण कर रहे थे और मरदाना उसे स्वरबद्ध करता हुआ हिन्दू–मुस्लिम की सांस्कृतिक सांझ को सुदृढ़ कर रहा था। यह सांझ मध्य युग में पंजाब को पूरे साहित्य, कला और संस्कृति में परिलक्षित होती है।

डॉ० मनमोहन सहगल का मत है कि – "तत्कालीन स्थितियों में जीवन–मृत्यु, सम्पन्नता–विपन्नता, सत्कार–तिरस्कार का जो भी जातिगत पक्षपात उन्होंने देखा और शायद कभी भोगा भी था, इसलिए उन्होंने जाति–पाति–मतवाद और पंथों मजहबों के घरों और संकीर्ण सीमाओं से ऊँचे उठ कर मानवता के चिरस्थाई मूल्यों की स्थापना की थी और भारत की गिरावट भरी सांस्कृतिक स्थिति से ऊपर उठाकर राष्ट्रीय गौरव गाथा कह सकने में समर्थ बनाया।"[13]

गुरु नानक देव ने अपनी वाणी में जहाँ एक आरे हिन्दुओं के अवतारवाद, मूर्ति–पूजा, कर्मकांड, बाह्य आडम्बरों, पर कड़ी चोट की है और उन्हें सच्चे अर्थों में हिन्दू बनने की प्रेरणा दी है वहीं दूसरी आरे मुसलमानों को भी उनके धर्म को आदर्श मल्ू यों–समानता, सहनशीलता, धैर्य आदि पर दृढ़ रहने की भी प्रेरणा दी है। आजीवन समाज हित में तत्पर रहे नानक का समूचा जीवन प्रेरणादायी व अनुकरणीय है। गुरु नानक देव का सबसे निकटवर्ती शिष्य मरदाना को माना जाता है। गौर करने वाली बात है कि मरदाना मुस्लिम होने के बाद भी उनका सबसे घनिष्ठ शिष्य कहलाया। यह गुरु नानक देव के तप का ही प्रभाव कहा जा सकता है।

जातीय भेद को दूर करने में गुरु नानक का अटूट विश्वास था। उनके पास इसका अध्यात्मिक एवम् धार्मिक आधार था। सब जीव उस ब्रह्म का ही अंश है, अतः उनमें भेद कैसा? एक ही ज्योति से ज्योतित है आरै अंततः उसी में मिल जाना है। गुरु नानक ने न केवल अन्यान्य जातियो ं एवम् धर्मों के व्यक्तियों जैसे शेख फरीद, कबीर, रैदास, पीपा, धन्ना, आदि की वाणियों का ं संगृहीत किया अपितु अपना संदेश भी इन बंधनों को तोड़कर मानव–मात्र के लिए प्रसारित किया। उन्होंने सभी बाह्याडम्बरों का खंडन करके कोई ऐसे औपचारिक बंधन नहीं रखे जिन्हें अपनाने में किसी भी मानव को कष्ट हो या वे किसी धर्म की मान्यताओं के प्रतिकूल हो। इसलिए उनका धर्म मानव–धर्म बनकर विकसित हुआ। उन्होंने न केवल हिन्दुओं के पारस्परिक जातीय भेद–भाव को दूर किया अपितु हिन्दु और मुसलमानों के धार्मिक एवम् जातीय वैमनस्य को दूर कर सामाजिक एकता स्थापित करने का प्रयत्न किया।

काजी कूड़ बोलि मलु खाइ। ब्राह्मधु नावै जीवा घाइ।।
जोगी जुगति न जाणै अंधु। तीने ओजाड़े का बंधु।।
सो जोगी जो जुगति पछाणै। गुर परसादी एको जाणै।।
काजी सो जो उलटी करै। गुर परसादी जीवतु मरै।।
सो ब्राह्मणु जो ब्रह्म बीचारै। आपि तरै सगले कुल तारै।।
दानसबंदु सोई दिलि धोवै। मुसलमानु सोई मलु खोवै।
पड़िआ बूझै सो परवाणु। जिसु सिरि दरगत का नीसाणु।।[14]

संतों ने ज्ञान के पाखडं का विरोध किया और अपने युग के ऐसे दंभी और ढोंगी ज्ञानियों की खूब खबर ली जो अपने अभिमान में ही अपने को ब्रह्म जताने लगते है। ज्ञान से नानक का अभिप्राय था परमात्मा का अनुभव जो उसको भक्ति में प्रवृत्त करता है। इसी प्रकार कर्मयोग भी उन्हें वहीं मान्य है जो भक्तियोग के अनुकूल हो। इसी से नानक देव ने बाह्य कर्मकांड की निंदा की है। जप–माला, छापा–तिलक, तीर्थ, व्रत आदि ढोंग है यदि आत्म ज्ञान द्वारा सच्चे ब्रह्मकर्म मार्ग अर्थात् सच्ची भक्ति को नहीं अपनाया गया –

गलि माला तिलकु ललाटं। दुई धोती बसत्र कपाटं।।
जे जाणसि ब्रहमं करमं। सभि फोकट निसचउ करमं।।[15]

निष्कर्ष : अतः हम कह सकते है कि आज धर्म के नाम पर धार्मिक आडम्बर, प्रपंच अधिक हावी हो गए है जिससे मानवी क्लेश और अधिक बढ़ गए है। ऐसे में संत संस्कृति हमारी सहायता कर सकती है क्योंकि संत किसी भी धर्म की बात नहीं करते, धार्मिकता की बात करते हैं। वे साम्प्रदायिकता नहीं, आध्यात्मिकता सिखाते है। आध्यात्मिकता धर्म की आत्मा है। गुरु नानक ने निराश जनता की चेतना में आत्मविश्वास और ईश्वर विश्वास की पुनः प्रतिष्ठा की। वे नवीन चेतना के अनन्य प्रतीक थे। निर्गुण ब्रह्म के स्तर पर ईश्वर की एकता की प्रतिष्ठा की तथा हिन्दू मुस्लिम धर्मों का समन्वय किया। जिसका महत्व आज भी अक्षुण्ण है।

संदर्भ सूची –

1. डॉ० रंजना सक्सेना, सामाजिक परम्पराओ ं के पोषक सूर, पृ0 29
2. गणपति चन्द्र गुप्त, सन्तकाव्य : उद्गम स्त्रोत और प्रवृतियाँ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ0 238
3. सं० डॉ० जयराम मिश्र, नानक वाणी, मित्र प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ0 302
4. वहीं, पृ0 250
5. वहीं, पृ0 79
6. वहीं, पृ0 97
7. नानक वाणी, पृ0 294
8. वहीं, पृ0 276
9. वहीं, पृ0 562
10. वहीं, पृ0 348
11. वहीं, पृ0 179
12. वहीं, पृ0 181
13. सं० शमीम शर्मा, पंचनाद, वाणी प्रकाशन, स० 2008, पृ0 102
14. नानक वाणी, पृ0 414
15. वहीं, पृ0 344

डॉ० सुमन रानी (सहायक प्रवक्ता)
श्री लालनाथ हिन्दू कॉलेज, रोहतक (हरियाणा)

Created by Universal Document Converter

प्रमुख स्मृतियों में राजा के अधिकार व कर्त्तव्य : एक अनुशीलन

4

डॉ० सुनीता देवी

सारांश : धर्मशास्त्र किसी जाति, वर्ण उनके व्यवहार, आचार–विचार कर्त्तव्य, अधिकार, दान, प्रतिष्ठा, व्रत आदि को परिभाषित करते हुए समाज में वर्णित व्यवस्था, परम्परा और उसकी उपलब्धियों का विस्तृत रुप से निर्वहन करता है। हमें यह कहते हुए संकोच नहीं करना चाहिए कि 'धर्मशास्त्र हमारे जीवन का मूलाधार है'। 'धर्मस्य शास्त्रम् इति धर्मशास्त्रम्' अर्थात् धर्म के द्वारा राजा पर प्रजा का ऋणदान, निक्षेप का व्यवहार पदों का निर्णय करते हुए अनुशासित करने का माध्यम कहा गया है। धर्मशास्त्र शब्द का प्रयोग सबसे पहले मनुस्मृति में किया गया है। मनु ने श्रुतियों को वेद तथा स्मृतियों को धर्मशास्त्र शब्द से व्यवहृत किया है :–

'श्रुतिस्तु वेदो विज्ञेया धर्मशास्त्रं तु वै स्मृतिः'

धर्मशास्त्र में राजा के कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्वों का वर्णन किया गया है। राजा राजनीति का एक ऐसा स्थायी स्तम्भ है, जिसकी दृढ़ता व पवित्रता के आधार पर प्रजा तथा सम्पूर्ण राज्य की प्रसन्नता, सम्पन्नता निर्भर करती है। वैदिक परम्परा में राजा को सर्वोत्तम स्थान प्राप्त है। ऋग्वेद के अनेक स्थलों पर उसे अग्नि तथा इन्द्र कहकर सम्बोधित किया है।[1] राजा जैसा व्यवहार करेगा प्रजा भी वैसा ही अनुसरण करती है।[2] मनु के अनुसार राजा की उत्पत्ति ईश्वर के द्वारा हुई है। ईश्वर ने जब देखा कि संसार में बिना राजा के सर्वतः भय और उपद्रव हो रहा है तब लोक की रक्षा के लिए राजा का सृजन किया गया।[3] मनु स्पष्ट रुप से राजा की सृष्टि दैवी मानते है। मनु के मतानुसार जब राजा में देवत्व है तो उसे अपने देवत्व के अनुसार ही कार्य करना चाहिए। जिस प्रकार इन्द्र श्रावण आदि चार मासों में (अन्नादिकी वृद्धि के लिए) जल बरसाते हैं, उसी प्रकार इन्द्र के व्रत का आचरण करता हुआ राजा अपने राज्य में आए हुए साधु महात्माओं की इच्छा पूरा करे।[4] वायु सब प्राणियों में प्रवेश कर विचरण करती है, उसी प्रकार राजा को गुप्तचरों द्वारा सर्वत्र प्रवेश करना चाहिए, यह राजा का 'वायुव्रत' है। इसी तरह से राजा के देवत्व सम्बन्धी कर्त्तव्यों का वर्णन मनु ने किया है।[5] मनु ने राजा को देवत्व प्रदान करके उसके उत्तरदायित्वों, कर्त्तव्यों को एक निश्चित मार्ग प्रदान किया है।

समाज के सभी धर्मों की देख–रेख तथा संचालन की व्यवस्था का अन्तिम दायित्व राजा पर होता है। इसलिए राजा का सर्वप्रथम कर्त्तव्य है प्रजा का रंजन राज्य के शासनाभार को अपने कन्धों पर उठा लेने के पश्चात् राजा के लिए व्यक्तिगत सुख–दुख को कोई अवकाश नहीं रह जाता है। जिस प्रकार सूर्य ने अपने अश्वों को एक ही बार रथ में संयुक्त किया है, वायु रात–दिन गमनशील रहती है तथा शेषनाग पृथ्वी को वहन करते है उसी प्रकार राजा अपने शासन के दायित्वों का निर्वाह निरन्तर करता है।[6] प्रजा की रक्षा करना राजा का एक बड़ा दायित्व था। कर्त्तव्य भ्रष्ट होने पर राजा को पाप का भागी माना जाता था। याज्ञवल्क्य का मत है कि राजा ने राज्य की रक्षा के लिए जो अधिकारी नियुक्त किए हैं, उनके आचरण की परीक्षा गुप्तचरों द्वारा कराकर जो सदाचारी हों, उन्हें राजा सम्मानित करे और विपरीत कार्य करने वालों को दण्ड दे । रिश्वत लेकर अपनी जीविका चलाने वालों का धन छीनकर उन्हें अपने राज्य से निकाल देना चाहिए। शास्त्रज्ञों, श्रोत्रियों को दान, मान और सत्कार देकर सदा अपने राज्य में वास दे।[7] मनु के अनुसार राजा प्रातः काल उठकर ऋग्यजुःसाम के ज्ञाता और विद्वान् ब्राह्मणों की सेवा करे और उनके शासन में रहे। वृद्ध की सेवा करने वाले राजा की राक्षस भी पूजा करते हैं। पहले से ही विनययुक्त राजा सर्वदा विनय सीखे, क्योंकि विनययुक्त राजा कभी नष्ट नहीं होता।

वृद्धांश्च नित्यं सेवेत विप्रान्वेदविदः शुचीन ।
वृद्धसेवी हि सततं रक्षोभिरपि पूज्यते ।।
तेभ्योऽधिगच्छेद् विनयं विनीतात्मापि नित्यशः ।
विनीतात्मा हि नृपतिर्न विनश्यति कर्हिचित् ।।

अतः राजा को असहायों वृद्धों, लंगड़ों, अनाथों, विधवाओं, रोगियों, गर्भवती स्त्रियों की दवा, अन्य वस्त्र इत्यादि देकर सहायता करनी चाहिए।[8] अकाल के समय राजा को अपने कोश से जनता के भोजन इत्यादि की व्यवस्था करके प्रजापालन करना चाहिए। प्रजा की आर्थिक समृद्धि हेतु सिंचाई व्यवस्था, बीज, खाद, कम ब्याज पर ऋण वितरण, अकाल तथा भूखमरी के समय शुल्क आदि की माफी करना भी राजा का कार्य था।

राजा के लिए धर्म सम्बन्धी कार्य करना भी अत्यावश्यक था। संसार में सभी प्राणी धर्म पर आधारित हैं और धर्म का मूलाधार राजा होता है। धर्म सम्बन्धी कार्यों की पूर्ति हेतु राजा पुरोहितों की नियुक्ति करता था तथा उसे ही विभिन्न प्रकार के यज्ञ तथा अनुष्ठान करवाने पड़ते थे।[9] राजा का सर्वोपरि धर्म यह है कि वह स्वयं भी धर्म की अधीनता में स्वधर्म का सम्पदान करे। धर्मशास्त्रों के समय में राजा कभी भी निरंकुश नहीं रहा। महर्षि मनु के अनुसार धर्म–दण्ड बड़ा सामर्थ्यशाली है। मूर्खों के अधिकार में रहने के अयोग्य होने से अधर्मी राजा का बन्धु–बान्धवों सहित नाश हो जाता है।[10] राज्य संचालन के लिए मनु ने कोष को महत्त्वपूर्ण माना है और उसे राज्य के सप्तांगों

Created by Universal Document Converter

में विशिष्ट स्थान दिया है ।

स्वाम्यमात्यौ पुरं राष्ट्रं कोशदण्डौ सुहृत्तथा ।
सप्त प्रकृतयोः ह्येताः सप्ताङ्गं राज्यमुच्यते ।।

बिना धन के राजा के समक्ष अनेक विपत्तियॉ आती थीं । कर्मचारियों को समय पर वेतन वितरण, सैन्य व्यवस्था, दुर्गादि का निर्माण व सुखा के अन्य साधन जुटाने में धन विहीन राजा के सामने संकट उपस्थित हो सकता था। महाभारत में कहा गया है कि कोष ही राजाओं का मूल है। इसलिए राजा को अत्यन्त परिश्रम व कौशल से इसका संचय करना चाहिए।
यथा

कोशश्च सततं रक्ष्यो यत्नमास्थाय राजभिः ।
कोशमूला हि राजानः काशमूलकारो भव ।।

महाभारत शान्ति पर्व, 16.119

धन से ही राजा प्रजा से सम्मान प्राप्त करता था। जिस प्रकार वस्त्र नारी के अंगों को छिपाकर रक्षा करता है, उसी प्रकार धन राजा के दोषों को ढ़क कर उसे यश का पात्र बनाता था। मनु के कथनानुसार राजा कार्यों को पूरा करने के लिए जनता से 'कर' प्राप्त करे। इस एकत्रित धन का प्रयोग राजा अपने स्वार्थ के लिए नहीं करता है अपितु यह धन को प्रजा की भलाई में खर्च करता है। प्रजाजनों की रक्षा के लिए मानो 'कर' राजा का वेतन है। राजा सूर्य के समान है जो समुद्र से जल सोखकर पुनः वर्षा करता है। कर लेकर राजा राज्य की रक्षा करता है, आपत्तियों से बचाता है, धर्म एवं अर्थ नामक उद्देश्यों की पूर्ति करता है। वस्तुतः कोष के बिना राजा की दशा उस याचक के समान समझनी चाहिए जो घर–घर की ठोकर खाकर भी कृपा का पात्र नहीं बनता। प्रजा कर अदा करके यही अपेक्षा करती थी कि हम रात और दिन दोनों कालों में निश्चिन्त होकर जीवन व्यतीत कर सकेंगे तथा आन्तरिक व बाह्य सुरक्षा राजा द्वारा हो सकेगी। अतः कोष की वृद्धि करना राजा के लिए अति आवश्यक था।

धर्मशास्त्रों में राजा को प्रतिपादित विधियों का प्रतिस्थापक मात्र माना जाता था। स्मृतियों में राजा की विधायिका शक्ति का खण्डन करते हुए उसे मात्र व्यावहारिक विधि का प्रशासक बताया गया है। मनु ने राजा के कार्यपालिका सम्बन्धी कर्त्तव्यों को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बताया है। मनुस्मृति में राजा को सर्वोच्च न्यायाधिपति के रुप में प्रतिष्ठित किया गया है। जिसमें न्याय की स्थापना करना और अपराधियों को दण्ड देना तथा उसे देश, काल, दण्ड शक्ति और विद्या का ठीक–ठाक विचार कर अन्यायवर्ती व्यक्तियों में शास्त्रानुसार राजा अपराधियों को उचित दण्ड दें।[11] इसी के साथ–2 वर्ण व्यवस्था का संचालन तथा सबलों द्वारा अबलों की रक्षा का कार्य भी राजा का था।[12] हिन्दू विधि शास्त्र के अनुसार राजा द्वारा कोई अपराध होने पर उसे 1000 पण का दण्ड दिया जाता था, जबकि किसी सामान्य नागरिक द्वारा उसी प्रकार का अपराध होने पर मात्र 1 पण का जुर्माना होता था। न्याय का गला घोंटने वाले राजा तथा न्यायाधीश दोनों को क्रमशः चौथाई–चौथाई पाप का भागी बनना पड़ता था।[13] कौटिल्य के अनुसार राजा मात्र संवैधानिक शासक था। शासन व्यवस्था के संचालन में वह मात्र दिशा–निर्देशन करता था। इस प्रकार राजा कार्यपालिका का अध्यक्ष मात्र था। वह कुछ महत्त्वपूर्ण पदों पर अधिकारियों की नियुक्ति भी करता था। इसलिए राजा का अधिकांश समय राज्याधिकारियों से मिलने में ही व्यतीत हो जाता था। अतः मुकदमों को देखने का इच्छुक राजा न्यायालय में जाकर कार्यार्थियों के कार्य को देखे।[14] जब भी झगड़ों का निपटारा न्यायाधीश नहीं कर पाते थे तो उनका निपटारा राजा द्वारा किया जाता था। इसके लिए न्यायाधीशों की नियुक्ति उसे करनी पड़ती थी। जैसा कि मनुस्मृति में कहा गया है :–

यदा स्वयं न कुर्यात्तु नृपतिः कार्य दर्शनम् ।
तदा नियुञ्जयात् विद्धांसम् ब्राह्मणं कार्यदर्शने ।।

मनुस्मृति 8.9

राजा के प्रशासनिक कार्यों मे दो प्रकार के कर्त्तव्य सम्मलित थे नियुक्तियां करना और प्रशासनिक कार्यों का संचालन। राजा द्वारा मन्त्रियों तथा उच्चाधिकारियों के पद पर सुयोग्य एवं गुणवान् व्यक्तियों की नियुक्ति की जाती थी। शुक्र ने मन्त्रियों के चयन में गुण एवं कर्म को जाति से अधिक वरीयता प्रदान की है । उनके मतानुसार ऐसे पदों पर नियुक्तियॉ करते समय जाति एवं कुल मात्र का विचार न करके योग्यता को प्राथमिकता दी जानी चाहिए।[15] राजा कार्यपालिका और न्यायापालिका विभाग दोनों पर अधिकार रखता था। जनता को निष्पक्ष न्याय प्रदान करना राजा का आवश्यक कर्त्तव्य है। राजा को निर्देश दिए गए हैं कि यदि वह शास्त्र विरुद्ध, बिना यथोचित विचार के, धन के लोभ या आलस्यवश न्याय करता है तो वह सब तरफ से जन–धन का नाश करता है।[16] इस प्रकार राजा को सोच–विचार कर औचित्य के अनुरुप दण्ड का विधान करना चाहिए। क्योंकि जो राजा अधर्म दण्ड का विधान करता है वह स्वयं पाप का भागी बनता है तथा अपयश को प्राप्त करता है।[17] इस प्रकार स्पष्ट होता है कि राजा कार्यपालिका व न्यायपालिका का प्रथम संगठनकर्ता है तथा राजा से सदैव निष्पक्ष न्याय की आशा की जाती है।

निष्कर्ष : अतः राजा के कर्त्तव्यों से स्पष्ट होता है कि वह धर्म के नियम के अधीन है। कोई भी राजा धर्म के विरोध में नहीं जा सकता। धर्म राजा व मनुष्य पर एक समान शासन करता है, इसके अतिरिक्त राजा जनता के भी अधीन होता है। जो राजा जनता को

Created by Universal Document Converter

सताता है उसका जीवन व राज्य जनता छीन सकती है। जनता को सभी प्रकार के कष्टों से रक्षा पाने का अधिकार है। याज्ञवल्क्य ने कहा है कि यदि राजा नियमों का उल्लंघन करता तो उसके परिवार का राज्य से निष्कासन होता है तथा उसको अधिकतम दण्ड भी दिया जाता है।[18] अतः राजा को कभी भी अपनी सत्ता की सीमाओं का उल्लंघन नहीं करना चाहिए ।

सहायक ग्रन्थ सूची :

1. ऋग्वेद में विविध विधाएं 5.111
2. मनुस्मृति
3. मनुस्मृति 7.3
4. मनुस्मृति 9.304
5. मनुस्मृति 9.307–311
6. अभिज्ञान शाकुन्तलम् 5.4
7. याज्ञवल्क्य स्मृति 1.338–39
8. Sinha, B.P., Reading in Kautilya's Arthshastra, page, 9-10
9. मनुस्मृति 7.778–79
10. मनुस्मृति 7.28
11. मनुस्मृति 7.10
12. मनुस्मृति 7.35
13. Ursakar, U.S. Elements of Hindu Jurisprudence, N.I.P., December 3, 1982
14. मनुस्मृति 8.1
15. शुक्रनीति 2.54–55
16. मनुस्मृति 7.19
17. मनुस्मृति 8.128
18. के.पी. जायसवाल, मनु और याज्ञवल्क्य, पृष्ठ 97–98

डॉ. सुनीता देवी
एसिस्टेंट प्रोफेसर
आर्य गर्ल्ज कॉलेज
अम्बाला छावनी।

मजदूर संवेदना

ममता कुमारी

चल दिया मजदूरों का रेल।
घर में इंधन ना तेल,
भीड़ ठेलम ठेल,
है पैंडल का खेल,
जीवन मृत्यु से मेल
राम भरोसे पास,फेल न तो जेल।

नहीं चाहिए हमदर्दी,
आशा और विश्वास।
सुन लो ओ धरती
और तुम भी आकाश।
पेट की आग का तुझे क्या आभास?
मुझ में है अपना ही प्रकाश।

जब तक जलता हूं।
तब तक चलता हूं।
सरकार से न गिला है
ना कोई उम्मीद।
मांगने से कब
पूरी होती है,मुरीद!

एक नहीं, दो नहीं, पचासों मीलों दूर।
भूखे प्यासे,साइकिल से चला है मजदूर।
कड़कती धूप, चप्पले गई टूट,
सुनसान रोड, पेड़ न रुख,
गला गया सुख, घर जाने की भूख,
आंखों में विवशता, दिल में है दुख।

कैसे जलाएं कैंडिल
और बजाएं थाली,
जब हाथ है खाली
संग में बच्चे और घरवाली,
आंखें हैं डबडबा
दिल है अति भारी।

क्रमशः पृ. 36 पर

Created by Universal Document Converter

हिन्दी–साहित्य और रामकाव्य परम्परा में तुलसीदास

सारांश : रामकाव्य धारा का मूल उद्‌गम स्थल वाल्मीकी रामायण माना जाता है। उन्होंने अपनी रचना से देश की संस्कृति व मानव समाज की सेवा की है, उनसे पूर्ण रामकथा का न तो कोई व्ययस्थित काव्य मिलता है और न ही कोई समृद्ध राम काव्य मिलता है, वाल्मीकि रामायण में राम को मानव रूप में अंकित किया गया है, इनकी रचना को मानव समाज और संस्कृति का विश्वकोष कहा गया है। रामायण के राष्ट्र व्यापी प्रभाव आज भी पूरी तरह प्रासंगिक है जहाँ तक भारतीय हिन्दी साहित्य का सम्बन्ध है। उसमें रामकाव्य में वाल्मीकि रामायण को आधार बनाया गया है और तुलसीदास ने भी रामकाव्य में बाल्मीकि रामायण को अपनाया और सर्वश्रेष्ठत्व रामचरितमानस की रचना कर एक आयाम स्थापित किया और इस आयाम को अन्य कवि काफी प्रयत्न के बाद भी प्राप्त न कर सके।

मुख्य शब्द : आदर्शवादी, धर्मात्मा, विभूति, समन्वय, सभ्यता व संस्कृति।

आदि कवि वाल्मीकि जी ने रामायण की रचना लगभग 2500 वर्ष पूर्ण मानी जाती है। इसके पश्चात् महाभारत के 'वन पर्व' में रामकथा का विस्तृत रूप मिलता है। इसके साथ बौद्ध साहित्य, जैन साहित्य, पद्मपुराण, ब्रह्मण्ड पुराण पुराण, श्रीमद् भागवतपुराण, नृसिंह पुराण, अग्निपुराण, विष्णुपुराण में राम काव्य का वर्णन है। अध्यात्म रामायण राम की भक्ति की यात्रा को आगे बढ़ाने वाला ग्रंथ है।

संस्कृत के रामकाव्य में कालिदास कृत रघुवंश एक उत्कृष्ट कोटि की रचना मानी जाती है इसमें कालिदास ने 6 सर्गो में रामकाव्य का वर्णन कलात्मकता के साथि किया है। भट्‌टीकृत रावणवध भी रामकाव्य की विशिष्ट रचना है। संस्कृत में लिखे रामकाव्य में रघुनाथचरित, प्रसन्नराघव, अनघराघव, जानकी हरण, रामायणमंजरी, दशावतार चरित, उत्तरराघव, बाल रामायण, राघव नैषधीय आदि है।''

रामाकव्य के अन्तर्गत भक्ति का प्रवर्तन आचार्य रामानुज की परम्परा में रामवानन्द द्वारा आरम्भ किया गया और उनके शिष्य नरहरिदास और नरहरिदास के शिष्य तुलसीदास ने सर्वाधिक प्रतिष्ठित रामाकव्य की रचना की।

तुलसीदास पूर्व हिन्दी में रामकाव्य परम्परा –हिन्दी में सर्वप्रथम सन् 1285 ई० में कवि भूपति ने रामचरित रामायण की रचना की थी परन्तु अभी तक उसकी कोई प्रतिलिपि उपलब्ध नहीं हो पाई।

चन्दरवरदायी ने अपने आदिकाली ग्रंथ 'पृथ्वीराज रासों' में दशावतार वर्णन के अन्तर्गत 38 छन्दों में रामकथा का वर्णन किया है, इसके बाद भक्तिकालीन कवियों ने उनकी पावन कथा को काव्यबद्ध किया है। इसमें राम के लोकस्वरूप की अभिव्यक्ति के लिए सर्वाधिक अनुकूल समय था, रामानन्द ने रामभक्तिभावना का व्यापक प्रचार किया, जिससे कवियों को इस दिशा में रचना करने की प्रेरणा मिली। उन्होंने रामभक्ति को दो मार्गो में विभक्त किया निर्गुण व सगुण मार्ग, इसमें रामानन्द जी ने सगुण मार्ग को अपनाया, उनके शिष्यों ने एक सर्वमान्य तत्व को ग्रहण किया था वह राम नाथ।''[2]

इसी काल में विष्णुदास ने वाल्मीकि रामायण का हिन्दी में अनुवाद किया, नागरी प्रचारिणी सभा काशी की विभिन्न खोज रिपोर्टो में इनके रचित पाँच ग्रंथों का उल्लेख मिलता है। महाभारत कथा, रूक्मिणी मंगल, स्वर्गारोहण, स्वर्गारोहण पर्व और स्नेहलीला आदि। रामानन्द के शिष्य अग्रदास 1556 ई० के आस–पास थे। इन्होंने कृष्णदास पयहारी से दीक्षा ग्रहण की। अग्रअली अर्थात् अग्रदास जी स्वयं को जानकी जी की सखी मानते हुए काव्य रचना करते थे। इन्होंने ही रामभक्ति काव्य में सबसे पहले रसिकता का समावेश किया।

ईश्वरदास कृत भरतमिलाप तथ अंगद पैज कृतियाँ रची है। इनमें गणपति चन्द्रगुप्त ने भरतमिलाप को रामचरित सम्बन्धि हिन्दी का प्रबन्ध काव्य स्वीकार किया है। भक्त कवि प्राणचन्द चौहान ने सन् 1610 ई० में रामायण महानाटक नामक ग्रन्थ की रचना दोहा–चौपाई छन्द में की। उदयराम ने 1566 में हनुमन्नाटक को को आधार बनाकर कवित–सवैया छन्द में हनुमन्नाटक नामक ग्रन्थ की रचना की।

रामकाव्य परम्परा में तुलसी–सगुण भक्ति काव्य धारा में भक्त कवि तुलसीदास एक ऐसे भक्त है जो रामभक्त होते हुए कृष्ण भक्त भी है। उन्होंने ज्ञानयोग को भक्ति में स्थान देते हुए भक्ति का महत्व प्रतिष्ठित करते हैं। उनके काव्य में उनका निरीह भक्त रूप बहुत स्पष्ट हुआ है पर वे समाज सुधारक, कवि, पंडित लोकनायक और भविष्य स्रष्टा भी थे। उनकी रचनाएं विनयपत्रिका, रामचरितमानस, कवितावली, गीतावली, दोहावली, पार्वतीमंगल, जानकीमंगल, बरवैरामायण, रामलला नहछू, वैराग्य संदीपनी, कृष्णगीतावली तथा रामज्ञा प्रश्नावली। उनकी कीर्ति का आधार स्तम्भ उनके द्वारा अवधी भाषा में रचित महाकाव्य रामचरितमानस है।

तुलसीदास के महत्व को बताने के लिए विद्वानों ने अनेक प्रकार की तुलनात्मक उक्तियों का सहारा लिया है। नाभादास ने कलिकाल का वाल्मीकि कहा तो ग्रियर्सन ने तुलसी को सबसे बड़ा लोकनायक, स्मिय ने उन्हें मुगलकाल का सबसे बड़ा व्यक्ति माना था तथा रामचरितमानस को भारत की बाईबिल। उनका रामचरितमानस व्यवहार का दर्पण है, वह जीवन के हर क्षेत्र में अद्वितीय है। यह काव्यग्रन्थ ज्ञान भक्ति व काव्य की त्रिवेणी है डॉ० नग्रेन्द्र ''तुलसीदास ने राम के विराट स्वरूप को दर्शन द्वारा ग्रहर कर जीवन के व्यापक क्षेत्र में अवतरित किया है। उन्होंने राम में अनन्तशील, सौंदर्य व शक्ति का समावेश कर उनका ईश्वर रूप पूर्ण कर दिया और राम के जीवन में आर्य जीवन को समाहित करते हुए राम का भारतीय जीवन से अक्षुण्ण सम्बन्ध स्थापित कर दिया है।''[3]

आचार्य शुक्ल ने भी तुलसीदास की प्रशंसा करते हुए कहा है कि ''भक्तिकाल के कवियों में तुलसीदास का स्थान सर्वश्रेष्ठ है और

Created by Universal Document Converter

रामचरितमानस में तुलसी केवल कवि के रूप में ही नहीं उपदेशक के रूप में भी सामने आते है। वे हिन्दी काव्य गगन के सूर्य है। उन्होंने भक्ति को अपने पूर्ण रूप में श्रद्धा–प्रेम के समन्वित रूप में सबके सामने रखा और धर्म या सदाचार को उसका नित्यलक्षण निर्धारित किया।''[4]

तुलसीदास परवर्ती रामकाव्य – केशव कृत रामचन्द्रिका एक विशिष्ट ग्रंथ माना जाता है। यह एक प्रबन्ध काव्य है जिसमें 39 प्रकाश है परन्तु इस काव्य ग्रंथ में भक्ति का अभाव दिखाई देता है। इसमें सिर्फ काव्य कौशल का प्रधान्य है जबकि चरित्र चित्रण एवं प्रबंधात्मकता की उपेक्षा की गई है। केशव ने केवल कलात्मकता व अलंकृति को अधिक महत्व दिया है। इसलिए नगेन्द्र ने इसे न तो भक्तिकाव्य माना है न ही जीवन–काव्य बल्कि यह एक अलंकृत काव्य है। सेनापति ने कवित रत्नाकर में चौथी व पांचवी तरग के अन्तर्गत रामायण व राम रसायन का वर्णन किया है। तुलसीदास के परवर्ती कवियों के उपरान्त जिन कवियों में रामकाव्य परम्परा का निर्वाह किया। उनमें हृदयराम का नाम पहले आता है। इनके बाद प्राणचंद चौहान कृत रामायण महानाटक मिलता है जो संवादात्मक प्रबन्धकाव्य दोहा–चौपाई में। नरहरिबारहट कृत पौरूषेय रामायण जो वाल्मीकि रामायण पर आधारित है। सिक्खों के 10वें गुरू गोविन्द सिंह द्वारा रचित गोविन्द रामायण में राम की कथा का तेजस्वी वर्णन किया गया है।

रामकाव्य परम्परा में रसिकता का आरम्भ : तुलसीदास जी ने राम के मर्यादा पुरूषोत्तम रूप का आदर्शपरक चित्रण किया है लेकिन तुलसी के बाद अनेक रामभक्त कवियों ने कृष्ण काव्य की लोक प्रियता से प्रभावित होकर अपने राम–काव्य में राम को कृष्ण के समान ही रसिक, छैल–छबीले रूप में चित्रित किया। राम–सीता का युग्म बनाकर उनकी रास क्रीडा का चित्रण किया। इसमें प्रमुख है लालदास द्वारा लिखित अवधविलास, जानकी शरण द्वारा – अवध सागर, अग्रदास द्वारा अष्टयाम आदि। अग्रदास जी ने स्वयचं को सीता की सखी मानकर सीयाराम की प्रेमलीला का वर्णन किया है।

आधुनिक काल में रामकाव्य परम्परा : राम का चरित्र इतना महान है कि आज भी अनेक कवि उनको आधार मानकर रामकाव्य परम्परा की अविरल धारा में सहयोग कर रहे है। इनमें रामचरित चिंतामणि, पंडित रामचरित उपाध्याय कृत एक महाकाव्य है जिसमें वाल्मीकि रामायण व रामचरित मानस को आधार ग्रंथ बनाया गया है। रामनाथ ज्योतिषी कृत रामचरित चन्द्रोदय, मैथिलीशरण गुप्त कृत साकेत, अयोध्या सिंह उपाध्याय कृत वैदेही वनवास, बलदेव प्रसाद मिश्र कृत साकेत सन्त, हरदयाल कृत रावण महाकाव्य, बाल कृष्ण शर्मा नवीन कृत उर्मिला तथा निराला द्वारा राम की शक्ति पूर्ण आदि।

आधुनिक काल में लिखे गये काव्यों में गुप्त जी द्वारा प्रणीत साकेत सर्वोतम है परन्तु तुलसीदास की रामचरित मानस से उसकी तुलना करे तो साकेत बहुत पीछे है, हिन्दी रामकाव्य परम्परा में तुलसी का स्थान आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने तुलसीदास जी के विषय में जो टिप्पणी की वह उनका स्थान निर्धारित करती है। ''गोस्वामी जी शास्त्र पारंगत विद्वान थे उनकी शब्द योजना साहित्यिक और संस्कृत गर्भित है। गोस्वामी जी की रचना में संस्कृत की कोमल पदावली का भी बहुत ही मनोहर मिश्रण है। हिन्दी काव्य की सब प्रकार की रचना शैली के ऊपर गोस्वामी जी ने अपना ऊँचा आसन प्रतिष्ठित किया है। यह उच्चता और किसी को प्राप्त नहीं, उन्होंने मानव जीवन की सभी दशाओं का सन्निवेश उनकी कविता के भीतर है, अपने दृष्टि विस्तार के कारण ही तुलसीदास जी उतरी भारत की समग्र जनता के हृदय मंदिर में पूर्ण प्रेम प्रतिष्ठा के साथ विराज रहे हैं। भारतीय जनता का प्रतिनिधि कवि यदि किसी को कह सकते हैं तो इन्हीं महानुभाव को। उन्होंने अपनी वाणी की पहुँच मनुष्य के सारे भावों और व्यवहारों तक है। एक और तो वह व्यक्तिगत साधना के मार्ग में विरागपूर्ण शुद्ध भगवद्भक्ति का उपदेश करती है और दूसरी ओर लोकपक्ष में आकर पारिवारिक और सामाजिहक कर्त्तव्यों का सौंदर्य दिखाकर मुगध करती है।''[5]

निष्कर्ष : सम्पूर्ण रामकाव्य परम्परा का अध्ययन करने के पश्चात् यह निष्कर्ष निकलता है कि तुलसीदास जी ने जिस रामकाव्य का वर्णन किया है भले ही वह वाल्मीकि रामायण और नानापुराण निगमागम सम्मत है। फिर भी कवि ने अपनी मौलिक प्रतिभा के कारण यह ग्रंथ रामकाव्य परम्परा की अद्वितीय व अनुपम धरोहर है। उन्होंने रामकाव्य के पात्रों के माध्यम से मानव समाज के सम्मुख आदर्श जीवन की स्थापना की है। गोस्वामी जी ने जिस गम्भीरता, प्रभावोत्पादकता, सरसता, सुन्दरता, भावप्रेषणीयता, समन्वयता का प्रदर्शन किया है। जो उनके पूर्ववर्ती न समकालीन और न ही परवर्ती कवितयों में से कोई भी ऐसा प्रदर्शन न कर सका। सच्चे अर्थो में वे रामकाव्य परम्परा के सूर्य है जिनकी समानता सैकड़ों तारे भी मिलकर नहीं कर सकते। तुलसीदास जी भावना के कवि थे। मानव प्रकृति के जितने अधिक रूपों के साथ गोस्वामी जी के हृदय का रागात्मक सामजस्य हम देखते है उतना अधिक हिन्दी भाषा के और किसी कवि के हृदय का नहीं है। गोस्वामी जी हिन्दी के गौरवशाली कवि है और रामभक्त कवियों में उनका स्थान अग्रणय है और रहेगा। गोस्वामी जी हिन्दी साहित्य क्षेत्र के कोहिनूर है।

संदर्भ :

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास : डॉ० बहादुर सिंह, माधव प्रकाशन, पृ० 88
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास : डॉ० बहादुर सिंह, माधव प्रकाशन, पृ० 191
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ० 105
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल–पृ० 114
5. हिन्दी भाषा और साहित्य – किरण बाला – बी.के. पब्लिशिंग हाऊस बरेली उ.प्र. पृ० 146

लाजवन्ती,
गाँव चरमाड़ा, त० इसराना,
जिला पानीपत, हरियाणा

Created by Universal Document Converter

प्रेमचंद की कहानियों में चित्रित किसान शोषण तथा संघर्ष

डॉ० सुमन देवी

सारांश : भारत शताब्दियों से एक कृषि–प्रधान देश रहा है। जिसकी जनसंख्या का बड़ा भाग या तो सीधे किसान है या किसानो पर अपनी आजीविका के लिए निर्भर करता है। प्रेमचंद की कहानियों में भारत में लागू की गई भिन्न–भिन्न भूमि व्यवस्था, अग्रेजों के काल की भूमि–कर व्यवस्था, इन भूमि–कर व्यवस्थाओं से अधिकाधिक लाभ के लिए किस प्रकार किसानों के हितों की अनदेखी की गई, किसानों की दयनीय स्थिति, किसानों की गतिविधियों, जमींदारो, साहकूारों, पटवारियों तथा अन्य बिचौलियों द्वारा उनका शोषण आदि का यथार्थ चित्रण हुआ है।

डॉ० रामविलास शर्मा के अनुसार – ''प्रेमचंद ने ग्राम–कथाओं से ही कहानी कहना सीखा था।''[1] प्रेमचंद ने किसानों की वास्तविक समस्याओं से जुड़ें हुए लोगों की ओर ध्यान दिया है। शुरू में ही उनकी रूचि सम्पूर्ण समाज में किसानों की स्थिति की तरफ थी। अतः कारिंदा से लेकर नये–पुरानें जमींदार तक को उन्होंने जांचा है। 1930 में लिखित 'पूस की रात' कहानी में किसान की दयनीय स्थिति का यथार्थ चित्रण किया गया है। इसकी पृष्ठभूमि में महामंदी की भूमिका है। किसान विशेष रूप से छोटे किसानों की तबाही की दास्तान इसमें है। किसान हल्कू कर्जदार है। उसने मजदूरी करके तीन रूपये कमाये है। ताकि कम्बल खरीदा जा सकें, जिसमें पूस की रात में खेत में रखवाली कर सकें। उन रूपयों को महाजन ले गया। ''हल्कू ने आकर स्त्री से कहा–सहना आया है, लाओ, जो रूपये रखे है, उसे दे दूँ, किसी तरह गला तो छूटे।

मुन्नी झाड़ू लगा रही थी। पीछे फिर कर बोली–तीन ही तो रूपये है, दे दोगे तो कम्बल कहां से आयेगा? माघ–पूस की रात हार में कैसे कटेगी। उससे कह दो, फसल पर रूपये दे देगें ।अभी नहीं पूस सिर पर आ गया, कम्बल के बिना हार में रात को वह किसी तरह नहीं जा सकता। मगर सहना मानेगा नहीं; घुड़कियाँ जमावेगा, गालियाँ देगा। बला से जाड़ों मरेंगे, बला सिर से टल जायेगी।

मुन्नी उसके पास से दूर हट गयी और आंखें तरेरती हुई बोली– कर चुकें दूसरा उपाय। जरा सुनूँ, कौन उपाय करोगे? कोई खैरात दे देगा कम्मल? न जाने कितनी बाकी है। जो किसी तरह चुकने ही नहीं आती। मैं कहती हूँ तुम क्यों नहीं खेती छोड़ देते? मर–मर काम करो उपज हो तो बाकी दे दो, चलो छुट्टी हुई। पेट के लिए मजूरी करो। ऐसी खेती से बाज आये।''[2]

किसानों का शोंषण सामन्तवादी समाज में भी होता है और पूंजीवादी समाज में भी होता है। किसान की बदहाली का मुख्य कारण लगान है। किसान के शोषण का मुख्य स्त्रोत यही बढ़ी हुई लगान और इससे सम्बन्धित अन्य कानूनी तथा गैरकानूनी कर है। श्री रजनी पामदत्त ने अंग्रेजी राज में किसानों की हालत का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि – ''किसानों पर तीन तरह के बाझे हैं –

1. सरकारी मालगुजारी का बोझ।
2. जमीदारों केंलगान का बोझ।
3. साहूकार केंसूद का बोझ।

वे आगे लिखती हैं कि – फिर भी यह, अनुमान भी उसके साथ नमक कर का बोझ जोड़ देने पर, 20 रूपये ही किसान तक पहुंच जाता है। इसकें मुकाबलें में किसानों की औसत आमदनी भी देखिए। केन्द्रिय बैंकिंग जाँच कमेटी के बहुमत की रिपोर्ट में अनुमान लगाया गया है कि – ब्रिटिश भारत में किसान की औसत आमदनी 42 रूपये सालाना से ज्यादा नहीं बैठती।''[3]

प्रेमचंद ने लगान व्यवस्था का यथार्थ चित्रण 'जेल' कहानी में मृदुला के माध्यम से किया है। मृदुला आर्थिक मंदी की ओर संकेत करती हुई लगान समस्या के सम्बन्ध में क्षमा से कहती है कि – ''परसों शहर में गोलियाँ चली, देहातों में आजकल संगीनों की नाकें पर लगान वसूल किया जा रहा है। किसानों कें पास रूपयें है। नहीं, दें तो कहाँ से दे। अनाज का भाव दिन–दिन गिरता जाता है। पौने दो रूपये में मन भर गेहूं आता है। खेत की उपज सें बीजों तक के दाम नहीं आते। मेहनत और सिंचाई इसके ऊपर। गरीब किसान लगान कहां से दें।''[4]

लगान वसूल करने में जमींदार को सरकार का सहयोग प्राप्त होता तथा लगान वसूल करने में अत्यन्त सख्ती सें काम लिया जाता। लगान वसूल करते समय किसान पर तरह–तरह के अत्याचार किये जाते। 'जेल' कहानी में मृदुला कहती है – ''किसान इस पर भी राजी है कि हमारी जमा–जथा नीलाम कर लों घर कुर्क कर लों, अपनी जमीन ले लो पर यहाँ तो अधिकारियों को अपनी कारगुजारी दिखाने की फिक्र पड़ी हुई है। वह चाहें प्रजा को चक्की में पीस ही क्यों न डालें, सरकार उन्हें मना न करेगी। वह भी उल्टे सह देती है। सरकार को अपने कर से मतलब है। प्रजा मरे या जिये, उससें कोई प्रयोजन नहीं। भैरोगंज का सारा इलाका लूटा जा रहा है। मरता क्या न करता किसान भी घर–बार छोड़–छोड़ कर भागे जा रहे है। एक किसान के घर में घुस कर कई कांस्टेबलों ने उसे पीटना शुरू किया। बेचारा बैठा मार खाता रहा। उसकी स्त्री से न रहा गया। शामत की मारी कांस्टेबलों को कुवचन कहने लगी। बस एक सिपाही ने उसे नंगा कर दिया। किसान से जब्त न हुआ। बेचारा बेदम पड़ा हुआ था। स्त्री का चिल्लाना सुन कर उठ बैठा और उस दुष्ट सिपाही को धक्का देकर जमीन पर गिरा दिया। एक किसान किसी पुलिस के आदमी के साथ इतनी बे अदबी करे, इसे भला वह कहीं बरदाश्त कर सकती है। सब कांस्टेबलों ने गरीब को इतना मारा कि वह मर गया।''[5]

जमींदार लगान वसूल करने में जोर जबरदस्ती और अन्याय अत्याचार करते। कृषकों की चीख–पुकार इनके कानों में कोई प्रभाव

Created by Universal Document Converter

न डालती। उपदेश, बलिदान, मुक्तिमार्ग, सभ्यता का रहस्य, मुक्तिधन तथा सवा सेर गेहूँ आदि कहानियों में प्रेमचंद ने ये संकेत किया है कि अभाव–ग्रस्तता भारतीय कृषक की सबसे बड़ी विवशता है। कृषि और लगान की समस्या किसान को दिन–दिन घेरे रहती है।

अपेक्षित खेती न होने पर भी लगान भरना किसान की विवशता है। 'किसानों का कर्जा' लेख में प्रेमचंद कहतें हैं कि – ''यदि प्रांतीय कौंसिल में सरकार किसानों के हित के लिए कोई कानून बनाना चाहती है। तो जनता के प्रतिनिधियों को चाहिए कि वे सरकार का समर्थन करे।

(1) उचित मात्रा में लगान घटा दिया जाए। लगान माफी या किश्त–बंदी का तरीका चलाया जाए। भूमि–कर जमींदार की वास्तविक वसूली के हिसाब से लगाया जाए; न कि उसकी वसूली की संभावना पर।

(2) जमींदारों को उनकी जिम्मेदारी सिखलानी चाहिए तथा जायज वसूली से अधिक वसूली करने की आज्ञा उन्हें नहीं देनी चाहिए।

(3) किसानों का मौजूदा कर्जा जहाँ तक हो, काट दिया जाए और कानून बना कर सूद की दर तय कर दी जाए। साहूकारों को बही खाता रखने के लिए बाध्य किया जाए तथा उन्हें केवल किसान को खरीद लेने के लिए रूपया देने से रोका जाए।

(4) सरकारी अफसरों को किसानों से नाजायज वसूली से रोका जाए और उससें रूपया बचाकर बहुत ही कम वेतन पाने वाले सरकारी कर्मचारियों का वेतन बढा दिया जाये।''[6] प्रेमचंद नें 1919 में कानपुर से प्रकाशित होने वाले उर्दू मासिक 'जमाना' में 'पुराना जमाना : नया जमाना' लेख लिखा – ''आने वाला जमाना अब किसानों और मजदूरों का है। दुनिया की रफ्तार इसका साफ सबूत दे रही है। हिन्दुस्तान इस हवा से बेअसर नहीं रह सका। हिमालय की चोटियाँ उसे इस हमले से नहीं बचा सकती। जल्द या देर से, शायद जल्द ही, हम जनता को केवल मुखर ही नहीं अपने अधिकारों की मांग करने वाले के रूप में देखेगें। इन्कलाब कें पहलें कौन जानता था कि रूस की पीड़ित जनता में इतनी ताकत छिपी हुई है।''[7] इस लेख में प्रेमचंद पुराने सामंती जमाने की कड़ी आलोचना तथा पूंजीवादी जमाने की बुराइयों को सामने लाते है। खेतों की लगान की अधिकता ही किसान को ऋण लेने के लिए मजबूर करती है। इसलिए महाजनी शोषण भी सामन्ती शोषण का ही रूप है, जो उपनिवेशवादी दौर में खूब फला फूला। लगान किसान के शोषण का कानूनी रूप है, इसकें अतिरिक्त शोषण का परम्परागत रूप भी है, जो भारतीय किसान सदियों से झेलता आया है। उत्पादन में जमींदार की कोई भूमिका नहीं होती फिर भी वह ठाट–बाट सें रहता है। न केवल वह अपितु उसके नाते–रिश्तेदार भी कोई काम नहीं करते और किसानो पर तरह–तरह के अत्याचार करते रहते है। डॉ० रामबक्ष शोषित वर्ग की ओर ध्यानाकर्षित करतें हैं और किसानों की दिन–दिन गिरती हुई स्थिति के लिए जिन दो प्रमुख शक्तियों को दोषी मानतें हैं वे जमींदार एवम् महाजन है। वे कहते हैं कि – ''प्रेमचदं ने दिखाया है। किसान खेतिहर मजदरू और बंधुआ मजदूर बनते जा रहे हैं और यह उनके भाग्य का दोष नहीं है, बल्कि इस समाज–व्यवस्था में कुछ ऐसी सामाजिक शक्तियाँ है, जो इसके लिए जिम्मेदार है। जमींदार और महाजन कभी अलग–अलग और कभी मिलकर किसान को इस हालत में पहुँचा रहे है।''[8]

किसानों का प्रेमचंद के लेखन के साथ कुछ वैसा ही रिश्ता है। जैसा सांसों का जिन्दगी के साथ होता है। प्रेमचंद अपने समय के संभवतः अकेले ऐसे रचनाकार थे जिन्होंने हिन्दुस्तान के समाजशास्त्र और अर्थशास्त्र दोनों को ठीक सें समझा था। उनकी यही समझ उन्हें किसानों–दलितों और स्त्रियों कें पक्ष में खड़ा करती है। 'मुरली मनोहर प्रसाद सिंह के अनुसार – ''प्रेमचंद को भारतीय किसान जीवन का गहरा ज्ञान था। वे किसानों की चेतना के बहुत गिरे स्तर का विश्वसनीय यथार्थ चित्र तो पेश करते ही हैं, साथ ही साथ अपने युग के किसानों को वर्गहित तथा मान–अपमान के प्रश्न पर प्रतिकार, संघर्ष और संगठित प्रतिरोध की दिशा में हरकत करते हुए भी दिखलाई देतें है।''[9]

'सवा सेर गेहूं' कहानी में प्रेमचंद ने सूदखोर पूंजी की विडम्बनापूर्ण स्थिति को उद्घाटित किया है। शोषक शक्तियाँ विविध रूपों में किसानों का शोषण करती है। इसमें एक ओर जमींदार और उसके कारिन्दे हैं तो दूसरी ओर गांव के महाजन व सूदखोर पंडे–पुरोहित व दौरों पर आने वाले कर्मचारी है, जिनका पेट भरते–भरते किसान दम तोड़ देता है।

कहानी में शंकर, घर आए महात्मा को भोजन कराने के लिए विप्रजी से सवा सेर गेहूँ कर्ज ले आता है। कर्ज का गेहूँ उतारने के लिए किसान मृत्युपर्यन्त अर्थात् दो दशकों तक निरन्तर मजदूर की यातना झेलता है। किन्तु ऋण सें ऋण नहीं हो पाता। शंकर कहता है कि – ''चैत में जब विप्रजी पहूंच तो उन्हें डेढ़ पंसेरी के लगभग गेहूँ दे दिया और अपने को ऋण समझकर उसकी कोई चरचा न की। विप्रजी ने भी फिर कभी न मांगा। सरल शंकर को क्या मालूम था कि यह सवा सेर गेहूँ चुकाने के लिए मुझे दूसरा जन्म लेना पडेगा। सात साल गुजर गए। विप्र भी विप्र से महाजन हुए, शंकर किसान से मजूर हो गया।

एक दिन शंकर मजूरी करके लौटा, तो राह में विप्रजी ने टोककर कहा – शंकर, कल आकर के अपने बीज बेंग का हिसाब कर ले। तेरे यहाँ साढे पांच मन गेहूँ कब से बाकी पड़े हुए हैं और तू देने का नाम नहीं लेता, हजम करने का मन है। क्या?''[10]

महाजन किसानों के साथ जो क की तरह चिपके हुए है। वह इनसे छुटकारा पाने की जितनी कोशिश करता है। वह उसमें उतना ही उलझता जाता है। उसके हल–बैल, खेत सब कुछ कर्ज की भंटे चढ़ जाते हैं और आखिर में वह किसानी भी नहीं रहती, जिसे बचाने के लिए वह अपना सब कुछ लुटा देता है। शंकर, चकित होकर विप्रजी से कहता है कि – ''मैंने तुम से कब गेहूँ लिए थे जो साढ़ें पांच मन हो गए। तुम भूलते हो मेरे यहाँ किसी का छटाक भर न अनाज

Created by Universal Document Converter

है, न एक पैसा उधार।''

विप्र – ''इसी नीयत का तो यह फल भोग रहे हो कि खाने को नहीं जुडता।''

यह कहकर विप्रजी ने उस सवा सेर गेहूँ का जिक्र किया जो आज से सात वर्ष पहले शंकर को दिए थे। शंकर सुनकर अवाक रह गया। ईश्वर मैंनें कितनी बार खलिहानी दी, इन्होंने मेरा कौन सा काम किया? जब पोथी–पत्रा देखने, साइत सगुन विचारने द्वार पर आते थे कुछ न कुछ दक्षिणा ले ही जाते थे।

इतना स्वार्थ! सवा सेर अनाज को अंडे की भांति से कर आज यह पिशाच खड़ा कर दिया, जो मुझे निगल जाएगा। इतने दिनों में एक बार भी कह देते तो मैं गेंहू घौलकर दे–देता, क्या इसी नीयत सें चुप साधे बैठे रहे? बोला–महाराज, नाम लेकर तो मैंने उतना अनाज नहीं दिया, पर कई बार, खलिहानो में सेर–सेर, दो–दो सेर दे दिया है। अब आप आज साढ़ें पांच मन मांगते हैं, मैं कहाँ से दूँगा?''[11] डॉ० रामविलास शर्मा ने सूदखारे पूंजी को पूंजी का सबसे पुराना, क्रूर और बर्बर रूप माना, वह खाते–पीते किसान को मुफलिस और मुफलिस को गुलाम बनाकर छोड़ती है।''[12]

'सवा सेर गेहूँ' कहानी महाजनी शोषण के क्रूरतम रूप को अभिव्यंजित करती है। प्रेमचंद ने वर्तमान युग को अर्थ प्रधान युग और उसके आधार पर धनिकों (शोषको) द्वारा शोषण का युग माना है। इसी के आधार पर नई सभ्यता को उन्होंने उचित ही 'महाजनी सभ्यता' का नाम दिया है, जिसमें सारे कामों की
गरज महज पैसा होती है। वें कहतें हैं – ''मनुष्य समाज दों भागों में बंट गया है। बड़ा हिस्सा तो मरने और खपने वालों का है और बहुत ही छोटा हिस्सा उन लोगों का जों अपनी शक्ति और प्रभाव से बड़ें समुदाय को अपने बस में किये हुए है। इन्हें इस बडे भाग के साथ किसी तरह की हमदर्दी नहीं; जरा भी रूरियायत नहीं। उसका अस्तित्व केवल इसलिए है कि अपने मालिकों के लिए पसीना बहाए, खून गिरायें और एक दिन चुपचाप इस दुनिया से विदा हो जाए।[13]

प्रेमचंद ने दिखाया है कि दुर्बल, पराधीन धर्म भीरू और अपनी भूमि के लिए प्राण देने वाला किसान जमींदारो, महाजनो, ब्राह्मणों, तरह–तरह के कारिन्दों, कर्मचारियों और पुलिस वालों सें भी परेशान रहता है।

किसान बेचारा भूमि का स्वामी न होने पर भी इतना सरल और भावुक था कि किसानी को मान–मर्यादा समझ कर मजदूरी को अपमान मानता था। अपनी भूमि से वह इतना प्रेम करता था कि जीते जी उसे छोड़ता नहीं था। उसके इसी भूमि प्रेम के कारण जमींदार, महाजन और बनिए उसे खूब लूटते हैं। 'बलिदान' कहानी में गिरधारी अपने पिता की मृत्यु के बार जमींदार को उसकी इच्छानुरूप नजराना न दे पाने की स्थिति में खेत से हाथ धो बैठता है। जमींदार ओंकारनाथ गिरधारी से स्पष्ट कहता है कि – ''तुम समझते होगें कि हम ये रूपये लेकर अपने घर में रख लेते हैं और चैन की वंशी बजाते हैं। लेकिन हमारे ऊपर जो गुजरती है, हमी जानतें है।

जिसे डाली न दो, वहीं मुंह फुलाता है।

अगर न करूं तो

नक्कू बनूं और सब की आंखों में कांटा बन जाऊँ।

हमें तों परमात्मा ने इसलिए बनाया है कि एक से रूपया सता कर लें और दूसरे कोंरों–रोकर दें, यहीं हमारा काम है। तुम्हारें साथ इतनी रियायत कर रहा हूँ। लेकिन तुम इतनी रियायत पर भी खुश नहीं होतें तो हरि इच्छा। नजराने में एक पैसें की भी रियायत न होगी। अगर एक हफ्तें कें अंदर रूपयें दाखिल करोगें तों खेत जोतनें जाओगे, नहीं तो नहीं।

इस तरह एक हफ्ता बीत गया और गिरधारी रूपयों का कोई बंदोबस्त नहीं कर सका। आठवें दिन उसें मालूम हुआ कि कालिकादीन ने सो रूपये बीघे नजराने देकर दस रूपये बीघे पर खेत ले लिए।''[14]

दुनिया के छल प्रपंचों से अनभिज्ञ यह कृषक निरन्तर महाजनों के शिकंजे में फंस ता ही चला गया; जिससें निकलना उसके लिए ही नहीं अपितु अग्रिम पीढ़ी के लिए भी कठिन हो गया। गांव में महाजन अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक सम्पन्न होते थे। किन्तु धीरे–धीरे ग्रामीण जनता भी इनके हथकंडों को समझने लगी थी जिससे किसान के हृदय में धीरे–धीरे महाजन के प्रति क्षोभ जागृत होने लगा। 'विध्वंस' कहानी में प्रेमचंद ने बेगारी प्रथा का मार्मिक चित्रण किया है। कहानी की नायिका भुनगी बेगार में जमींदार उदयभानु पाण्डे का चना समय पर नहीं भून पाती है। जमींदार इसे अपना अपमान समझते हुए उसका भाड़ खुदवा कर फिकवा देता है। वह फिर बनाती है। तो जमींदार उसके नाद पर लात चलाता है। जो उसकी कमर पर लगती है। बुढिया झुकने की बजाय तन कर विरोध में खड़ी हो जाती है। जमींदार उससें गांव छोड़ने को कहता है। तो भुनगी, बलिदान के गिरधारी की अपेक्षा उसे चुनौती देते हुए कहती है कि – ''क्यों छोड़कर निकल जाऊँ? बारह साल खेत जोतने से असामी काश्तकार हो जाता है। मैं तो इस झोंपडे में बूढी हो गयी। मेरे सास ससुर और उनके बाप–दादे इसी झोंपडे में रहे। अब इसे यमराज को छोड़कर और कोई मुझसे नहीं ले सकता।''[15] भुनगी सामंती व्यवस्था को चुनौती देती है और अपने कथन को सत्य सिद्ध करती हुई जमींदार द्वारा आग लगाए जाने पर उसी में कूदकर जान दे देती है। आग की चपेट में पूरा गांव आ जाता है। जमींदार का घर, परिवार भी जलकर भस्म हो जाता है। प्रेमचंद विध्वंस कहानी में भुगनी के आक्रोश को उजागर करती आग का चित्रण करते हुए कहते हैं कि – ''ज्वालाएं और भड़की और पंडित जी के विशाल भवन को दबोच बैठी। देखते ही देखते वह भवन उस नौका की भांति जो उन्मत्त तरंगों के बीच में झखोरेखां रही हो, अग्नि सागर में विलीन हो गया और वह क्रंदन ध्वनि जो उसके भस्मावशेष में प्रस्फुटित होने लगी, भुनगी के शोकमय विलाप से भी अधिक करूणाकारी थी।''[16] जो आग गरीबों को जलाती है, वही आग लगाने वालों को भी तहस–नहस कर देती है। उस शोषक व्यवस्था को जड़मूल से साफ कर देती है।

Created by Universal Document Converter

बेगार प्रथा के कारण केवल किसान ही नहीं अपितु नाई, धोबी, जुलाहे आदि भी त्रस्त है।

प्रेमचंद ने समाज के उस वर्ग की पीड़ा और वेदना को स्वर प्रदान करने में सहायता की है। जो शोषण, उत्पीडन के कारण मौन हो गयी थी। किसान और मजदूर भारतीय समाज के प्रमुख अंग है, इसलिए प्रेमचंद ने इनकी व्यापक चर्चा अपने कथा–साहित्य में की है। समाज में इन मेहनतकश लोगों की उपेक्षा प्रेमचंद सहन नहीं कर सके, इसका शोषण अंग्रेजी सरकार करती है, जमींदार और कारिन्दा करता है।

समाज में इनका समर्थन कोई नहीं करता यह असंगठित अवस्था में है। प्रेमचंद इस किसान और मजदूर के हिमायती रचनाकार है।''[17] प्रेमचंद की दृष्टि, सवा सेर गेहूं के शंकर, बलिदान के गिरधारी, मुक्ति के मार्ग के झींगुर, पूस की रात के हल्कू पर लगातार टिकी रही है। प्रेमचंद ने केवल उन्हीं किसानों की हिमायत की है। जो लघु सीमान्त कृषक है। बडें–बड़ें फार्म वालें किसानों के प्रति उनकी सहानुभूति बिल्कुल नहीं है क्योंकि यह किसान तो जमींदारों की श्रेणी में गिने जाते है। किसान वर्ग प्रेमचंद की चिंताओं में शीर्ष पर है।

प्रेमचंद किसान की समस्या के एक–एक विवरण को सर्वाधिक सफलता के साथ प्रस्तुत करते हैं। 8 मई 1933 के जागरण में प्रेमचंद ने 'जबर्दस्ती' लेख में किसानों की दयनीय दशा का चित्रण करते हुए लिखा कि – ''भारतीय किसानों की इस समय जैसी दयनीय दशा है। उसे कोई शब्दों में अंकित नहीं कर सकता। उनकी दुर्दशा को वे स्वयं जानते हैं या उनका भगवान जानता है। जमींदार को समय पर मालगुजारी चाहिए; सरकार को समय पर लगान चाहिए, खाने के लिए दो मुट्ठी अन्न चाहिए, पहनने के लिए एक चिथड़ा चाहिए, चाहिए सब कुछ पर एक ओर तुषार तथा अति–वृष्टि फसल को चौपट कर रही है, एक ओर आंधी उनके रहे–सहे खेत को भी नष्ट कर रही है, दूसरी ओर रोग, प्लेग, हैजा, शीतलता उनके नौजवानों को हरी भरी तथा लहलहाती जवानी में उसी तरह दुनिया से उठाए लिए चली जा रही है, जिस तरह लहलहाता खेत छः दिन पूर्व के पत्थर पाले से जल गया। गल्ला पैदा हो रहा है; पर भाव इतना मंदा है कि कोई दो वक्त भोजन भी नहीं कर सकता। स्त्री के तन पर दो–चार गहने थे, वे साहूकार के पेट से बचकर सरकार की मालगुजारी के पेट में चले गए। नन्हें बच्चे जो चीथड़ा ओढकर जाड़ा काटते थे, वहीं उनका पिता पहन कर अपने तन की लाज ढक रहा है। माता के पास केवल इतना वस्त्र है। जितने से वह घूंघट तक काढ़ सके–धोती चाहे ठेहुने तक ही क्यों न खसक आए।''[18]

किसान अपने समस्त सुखों को तिलांजलि दे निरन्तर कार्यरत रहते, सारे दिन परिश्रम करते, पिसते क्योंकि पिसना तो विधाता ने उनके भाग्य में लिख दिया है, उनकी हस्त रेखाओं में सुख की रेखाएं न थी अतः उन्हें अपने इसी दयनीय जीवन से संतोष हो जाता। जीवन में न कोई आशा थी न कोई उमंग तथा उल्लास। उनके जीवन की प्रसन्नताओं के स्त्रोत सूख चुके थे। जीवन की प्रसन्नताएँ अभिजात तथा उसके सहयोगी वर्ग को समर्पित हो चुकी थी। खलिहानों में अनाज होने पर भी इनको प्रसन्नता नहीं होती क्योंकि उस पर तो जमींदार, महाजन तथा सरकारी अधिकारियों का अधिकार है। भारतीय कृषक इन ऋण–दाताओं के मध्य अपना अन्धकारमय जीवन व्यतीत करता हुआ एकदिन इस संसार से विदा हो जाता है और उसके परिश्रम का आनंद यह अभिजात वर्ग उठाता है। अपने समकालीन लेखकों में प्रेमचंद अकेले ऐसे बुद्धिजीवी लेखक थे जिन्होंने किसानों की छोटी से छोटी समस्या को केन्द्रित करके लिखा और लोगों तथा सरकार का ध्यान आकृष्ट किया।

डॉ० रामविलास शर्मा के शब्दों में– ''हर कोई जानता है कि प्रेमचंद ने समाज के सभी वर्गो की अपेक्षा किसानों के चित्रण में सबसे अधिक सफलता पाई है। किसानों के सम्पर्क में आने वाली शोषण की जंगी मशीन के हर कल–पूर्जे से वे वाकिफ थे।''[19]

निष्कर्ष : वस्तुतः कहा जा सकता है कि आज भी किसानों की स्थिति दयनीय है, वे छोटे–छोटे सुखों के लिए मोहताज है। शोषण से त्रस्त किसान आत्महत्या कर रहें हैं। किसानों की दशा, आज भी दयनीय है।

संदर्भ –

1. रामविलास शर्मा, प्रेमचंद और उनका युग, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं0 2016, पृ0 134
2. सं० रामआनंद, प्रेमचंद रचनावली–14, जनवाणी प्रकाशन, दिल्ली 1996, पृ0 351
3. रजनीपाम दत्त (अनु0 ओमप्रकाश संगल) भारत : वर्तमान और भावी, पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1976, पृ0 97
4. प्रेमचंद रचनावली–14, पृ0 447
5. वहीं, पृ0 447
6. प्रेमचंद रचनावली–8, पृ0 368
7. प्रेमचंद रचनावली–7, पृ0 197
8. प्रो० रामवक्ष, प्रेमचंद और भारतीय किसान, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 1982, पृ0 209
9. सं० प्रो० मैनेजर पाण्डेय, आंच–7, पृ0 25
10. सं० कमल किशोर गोयनका, प्रेमचंद सम्पूर्ण दलित कहानियाँ, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र0सं0 2014, पृ0 207
11. वहीं, पृ0 208
12. डॉ० रामविलास, प्रेमचंद और उनका युग, पृ0 228
13. सं० अमृतराय, प्रेमचंद स्मृति, पृ0 257
14. प्रेमचंद रचनावली–12, पृ0 94
15. वहीं, पृ0 304
16. वहीं, पृ0 305
17. आलोचना, अंक 51–52, जनवरी–मार्च 1980, पृ0 66
18. प्रेमचंद रचनवाली–8, पृ0 313
19. रामविलास शर्मा, प्रेमचंद और उनका युग, पृ0 177

डॉ० सुमन देवी पुत्री श्री राजेन्द्र प्रकाश
मकान नं0 1731, सैक्टर–4 (Ext. Part)

Created by Universal Document Converter

झोलाछाप चिकित्सा 'एक समस्या' एवं समाधान

7

महीपाल सिंह

सारांश : '' भारत गावं का देश है'' अथवा'' भारत गावं में वस्ता है'' यह उक्ति इस लिये सार्थक प्रतीत होती है क्योकि भारत की जनसंख्या का लगभग (72.20 प्रतिशत) भाग आज भी गांव में निवास करता है। भारतीय ग्रमीण जन वर्तमान में भी शिक्षा ,सुरक्षा, चिकित्सा एंव स्वास्थ्य आदि सभी स्तर्रों पर पिछड़े हुये है। इनके इस पिछड़ेपन के– कारकः सामाजिक, आर्थिक, व्यवसायिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक आदि विशेष रूप से उत्तर दायी है। यह र्निविवाद सत्य है।कि प्राचीन समय में चिकित्सा व्यवस्था पूर्णतयः आयुर्वेद पर आधारित थी। आयुर्वेद पर आधारित चिकित्सा व्यवस्था (पद्धति) पूर्ण विकसित, तथा जनसामान्य को आसानी से सुलभ तो होती ही थी साथ ही तत्कालीन चिकित्सकों मे उत्तर दायित्व। बोध की भावना भी प्रबल थी।

अतः समाज के सभी वर्गों एंव समुदायों को आसानी से चिकित्सा एंव स्वास्थ्य सेवाऐं उपलब्ध हो जाती थी। लेकिन वर्तमान समय मे बदलते सामाजिक प्रतिमान एंव मूल्यों के कारण इस पद्धति मे गिरावट आयी और यूनानी व ऐलोपैथी चिकित्सा ने अपने प्रभाव और प्रसार मे काफी व्यापकता प्रात की है। लेकिन बदलते सामाजिक मूल्यों एंव जीवन के प्रति लोगो के दृष्टिकोणों ने इस पद्धति को जन सामान्य की पहुॅच से वाहर कर दिया। यह सर्वविदित सत्य है। कि उचित स्वास्थ्य मानव जीवन की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। इसलिए स्वास्थ्य व चिकित्सा सम्बन्धी दशाओं व आवश्यकताओं सम्बन्धी पहलुओं की उपेक्षा नही की जा सकती है। चिकित्सासमाजशास्त्र समाजशास्त्र की नई शाखा होने के कारण हमें इसके समाजशास्त्रीय तथा व्यवहारिक महत्व को समझना होगा। वर्तमान में चिकित्सा समाजशास्त्र का महत्व निरन्तर बढ़ रहा है। क्यों कि आज चिकित्सा एंव स्वास्थ्य को राष्ट्रविकास की मूल आवश्यकता माना जा रहा है। हमें स्वास्थ्य एंव चिकित्सा सम्बंधी समस्याओं पर चिन्तन करना होगा। यह चिन्तन सामाजिक चिन्तकों, विचारकों तथा समाजशास्त्रीयों की भूमिका को और भी महत्वपूर्ण वना देता है।

स्वास्थ्य एंव चिकित्सा के क्षेत्र मे अल्पज्ञान, अप्रशिक्षित, (झोलाछाप चिकित्सकों) स्वास्थ्य जैसे महत्वपूर्ण पहलू के प्रति चिकित्सा कार्य करने सम्बन्धी स्थिति के ऋणात्मक प्रभावों से अवगत कराने को यर्थाथ रूप देना अस्वस्थ्यता को काफी कम कर सकता है।

शोधकर्ता– ने झोलाछाप चिकित्सा कार्य से समाज मे जहॉ स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं मे कमी आने की जगह मरीज और अधिक गम्भीर स्थितियों में पहुॅच जाते है। क्यों की अधिकांश ग्रामीण जन योग्य व अयोग्य चिकित्सकों मे अन्तर भी नही कर पाते साथ ही झोला छाप चिकित्सकों को चिकित्सा का पूर्ण ज्ञान भले ही न हो लेकिन वे मरीजों के साथ सद्व्यवहार व सस्ती चिकित्सा के कारण मरीजो को अपने जाल मे आसानी से फॉंस लेते हैं। साथ ही सरकारी चिकित्सकों का मरीजों के साथ सद्व्यवहार न पाया जाना इस स्वास्थ्य सम्बन्धी आवश्यकता को और अधिक जटिल वना देता है। यह ही नही कि आमजन समस्या ग्रास्त है। बल्कि स्वयं झोलाछाप चिकित्सक भी भय एंव समस्याग्रस्त है। उन्हे एक तो कानून के अनुसार अवैध तथा दूसरी ओर समय –समय पर चिकित्सा अधि ाकारीयों द्धारा धरपकड अभियान, साथ ही जीवन में अस्थिरता परिवार मे तनाव, व जीवन में अस्थिरता अधूरी शिक्षा, आय का निश्चित न होना, रोगी के स्तर से किसी कानूनी कार्यवाही का भय, आदि कारण उन्हे स्वयं समस्या ग्रस्त बना देते है।

झोलाछाप चिकित्साः– समाधान

1. उक्त समस्या के समाधान के सम्बन्ध में भोधकर्ता द्वारा निम्न सुझाव प्रस्तावित है–

1. चिकित्सा एवं स्वास्थ सेवाओं के सन्दर्भ में ग्रामीण जनों में राष्ट्रीय जागरूकता सम्बन्धी कार्यक्रमों का प्रचार–प्रासार किया जाना चाहिए। ताकि उनमें व्याप्त अज्ञानता एवं रूढि वादिता, सकीर्ण विचार धारायें समाप्त हो सके।
2. स्वास्थ्य शिक्षा को प्राथमिक स्तर से ही अनिवार्य रूप से पाठ्यक्रम से जोडा जाए ताकि छोटे–2 बच्चों में भी चिकित्सा एवं स्वास्थ्य, रोगों तथा निदान के सम्बन्ध में जानकारी सम्भव हो सके साथ ही वे योग्य और आयोग्य चिकित्सकों में अन्तर कर सके। क्यो कि आज के बच्चे कल का उगता भारत है।
3. पौढ सतत एवं समग्र साक्षरता कार्यक्रमों पर विशेष बल दिया जाए ताकि आम जनता विशेषकर ग्रामीण जब अशिक्षित तथा निरक्षर पौढ़ एवं वृद्ध, पुरूष एवं महिलाएं श्रम्रिकों एवं किसान सभी स्वास्थ्य शिक्षा के महत्व को समझ सकें।
4. स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सम्बन्धी कार्यक्रमों में संचार साधनों का प्रयोग किया जाये– यथा रेडियों, दूरदर्शन, समाचार पत्र– पत्रिकाऐं, इश्तहार, सचल सिनेमा फिल्में आदि के द्वारा जनस्वास्थ्य तथा रोगों से सम्बन्धित जानकारियों तथा बचाव हेतु उपाए वताये जाये।
5. पर्यावरण प्रदूषण से होने वाली सामान्य वीमारियों, संक्रामक रोगों तथा असहाय वीमारियों से सम्बन्धित जानकारियां प्रदान की जाये।
6. गर्भवती महिलाओं को प्रसवपूर्व तथा प्रसवोत्तर होने वाली वीमारियों से बचने के लिये उन्हे पौष्टिक एवं सन्तुलित आहार लेने सम्बन्धी विटामिन प्रोटीन कार्वोहाइड्रेट आदि पोषक तत्वों की जानकारी सम्भव हो सके ताकि स्वयं तथा नवजात को कुपोषण से बचाया जा सके।

Created by Universal Document Converter

7. टीकारण कार्यक्रमों को और अधिक व्यापक गतिशील एवं प्रभावशील बनया जाये।

8. प्रत्येक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र (पी.एच.सी) पर सचल अस्पतालों की व्यवस्था की जाये। जिससे दूरदराज के क्षेत्रों में रह रहे व्यक्तिओं की चिकित्सा हो सके और रोगी को समय रहते हुए झोलाछाप चिकित्साकों से बचाया जा सके।

9. ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सा तथा स्वास्थ्य सेवाओं में प्रर्याप्त दवाईयां तथा कर्मचारियों की संख्या जनसख्याा के अनुपात में सुनिश्चित की जाये।

10. प्रदेश, जिला,व तहसील स्तर पर मुख्य स्वास्थ्य चिकित्सा (सी.एच.पी.) सहायता नंम्बर वनायी जाये जिससे स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सम्बन्धी अधिकारी व कर्मचारी के अनुपस्थित होने या सही कार्य न करने की दशा में शिकायत दर्ज करा सकें।

11. सरकारी चिकित्सकों की निजी प्रैक्टिस को पूर्णतयः प्रतिबन्धित किया जाए ताकि वे अपनी सेवा रूचि पूर्वक पूर्ण निष्ठा के साथ कर सकें।

12. सरकारी चिकित्सकों एवं स्वास्थ्य कर्मियों की पदोन्नति सेवाकाल की जगह सेवाकाल के दौरान कुल रोगियों के किये गये उपचार की संख्या पर पदोन्नति दी जाये।

13. राष्टीय स्तर पर झोलाछाप चिकित्साकों को चिहित करने के उपरान्त उनके प्रति दण्डात्मक कार्यवाही की जानी चाहिए।

14. ग्रामीण स्तर पर ग्राम प्रधानों अथा अन्य किसी निर्वाचित व्यक्ति को भी झोलाछाप चिकित्सकों के सम्बन्ध में अपना प्रतिवेदन (रिर्पोट) सी.एच.सी. पर देने के लिये जिम्मेदारी दी जाये जिससे उनकी जवाव देही बन सके।

निष्कर्ष : अतः में मै कहना चाहूंगा कि ग्रामीण अंचलों में चिकित्सा एवं स्वास्थ्य समस्याओं से सम्बन्धित विभिन्न प्रकरणों तथा पहलुओं पर अधिकाधिक शोधकार्य करने हेतु समाज वैज्ञानिकों को प्रोत्साहित जाये संगोष्ठियों को आयोजन किया जाये उक्त झोलाछाप चिकित्सा एक समस्या के सन्दर्भ में जो सुझाव उसके निराकरण हेतु प्रस्तुत किय गये है उन पर व्यवहारिक अमल किया जायेगा ऐसा मुझे विश्वास है।

सन्दर्भ सूची–

1. वर्ष 20 अंक 165 प्रष्ठ 15 दैनिक जागरण बरेली 25 फरवरी 2009

2. पार्क एण्ड पार्कः प्रीवेन्टिव एण्ड सोशल मेडिसनः एक्कीटाइज ऑनहैल्थ कम्यूनिटी 198:560

3. विश्व स्वास्थ्य संगठन प्रतिवेदन वर्ष 1993–94 (उद्धत सामाजिक सहयोग राष्ट्रीय मासक पत्रिका वर्ष 4 अंक 13 जनवर,फरवरी,मार्च, 1995 उज्जैन म.प्र. प्रष्ठ 35

4. अग्रवाल एस.के. जियो इकोलॉजी ऑफ माल न्यूडिशन, इण्टर इण्डिया पब्लिकेशन प्रा.लि.नई दिल्ली सन 1969 प्रष्ठ 20

5. 26 जुलाई2007 पेज न. 2 दैनिक जागरण वेरली (संस्करण वरेली।)

6. महीपाल सिंह शोध ग्रन्थ वरेली जनपद के ग्रामीण क्षेत्रों की चिकित्सा तथा स्वास्थ सेवाओं में झोलाछाप चिकित्सकों की भूमिका का समाजशास्त्रीय अध्ययन वर्ष 2010 पेज नं. 219,220,221, 222,233,234,235,236 प्रकाशन जफरवेज जैन कम्प्यूटर शाहमत गंज बरेली।

महीपाल सिंह

प्रकाशन जफरवेग जेन कम्प्यूटर शहमत ंगज बरेली।

उ.प्र.

Created by Universal Document Converter

हिन्दी साहित्य और हरियाणवी कवियों का सम्बन्ध

सारांश : एक हरियाणवी होने के नाते हमारे लिए यह एक सुखद अहसास है कि हिन्दी में साहित्य सृजन का श्री गणेश हरियाणा की पावन धरा से हुआ और साहित्य के विकास में लगातार योगदान देते रहे हैं; संवत् 1015 के आसपास अपभ्रंश के अंतिम और पुरानी हिन्दी के प्रथम कवि के रूप में पुष्पदत्त का नाम लिया जाता है। इनका सम्बन्ध हरियाणा के रोहतक से था, इनके बाद हरियाणवी कवियों की एक लहर शुरू हुई जो अब तक हिन्दी साहित्य को उन्नत करने का सराहनीय काम कर रही है। हरियाणवी कवियों ने हिन्दी साहित्य की दशा व दिशा निर्धारण में अपना योगदान किया है;

मुख्य शब्द : हरियाणवी समाज, पर्दाप्रथा, जनवादी, प्रतिनिधि, सगुण।

हरियाणा की प्राचीन सभ्यता व संस्कृति बड़ी गौरवशाली रही है, हरियाणा को विश्व के पहले गणराज्य की जन्मभूमि होने का गौरव हासिल है। हरियाणा की साहित्यिक परम्परा सरस्वती नदी के किनारे वेदों की रचना से आरम्भ होती है। वेद व्यास द्वारा महाभारत की रचना भी यहीं से शुरू हुई थे। मार्कण्डेय, पण्डित लख्मीचंद, हाली पानीपती, संतोखसिंह, सूरदास, गरीबदास, जैतराम, रामस्वरूपदास, निश्चलदास आदि के दिखाये मार्ग पर चलकर यहाँ तक पहुँचा है। इसी धरा पर वेदों, पुराणों व उपनिषदों की रचना हुई। हरियाणा के सूरदास का जन्म वल्लभगढ़ के पस ब्रज की और एक गांव सीही में हुआ था। उन्होंने हिन्दी साहित्य इतिहास में हरियाणा की माटी को स्वर्ण अक्षरों में दर्ज करवाया है और आज तक कोई भी कवि या लेखक उनके लिखे वात्सल्य व रीति–काव्या की छाया भी छू नहीं पाया है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल कहा, '' य़द्यपि सुर का काव्यक्षेत्र इतना व्यापक नहीं कि उसमें जीवन की भिन्न–भिन्न दशाओं का समावेश हो, इस पर परिमित पुण्यभूमि में उनकी वाणी ने संचरण किया। उसका कोई कोना अछूता न छूटा। श्रृंगार व वात्सल्य के क्षेत्र में जहां तक इनकी दृष्टि पहुंची वहां तक और कोई किसी कवि की नहीं। तुलसीदास जी ने गीतावली में बाललीला को इनकी देखादेखी बहुत विस्तार दिया पर उसमें बालसुलभ भावों और चेष्टाओं की वह प्रचुरता नहीं आयी। जो सूरदास जी के चित्रण में है। उन्होंने बालक चेष्टा के स्वाभाविक मनोहर चित्रों का बहुत बड़ा भंडार हमें प्रदान किया है।''[1]

हरियाणा के प्रथम सूफी कवि शेख मुहम्मद तुर्क थे। उन्होंने हरियाणा समाज व साहित्य में सूफीवाद की मिठास घोल दी।

राजराम शास्त्री ने सूफी संत हजरत खैरूशाह की अनमोल रचना बाहरमासा की खोज की। हरियाणा की ''धरती का स्वर्ग कहा गया है।'' दिल्ली के निकट खुदाई में प्राप्त एक प्राचीन शिलालेख के अनुसार सरस्वती नदी जो हरियाणा में बहती थी (विष्णु की जिह्वा और ब्रह्म की पुत्री कहा गया है)।

हिन्दी बारहमासा साहित्य परम्परा में हरियाणा के मृगेन्द्र एक अद्वितीय कवि है उन्होंने पांच बारहमासों की रचना की, हरियाणा के शंभु दास को चौबिसमासा के लिए याद किया जाता है।

हिन्दी साहित्य में ज्ञानमार्गी संतकाव्य धारा में हरियाणा प्रदेश के प्रमुख संत कवि नित्यानंद का भी काफी योगदान है। इनका समय तो रीतिकालीन था लेकिन इनके काव्य की प्रवृतियां सीधे तौर पर कबीर आदि संत कवियों से मिलती है। अन्य संत कवियों की भांति इनके जन्मकाल की भी निश्चित जानकारी उपलब्ध नहीं हुई है। केवल इनके जन्मस्थान के विषय में कहा जाता है कि नारनौल में हुआ था। इनके बचपन का नाम नंदलाल था। नित्यानंद के गुरू संत गुमानीदास को इनका गुरू माना जाता है, रोहत जिले के माजरा गांव में इनकी याद में वार्षिक मेला लगता है जिसमें इनके जीवन की छह वस्तुओं को लोगों के दशर्नाथ रखा जाता हैं पलंग, चद्दर, गुदड़ी, लुटिया, कटोरी व खड़ाऊ।[2]

हरियाणा प्रदेश के रीतिकालीन साहिब सिंह मृगेन्द्र का नाम गिनाया जाता है। इनका जन्म 1800–1804 ई० के मध्य यमुनानगर के छोटे से कस्बे रादौर में हुआ था। पिता का नाम सरदार दीवानसिंह था। इनके पिता रणजीत सिंह लाहौर दरबार में ग्रन्थी रहे थे। इन्होंने कुछ समय कुरूक्षेत्र में भी बिताया।

''कवि म्रिगिंद या ते प्रथम रहत सदा कुरूक्षेत्र,
केवल क्रिया नींरदवर इत निवास को हेत्।।''

इनके लगभग 20 ग्रन्थ प्राप्त होते है जो नीति सम्बन्धी, इतिहास, पशु विज्ञान, व्याकरण सम्बन्धी, योग आदि सम्बन्धी है।[3]

हिन्दी साहित्य में महावीर प्रसाद द्विवेदी जी एक युग के प्रवर्तक थे। हिन्दी साहित्य में उनका कद काफी ऊँचा था। उन्होंने अपनी मौलिक व अनुदित रचनाओं के साथ साहित्य में एक आदर्श प्रस्तुत किया था। उनकी प्रेरणा से अनेक कवि ब्रजभाषा को छोड़ खड़ी बोली में काव्य रचना करने लगे थे। लेकिन उनकी बातों का तर्क पूर्ण खंडन करने का साहस हरियाणा प्रदेश के दो लेखकों ने किया था क्रमशः बाल मुकुन्द गुप्त व माधव प्रसाद मिश्र।

पं० माधव प्रसाद मिश्र जी (भिवानी कुंगड़ गांव) से अपना सम्बन्ध रखते थे। ये बड़े तेजस्वी, सनातन धर्म की रक्षा करने वाले और भारतीय संस्कृति की रक्षा के सतत् अभिलाषी विद्वान थे। इनकी लेखनी में बड़ी शक्ति थी जो कुछ लिखते थे बड़े जोश में लिखते थ। समालोचक सम्पादक गुलेरी जी ने इनके विषय में लिखा, ''मिश्र जी बिना किसी अभिनिवेश के लिख नहीं सकते। यदि हमें उनसे लेख पाने है तो सदा एक एक टंटा उनसे छेड़ ही रक्खा करें।''[4] सुदर्शन पत्रिका में माधव जी के लेख छपते रहते थे। इनका देश प्रेम भी बहुत गंभीर था। जब देशपूज्य मालवीय जी ने छात्रों को राजनीति आंदोलनों से दूर रहने को कहा तो इन्होंने बहुत क्षोभपूर्ण खुली चिट्ठी उनके नाम छापी।

बालमुकुन्द गुप्त (1865–1907) जिन्होंने समाज की सच्चाई

Created by Universal Document Converter

को अपनी पूरी ईमानदारी से व्यक्त किया। इनका जन्म रोहतक जिले के गुडवानी गांव में हुआ था। गुप्त जी ने सामाजिक और राजनीतिक परिस्थिति को लेकर कई मनोरंजक प्रबंध लिखे है। जिनमें शिव–शंभु का चिट्ठा बहुत प्रसिद्ध है। इनकी भाषा बहुत चलती, सजीव और विनोदपूर्ण होती थी। किसी भी प्रकार का विषय हो, गुप्त जी की लेखनी उस पर विनोद का रंग चढ़ा देती थी। वे पहले उर्दू के एक अच्छे लेखक थे। इसलिए उनकी हिन्दी बहुत फड़कती हुई होती थी। महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने जब सरस्वती भाग–6 संख्या 11 के अपने प्रसिद्ध कर दिया। जब आत्माराम नाम से उनके प्रयोगों की आलोचना की थी और द्विवेदी जैसे गंभीर प्रकृति वाले व्यक्ति खुली चुनौती देते हुए युक्तिपूर्ण उत्तर दिया। द्विवेदी जी को भी उनकी विनोदपूर्ण विगर्हणा के लिए ''सरगौनरक ठेकाना नाहि'' शीर्षक देकर बहुत फबता हुआ आल्हा कल्लू अल्हइत नाम से लिखना पड़ा।

आधुनिक काल में भी हरियाणा के अनेक कवि व लेखक अपनी लेखनी से हिन्दी साहित्य को समृद्ध कर रहे है। हरियाणा के वर्तमान साहित्य पर नजर डाली जाए तो यहां प्रगतिशील व जनवादी रचनाकारा थी। काफी संख्या में है और प्रमुख साहित्यकार के रूप में समाज में पहचान है। उनके साहित्य मूल्य सामाजिक सरोकार स्पष्ट तौर पर नजर आ रहा है। जैसे – '' ये बड़ा शहर गले सबको लगा है पर किसी शख्स को अपना नहीं होने देता।'' समाज को प्रभावित करने वाले हर पहलू पर प्रकाश डाला है चाहे वह दलित चेतना,स्त्री विमर्श, आतंकवाद या समाज से जुड़े पहलू है। समाज को बेहतर करने की चेष्टा और समाज को बदलने व बेहतर करने का संकल्प ही यथार्थ को उसकी जटिलता में प्रस्तुत करने की ओर ले जाता है।

निष्कर्ष : इन कवियों में मनमोहन, तारा पांचाल, जयपाल ललिता कार्तिकेय, रामकुमार आत्रेय, ब्रजेश कृष्ण, स्वदेश दीपक व दुध्नाथ सिंह आदि कवियों का नाम लिया जा सकता है। इनमें दुधनाथ सिंह (17.10.1939–12.1.2018) जब मैं हार गया। सब कुछ करके मुझे नहीं आ गई।

देशों में देश हरियाणा प्रसिद्ध कविता की रचना करने वाले उदयभानु हंस जिन्हें प्रथम राजकवि होने का गौरव प्राप्त था 26 फरवरी 2019 को उनका निधन हो गया।

स्वदेश दीपक (अगस्त 1942 अम्बाला छावनी हरियाणा) के नाटक कोर्ट मार्शल ने तो हिन्दी साहित्य में काफी धूम मचाई थी।

संदर्भ :–

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास – रामचन्द्र शुक्ल पृ० 125
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ० बहादुर सिंह, पृ० 305 माधव प्रकाश।
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास – डॉ० बहादुर सिंह, पृ० 314 माधव प्रकाश।
4. हिन्दी साहित्य का इतिहास – रामचन्द्र शुक्ल पृ० 351
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास – रामचन्द्र शुक्ल पृ० 354

लाजवन्ती,

गाँव चरमाड़ा, त० इसराना, जिला पानीपत, हरियाणा

शेष भाग ....

इस तालाबंदी में काम गया छूट।
प्रवासी मजदूरों का कमर गया टूट।
मालिक से मजदूरों का संबंध गया रूठ।
सरकार व मालिकों के वादे है झूठ।

जब तक है सांस तब तक है आस।
परिजनों से मिलने का गजब अहसास।
बढ़ देती है रोगरोधक और मन में विश्वास।
पर किंचित ना था यह आभास।
शहर से जब मैं घर आऊंगा,
गांव आने पर भी दुत्कारा जाऊंगा।

ममता कुमारी
विभाग हिंदी
डीएवी शताब्दी कॉलेज फरीदाबाद।
9818747616

Created by Universal Document Converter

पुनम रानी

'गीत चतुर्वेदी की कहानियों में सामाजिकता सामाजिक यथार्थ चित्रण

सारांश : साहित्य को सामाजिक प्रवृतियों का द्योतक मानने के साथ–ही–साथ साहित्य का पथ प्रदर्शक भी माना जाता है। वर्तमान का भारतीय परिदृष्य हम उस समय की कहानियों में पाते हैं। समाज से सम्बन्धित विशेषताएं ही कवि एवं कहानीकार को लोकप्रिय बनाती है। इससे उनके अध्ययन की दिशाएँ या परतें निश्चित हो जाती है। क्योंकि कला को साहित्यकार के निजी और व्यक्तिगत क्रिया–प्रतिक्रिया तक सीमित करने की बजाय सामूहिक जीवन के यथार्थ से सम्बन्धित होती है। साहित्यिक सामाजिक यथार्थ तक पहुँचने का माध्यम है। उसके उद्देश्यों का विस्तृत उल्लेख करता है। ''तुम्हें निगोड़ी शतरंज इतनी प्यारी है। चाहे कोई मर ही जाए, पर उठने का नाम नहीं लेते। नौज कोई तुम जैसा आदमी हो।'' यहाँ सामाजिक यथार्थ की स्थिति का स्पष्टीकरण हो जाता है।

सामाजिक यथार्थ का महज शब्दगत अर्थ यही है कि समाज में जैसा हो वैसा ही उसका चित्रण किया जाए। समाज में एक ओर स्वार्थ, ईर्ष्या, द्वेष, क्षुद्रता, मलिनता, कामुकता, दयनीय जीवन की स्थितियाँ, पारिवारिक प्रवृतियाँ, सामाजिक और आर्थिक वैशम्य, अन्ध संस्कार व कुरीतियां आदि शामिल होती है। इसके अलावा दूसरी और समाज ने स्नेह प्रेम, सदाचार की भावना, परोपकार की भावना आदि सदगुण भी पाए जाते हैं। इन सभी परिस्थतियों को प्रस्तुत करना या अभिव्यक्त करना ही सामाजिक यथार्थ है। सामाजिक यथार्थ से ही साहित्यकार की साहित्य में अभिरूचि पैदा होती है क्योंकि साहित्य का प्रयोजन किसी भी सत्य की वास्तविक परिस्थिति का चित्रण करना होता है। समाज में स्वच्छंद प्रेम प्रवृतियाँ भी पाई जाती है। प्राचीन समय में माता–पिता बेटे बेटियों की शादी के बारे में चिन्तित रहते थे, परन्तु वर्तमान समय में समाज में युवा वर्ग ने माता–पिता की चिन्ता को समाप्त कर दिया है। स्वयं बच्चे अपनी मर्जी से प्रेम विवाह करने लगे हैं। समाज में मजदूर वर्ग का शोशण भी सामाजिक यथार्थ की परिभाषा के अन्तर्गत समाहित किया जाता है। क्योंकि मजदूर वर्ग समाज का एक विशेष महत्वपूर्ण अंग है।

सामाजिक यथार्थ का चित्र अंकित करने वाला रचनाकार अपनी रचना में मानव सम्बन्धों की व्यंजना भी करता है। साहित्यकार भौतिक एवं सामाजिक समस्याओं का हल सामाजिक ज्ञान के आधारभूत उद्देश्यों में मानते हैं। सामाजिक यथार्थ के सम्बन्ध में डॉ० कृष्ण लाल हंस लिखते हैं – ''प्रत्येक समाज के बारे में संगठन और संचालन के लिए कुछ निश्चित नियमों की आवश्यकता होती है। ये नियम उस समय की स्थिति, विश्वास और धारणा पर आधारित होते हैं। उस समय नियमों में समानुसार परिवर्तन भी आवश्यक होता है। परिवर्तन के अभाव में ऐसे नियम समाज के लिए अहितकार सिद्ध होने लगते हैं और कलाकार एवं साहित्यकार इन नियमों के प्रभाव स्वरूप उत्पन्न सामाजिक स्थिति का यथार्थ चित्रण करना आवश्यक समझता है।'' सामाजिक यथार्थ के अनेक पहलू हैं, किन्तु हम निम्नलिखित पहलुओं के आधार पर सामाजिक यथार्थ का अध्ययन करेंगे।

परिवार

कवि गीत चतुर्वेदी की कहानियों में सामाजिकता का व्यापक स्वरूप दिखाई देता है। कवि ने अपनी कहानियों के माध्यम से आधुनिक जीवन एवं आम जन की स्थिति का बड़ा सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है। अपनी कहानी 'सावंत आन्टी की लड़कियां' आदि में परिवार की यथा स्थिति को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं ''जीवन देने वाला अवतारी ही तो होता है, जीवन लेने वाला भी।''

गीत चतुर्वेदी का मानना है कि परिवार समाज की आधारभूत इकाई है। सामाजिक संस्था में परिवार का स्थान सबसे ऊपर माना जाता है। क्योंकि परिवार में ही बच्चे का जन्म होता है। बच्चे को जन्म देने वाले माता–पिता एक अवतार के रूप में माने जाते हैं। परिवार समाज की मौलिक एवं सार्वभौमिक संस्था है। अतः समाज, किसी भी देश, राष्ट्र का, चाहे वह देश या राष्ट्र छोटा हो या बड़ा हो परिवार एक महत्वपूर्ण अंग होता है। परिवार के बिना किसी भी समाज की कल्पना नहीं की जा सकती है। समाज को जीवंत रखने का कार्य परिवार द्वारा ही किया जाता है।

समाज शास्त्रियों ने समाज के महत्वपूर्ण अंग परिवार के दो भेद माने है। एक संयुक्त परिवार, दूसरा एकल परिवार।

पारिवारिक सम्बन्धों का यथार्थ

पारिवारिक सम्बन्धों में सबसे श्रेष्ठ सम्बन्ध माता–पिता एवं सन्तान का सम्बन्ध माना जाता है। माता–पिता को परिवार की नींव कहा जाता है। यदि माता–पिता ही नहीं होगें ता सन्तान कहाँ से होगी। सन्तान रूपी दायित्व को पूरा करने पर ही एक नारी पूर्ण तत्व को प्राप्त होती है। मातृत्व नारी के लिए संसार की सबसे बड़ी उपलब्धि होती है। इसे नारी का पुनर्जन्म भी कहा जाता है। माता को वात्सल्य, ममता, प्रेम, स्नेह, करूणा, सेवा आदि भावों में देखा गया है। सन्तान के लिए माँ के समान गुरू एवं रक्षक दूसरा कोई नहीं है। कहा भी जाता है बच्चे का प्रथम गुरू उसकी माँ होती है दूसरा गुरू बच्चे का पिता आदि। पिता अपनी संतान के जन्म से लेकर शिक्षा, नौकरी, विवाह तथा पालन पोषण आदि के प्रति अपना उतरदायित्व निभाता है।

भारतीय संस्कृति में पति–पत्नी सम्बन्ध को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। माता–पिता द्वारा अपनी कन्या रूपी सन्तान का जब विवाह किया जाता है तो लड़की का सबसे नजदीकी तथा जन्म जन्मान्तर का रिश्ता उसका जीवन साथी आदि उसके पति के साथ होता है। पति पत्नी के लिए सर्वस्व होता है। प्राचीन शास्त्रों में भी पति को पत्नी का परमेश्वर माना गया है। समझदारी एवं कर्तव्य

Created by Universal Document Converter

निष्ठा के साथ पत्नी की भावनाओं की कद्र करने वाला पुरूष ही आदर्श पति माना जाता है। वर्तमान समय में समाज में स्त्री पुरूष को समानता का दर्जा दिया जाता है। आधुनिक समय में प्राचीन परम्पराओं को तोड़ कर मानव को महत्वपूर्ण स्थान दिया है।

वर्तमान समय में युवा बुजुर्ग सम्बन्धों में बहुत परिवर्तन आ गया है। प्राचीन समय के समान अब युवा वर्ग अपने परिवार के बड़े–बड़े व्यक्तियों को ज्यादा पसन्द नहीं करते हैं। वे उनकी इच्छाओं का कोई ध्यान नहीं रखते है। गीत चतुर्वेदी ने अपनी कहानी 'सिमसिम' में युवा बुजुर्ग सम्बन्ध को स्पष्ट करते हुए लिखा है ''मैं बार–बार कहता था लेकिन उन्हें मुझ पर भरोसा नहीं होता था। अंततः मैंने साबित कर दिया, कि यह यंग एवं डायनामिक लोगों का दौर है। मैं उनसे कहता था कि हर तरफ यंग लोगों की पूछ है, आप में पैशन, डिटरमिनेशन, विज़न, पेसेंस और इफेक्टिव हयूमन मैनेजमेंट होना चाहिए। पर वह दुनिया को पुराने चश्में से ही देखते थे। मैं बता नहीं सकता कि मैं कितना सुकून महसूस करता हूं।''

इस तरह गीत चतुर्वेदी ने युवा बुजुर्ग सम्बन्धों को दर्शाया है। आधुनिक समाज में युवा वग केवल अपने तक ही सीमित रहता है। वह केवल एकल परिवार में रहना चाहता है, संयुक्त परिवार को वह अपनी स्वतन्त्रता में बाधक समझता है। यदि परिवार का बड़ा–बूढ़ा व्यक्ति अपने पोते–पोतियों के साथ–साथ यदि अपने, बेटे व बहू को भी कुछ समझाना चाहता है तो वे सभी उसकी बात नहीं मानते हैं और समय–समय पर स्थान–स्थान पर उसकी बेइज्जती करते रहते हैं। जिसके कारण उनको अपना जीवन आँसुओं में ही व्यतीत करना पड़ता है। इस कथन को स्पष्ट करते हुए गीत चतुर्वेदी ने अपनी कहानी 'सिमसिम' में कहा है ''उनमें से ज्यादातर लोगों की आँखें हमेशा पानी से भरी रहती है, वे कंधों को थोड़ा झुकाकर खड़े होते हैं और बैठते भी हैं तो पीठ सीधी करके, बिना कुर्सी की बैक से सटे, वे हाथ मिलाने की पहल नहीं करते बल्कि सिर को हल्का सा झुकाकर विष करते है। और बिना पूछे किसी के केबिन में नहीं घुसते। मैं उनसे कई बार कह चुका कि वे मुझे मेरे फर्स्ट नेम से बुलाया करे, पर वे मुझे हमेशा सर कहते हैं।''

कहानी जब तक जन पीड़ा को व्यक्त नहीं करती तब तक वह नये समाज की रचना नहीं कर सकती है, इस पीड़ा का चित्रण कहानीकार ने किया है। आज बुजुर्ग वर्ग की कोई हैसियन नहीं, उसके सुख–दुखों से युवा वर्ग केवल सहानुभूति मात्र रखता है। ''बूढ़ा अब भी नहीं उठा। मर तो नहीं गया। क्या भरोसा?

मैंने उसका कंधा पकड़कर झकझोर दिया। वह अचकचाकर उठा। सीधे बैठ गया।

मैंने पूछा, 'क्या हो गया' अंकल? नींद निकाले हो?'

वह अभी भी अचकचाया हुआ था। उसके माथे पर पसीना आ गया। जैसे मुझे देखकर बुरी तरह घबरा गया हो या एक घबराई हुई नींद से उठा हो। वह रूमाल से पसीना पोंछने लगता है। फिर बोतल से पानी पीता है।

चारों तरफ उदासी है।''

इस कथन से स्पष्ट दर्शाया गया है कि आज आधुनिक समय में बुजुर्ग वर्ग की कोई हैसियत नहीं है। युवा वर्ग केवल (स्वयं) अकेला ही रहना चाहता है। वह अन्य किसी बुजुर्ग से कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहता। कहानीकार की तड़फ बुजुर्ग वर्ग के प्रति वाजिब है। गीत चतुर्वेदी कहानियों में स्पष्ट करते है कि वर्तमान समय में बूढ़े व्यक्तियों को घर में एक व्यर्थ सामान के समान रखा जाता है जो आज के समाज का यथार्थ स्वरूप दर्शाता है। ''हाथ में दूध की पन्नी देखते ही उसने ले ली। और मुड़कर भीतर चली गई। मैं खुले हुए दरवाजे के बीच में खड़ा था। सामने एक कमरा था, जिसमें पलंग पर एक बूढ़ी औरत लेटी थी और इस तरफ़ सोफ़े पर एक बूढ़ा हाथ में रिमोट लेकर बैठा था। मैं दो कदम और अन्दर हो गया। टी॰वी॰ चल रही थी, लेकिन उसमें से कोई आवाज नहीं आ रही थी। उस पर एक पुराना कोमेडियन हाफ़ पैंट पहनकर उछलकूद कर रहा था। पूरी ब्लैक एंड व्हाइट स्क्रीन पर महज चैनल का नाम और म्यूट का निशान ही रंग पैदा कर रहे थे। स्क्रीन का दृश्य बूढ़े को नहीं हंसा पा रहा था। वह मूर्ति की तरह सीधा और तना हुआ बैठा था।''

वर्तमान समय में युवा वर्ग द्वारा अपने बूढ़े परिवार के सदस्यों के साथ उचित व्यवहार नहीं किया जाता है वे उनको बोझ समझते है। यह समाज की यथार्थ स्थिति को दर्शाते हैं।

विवाह

भारतीय समाज की एक परम्परा के रूप में विवाह प्रथा को माना जाता है। विवाह में दो परिवारों के सम्बन्ध जुड़ने के साथ–साथ स्त्री–पुरूष का पति–पत्नी रूपी सम्बन्ध जुड़ता है। इसी सम्बन्ध को विवाह का नाम दिया जाता है। यदि विवाह को लड़की या लड़का अपने माता–पिता की सहमति से करता है तो उसे संस्कारों में सम्पन्न विवाह माना जाता है। इस प्रकार का विवाह समाज में मध्यम वर्ग के लोगों द्वारा अधिकतर किया जाता है इसके साथ निम्न वर्ग भी शामिल होता है। लेकिन उच्च वर्ग के लड़के लड़कियों द्वारा आधुनिक समय में अनमेल विवाह किया जाता है। यदि यूं कहा जाए कि आधुनिक समय में अनमेल विवाह का प्रचलन अधिक है तो कोई अतिश्योक्ति न होगी।

जब प्रेम किसी से और विवाह किसी अन्य से अथवा बढ़ती उम्र में विवाह होने से भावनात्मक स्तर पर पति–पत्नी एक दूसरे के साथ खुलकर व्यवहार नहीं करते तब दाम्पत्य संबंध टूटने लगते हैं। कभी–कभी पुनर्विवाह के कारण भी उम्र, विचार, रहन–सहन आदि में अन्तर आने की वजह पति–पत्नी के वैवाहिक जीवन में बाधा आती है। इसे ही बेमेल अथवा अनमेल विवाह कहते है। अनमेल विवाह, ज्यादातर प्रेम सम्बन्ध के कारण होते है। इनमें दो अलग–अलग जातियों के लड़का, लड़की प्रेम के आधार पर कोर्ट मेरिज कर लेते है। जिसमें इनके (लड़का–लड़की) परिवार वाले सदस्यों की मंजूरी की आवश्यकता नहीं होती।

अनमेल विवाह वैवाहिक समस्या का एक श्रेष्ठ हल बन

Created by Universal Document Converter

जाता है। इस विवाह को करने वाली लड़की को दहेज प्रथा जैसे अभिशाप से बचाया जा सकता है। यह विवाह करने से पहले स्वयं लड़का–लड़की एक दूसरे को अच्छी प्रकार से जान लेते है, पहचानते है, विचारों के आदान–प्रदान से दोनों के विचारों में सहमति हो जाती है जो विवाह के बाद वे अपना जीवन सूझ–बूझ के साथ व्यतीत करते है। जो सुखदायी होता है। कहानीकार गीत चतुर्वेदी इसका उदाहरण है जिन्होंने अपनी कहानियों में अन्तर्जातीय विवाह को बढ़ा देने के साथ–साथ स्वयं भी प्रेम के आधार पर यह विवाह किया है। इनकी पत्नी का नाम भावना चतुर्वेदी है। ये अपने दो बच्चों बेटा व बेटी के साथ सुखमय जीवन व्यतीत कर रहे है। अतः इनकी कहानियों में अन्तर्जातीय विवाह को विशेष महत्व दिया है जो प्रेम के आधार पर होता है।

समाज में अनैतिक यौन–सम्बन्ध

समाज जिस प्रकार प्रगति के पथ पर अग्रसर है वह दिन–प्रतिदिन विकसित होता जा रहा है। वहीं दूसरी तरफ समाज में रहने वाले लोगों के रिश्ते कमजोर पड़ने लगे हैं। इनमें से मानवीयता व इंसानियत का रिश्ता सबसे कमजोर होता जा रहा है। मानव जीवन में यौन एक शाश्वत आवश्यकता है। यह एक भूख है जिसकी तृप्ति प्रेम में शारीरिक सम्बन्धों के निर्वाह में होती है, किन्तु शरीर की यह भूख जायज मार्ग में शामिल नहीं होती तब नाजायज मार्ग में शमन करने के प्रयास होते है। यदि युवा वर्ग की समयानुसार शादी न हुई हो तो वे गलत आदतों के शिकार होकर गलत रास्ते अपना लेते है जैसे अनैतिक यौन सम्बन्धों की और अग्रसर होना। इन अनैतिक यौन सम्बन्धों की पूर्ति के लिए युवा वर्ग घर से भागने जैसा अपराध कर बैठते हैं। इसी संदर्भ में गीत चतुर्वेदी ने अपनी कहानी 'सावंत आन्टी की लड़कियां' में कहा है ''फिलहाल नंदू का कॉलेज जाना नहीं हो पा रहा था और बंडू जाधव नाम का वह लड़का जो पंछी को अपने साथ ले उड़ा ले जाने की खुली धमकी दे रहा था, बतर्ज यार जलने वालों को जलाएंगे, प्यार में जीयेंगे, मर जाएंगे. . ., उसका भी कुछ अता–पता नहीं था। यह माना जा रहा था कि पार्वती बाई ने पहाड़ी आंटी से कुछ हवा करवाकर उसे गायब करवा दिया है। खबरे लोहे के पर्दे के पीछे छुपी होती हैं। उसे खोज लाने वाली खबरनवीसी सुध में थी और उसी ने किसी पल गुस्से में घोषणा की थी कि एक संडे को नंदू उस लड़के के साथ भागने का प्रोग्राम बना रही है।''

उपर्युक्त संदर्भ में कहा जा सकता है कि गीत चतुर्वेदी ने वर्तमान समाज की यथार्थ परिस्थितियों का चित्रण अपनी कहानियों में किया है। गीत चतुर्वेदी वर्तमान समाज से भली भांति परिचित है। क्योंकि स्वयं युवा होने के कारण वह युवा वर्ग से जुड़ा हुआ है और उनकी स्थितियों से परिचित है। युवा वग ने यौन सम्बन्धों की पूर्ति के लिए सभी रिश्तों को दर किनार कर दिया है। उनके द्वारा विवाह को केवल यौन सम्बन्धों की पूर्ति का साधन मानते हैं। युवा वर्ग कुछ समय के बाद विवाह जैसे पवित्र सम्बन्ध को नकार देते है और सम्बन्धों को विच्छेद कर देते है।

समाज में स्त्री का स्थान

प्राचीन समय में स्त्री को केवल एक भोग की वस्तु माना जाता था लेकिन जैसे–जैसे समय परिवर्तित होता गया वैसे–वैसे समाज ने प्रगति की और मानव की सोच में परिवर्तन आना आरम्भ हो गया। आज समाज में नारी का स्थान महत्वपूर्ण माना जाता है। क्योंकि नारी ने स्वयं अपनी पहचान बनाना शुरू कर दिया है। अब वह किसी पुरूष रूपी पहचान की मोहताज नहीं है। आज के समय में नर–नारी को एक समान माना जाता है। नारी ने वर्तमान में नये रिश्तों को अपनाना आरम्भ कर दिया है। अब वह केवल चार दिवारी में बंद होकर नहीं रहती बल्कि चार दिवारी से बाहर निकल कर उसने दोस्ती जैसे पवित्र रिश्ते को अपना लिया है। परिवार में होने वाले पारिवारिक विवादों को स्वयं नारी ने हल करना शुरू कर दिया है। अब वह किसी पितृसत्तात्मक सोच को अपनाए हुए पुरूष के अत्याचार को नहीं सहन करती है। नारी ने शिक्षा के क्षेत्र में अपना कदम रख कर स्वयं को प्रगतिशील बनाने में कामयाबी प्राप्त की है। स्त्री ने पुरानी रीति रिवाजों को छोड़कर पाश्चात्य संस्कृति को अपना लिया है जिसके आधार पर मानव तो मानव ही है चाहे वह पुरूष है या स्त्री।

गीत चतुर्वेदी अपनी कहानियों के माध्यम से स्त्री की स्वतन्त्रता के साथ–साथ समाज में औरत का स्थान क्या है आदि को दर्शाते हुए कहते हैं ''एक औरत को मरे बरसों हो गए। एक लड़की औरत बन रही थी। औरत के बिना घर घर नहीं रहता। औरत अपने पीछे एक औरत छोड़ जाती है। वह जिस जगह बैठती है वह जगह औरत हो जाती है। वह जिस मटके में पानी भरती है, वह मटका औरत बन जाता है। वह जिस दिल में रहती है वह दिल औरत सा हो जाता है। बंडू काका नाग मोड़े के दिल में एक औरत रह रही थी। एक औरत वहां रूह की शक्ल में थी एक और देह बनकर। एक औरत स्मृति थी एक औरत वर्तमान। एक औरत के साथ उसका रिश्ता बहुत पवित्र किस्म का था।''

इस तरह कहानीकार गीत चतुर्वेदी ने पुरूष प्रधान समाज में नारी की स्थिति दर्शाई है। भारतीय समाज में एक नई सुबह लाने के लिए वे जनता के साथ मिलकर खड़े हैं।

नागरिक जीवन का यथार्थ

कहानीकार गीत चतुर्वेदी की कहानियों में सामाजिकता का व्यापक स्वरूप दिखाई देता है। कहानीकार ने अपनी कहानियों के माध्यम से आधुनिक जीवन एवं आमजन की स्थिति का चित्रण बड़े ही व्यापक ढ़ंग से किया है। भारतीय समाज में प्रत्येक नागरिक को समानता व स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया है लेकिन इनके बावजूद भी समाज में ऊंच नीच का भेदभाव माना जाता है। भारतीय समाज के बारे में गीत चुतर्वेदी ने कहा है ''अब हम यहां रहने आए, तो हमें चींटियों के बारे में नहीं पता था। हमें लगा हम यहां ठीक से रहेंगे। हम इतना परेशान थे कि साफ़ आकाश और हरियाली ने हमें यकीन दिला दिया था कि ऐसे में आप बताइए, मैं और मेरी पत्नी, कैसे सोच सकते हैं कि यहां इतनी घातक चींटियां भी होंगी?''

Created by Universal Document Converter

उपर्युक्त कथन स्पष्ट करता है कि भारतीय समाज में नागरिकों को सभ्य तथा संस्कारों से युक्त माना जाता है लेकिन पाश्चात्य संस्कृति रूपी चींटियों ने भारतीय संस्कृति और सभ्यता को प्रभावित कर युवा वर्ग को दुर्व्यसनों की तरफ मोड़ दिया है। समाज का प्रत्येक नागरिक अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए अन्य व्यक्ति को हानि पहुँचाता है।

युवा वर्ग या समाज का प्रत्येक नागरिक प्राचीन सभ्यता एवं संस्कृति को छोड़कर पाश्चात्य संस्कृति के पीछे इनका अन्धाधुन होकर भागने लगा हुआ है जिसके कारण उसने जीवन की प्रत्येक वस्तु को वास्तविक न मानकर काल्पनिक माना है। इस संदर्भ में गीत चतुर्वेदी कहता है कि ''आसमान से गिरने वाली हर चीज को कोसा मत करो।

बारिश भी आसमान से ही गिरती है।'' नागरिक जीवन की वास्तविकता है कि आधुनिक समाज के नागरिक ने समाज के अस्तित्व को कम महत्व दिया है। इस संदर्भ में कवि कहता है कि ''जब मैं छोटा था सोचता था कि बड़ा होकर किताब बनूंगा। लोगों को चींटियों की तरह मारा जा सकता है। एक लेखक को मारना भी मुश्किल नहीं, लेकिन किताबों को नहीं मारा जा सकता है। उन्हें नष्ट करने की कितनी भी कोशिश की जाए, यह संभावना हमेशा रहती है कि दुनिया के किसी निर्जन कोने में, किसी लाइब्रेरी के किसी खाने में, उसकी एक प्रति तब भी बची रह जाए।'' इस कथन के माध्यम से स्पष्ट किया जाता है कि समाज में लोगों का महत्व कम हो गया है। प्रत्येक नागरिक भ्रष्टाचार, दुर्व्यसनों तथा स्वार्थों की पूर्ति में लगा रहता है। वह अपने स्वार्थों को पूरा करने के लिए हिंसात्मक प्रवृति को अपनाता है। और लोगों को कीड़े मकोड़े के समान मारता चला जाता है।

आज के वातावरण में आम जन के रूप में नागरिक की पहचान प्रायः समाप्त हो गई है। किसी भी समाज का नागरिक एक नागरिक के रूप में पहचान न बनाकर धर्म, अर्थ, व्यवसाय, या जाति–पाति के आधार पर पहचाना जाता है। हमारे समाज का प्रत्येक नागरिक किसी न किसी वर्ग (उच्च वर्ग, मध्यम वर्ग, निम्न वर्ग आदि) से सम्बन्ध रखता है। आधुनिक समय में नागरिक की सोच इतनी छोटी हो गई है कि वह अपने स्वार्थों की पूर्ति हेतु किसी भी अपराध को करने में सक्षम हो जाता है। वह दुव्यर्सनों, बुरी आदतों, जैसे मद्यपान, धूम्रपान अनेक नशीली दवाओं का प्रयोग करता है जो उसे अपराध की ओर अग्रसर करता है।

गीत चतुर्वेदी ने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज के नागरिकों की इस प्रवृति को उजागर करने का प्रयास किया है और वे कहते हैं कि बुरी आदतों के प्रभाव से एक, अच्छा नागरिक भी अपराधी बनने के लिए मजबूर हो जाता है। वे कहते हैं ''कांबा बदनाम गांव था जो उल्लास नदी के पास बसा है। ऐसा कहा जाता है कि तीस चालीस साल पहले यहाँ के लोग स्वाभाविक मौत कम मरते थे। वे शराब पीते समय जुआ खेलते समय हुए किसी झगड़े के कारण आपस में मारकाट कर लेते थे और किसी को खबर होने से पहले लाशों को यहां दफना–जला जाते थे।''

संक्षेप में कहा जा सकता है कि आधुनिक युग का नागरिक स्वार्थी होने के साथ–साथ भ्रश्टाचारी भी हो गया है। वह केवल अपने स्वार्थों की पूर्ति में लगा रहता है।

समाज में युवा वर्ग पर इंटरनेट का प्रभाव

आधुनिक समय तकनीकी का समय माना जाता है। अद्यतन समाज में आये दिन नया आविष्कार होता रहता है जिसके कारण किसी भी देश का समाज प्रगतिशील बनता है। अर्थात् समाज में रहने वाले लोगों को सुख सुविधाएं प्रदान की जाती हैं जिससे लेगों का जीवन आरामदायक होता है। जैसे टेलिविजन, रेडियो, यातायात के साधन, फोन कम्प्यूटर का प्रयोग सबसे महत्वपूर्ण स्थान रखता है। क्योंकि कम्प्यूटर के आविष्कार ने लोगों की प्रत्येक समस्या को कुछ हद तक हल कर दिया है। चाहे वह शिक्षा से सम्बन्धित हो या आय–व्यय, खरीदारी आदि को हल करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

इन्टरनेट का प्रयोग इसी कम्प्यूटर तथा एन्ड्रोयड फोन द्वारा किया जाता है। आधुनिक युग में इन्टरनेट ने अपनी महता से तहलका मचा रखा है। इसके माध्यम से समाज का प्रत्येक वर्ग युवा, बूढ़ा, स्त्री, पुरूष, बच्चे आदि ने अपने जीवन को आधुनिक संस्कृति में ढ़ाल लिया है। वह घर बैठे बैठे अपनी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति आसानी से इसके माध्यम से कर सकते हैं।

इन्टरनेट ने युवा वर्ग को सबसे ज्यादा प्रभावित किया है। एक तरफ युवा वर्ग शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति कर रहे हैं तो दूसरी तरफ इसके गलत प्रयोग से दुव्यर्सनों, बुरी आदतों का शिकार हो रहे है।

गीत चतुर्वेदी ने अपनी कहानियों में युवा वर्ग को महत्वपूर्ण स्थान दिया है तथा उनके द्वारा अपनाए गए इन्टरनेट के प्रयोग को भी प्रदर्शित किया है। ''सुबह तीन चार घंटे नेट पर बैठने के बाद में निकल जाता हूं। नेट सर्फिंग को मैं अपना स्ट्रगल का समय मानता हूं, क्योंकि उतनी देर में मैं कुछ जॉब साइट पर अपना रिज्यूमे अपलोड करता हूं, गूगल टॉक पर दोस्तों से हालचाल लेता हूं। कुछ जगहों पर रिज्यूमे अटैच करके भेजता हूं और जिनके ई–मेल आईडी मेरे पास नहीं है, उन्हें एक वेबसाइट से फ्री एस एम एस करता हूं। ये समय जॉब हन्ट का होता है। रिजल्ट आने के तुरन्त बाद मैं अपना पासपोर्ट बनाने में लग गया था।''

इससे स्पष्ट होता है कि यदि इन्टरनेट का प्रयोग सही काम में लगाया जाए तो व्यक्ति सफलता के पथ पर अग्रसर हो सकता है। दूसरी तरफ यदि व्यक्ति इन्टरनेट का प्रयोग गलत कामों में जैसे मूवी देखना, गलत व्यक्तियों के साथ चैटिंग करना, पैसा कमाने के गलत तरीकों को अपना या बुरे बच्चों से दोस्ती होना आदि में करता है तो व्यक्ति का जीवन खराब हो सकता है।

''उस साल मैं स्क्रीन नेट से डाउनलोड किया 'मार्लबोरी फ्राइडे क्राइसिस' पर एक डिर्स्टेशन पढ़ रहा था, तो वह आकर चांव

Created by Universal Document Converter

चांव करने लगे। तब मैंने उन्हें ई–मेल पढ़ाया, जिसमें मुझे ऑलरेडी चार लाख का ऑफर था और मैं नेगोशिएट कर रहा था कि वे कम से कम डेढ़ लाख और बढ़ाएं। मैंने उन्हें बताया कि यदि वे एक भी बढ़ा दे तो मैं ज्वाइन कर लूंगा। जितना इस समय पाते हैं, उससे ज्यादा ही होगा यह भी।''

कभी–कभी व्यक्ति, बच्चे द्वारा कम्प्यूटर पर इन्टरनेट का प्रयोग करते–करते गलत आदतों का शिकार हो जाते हैं और वह कम्प्यूटर का प्रयोग बन्द कर देते हैं। इसके आधार पर जब उन्हें जरूरी काम या जानकारी दी जाती है तो वह उससे वंचित रह जाते हैं।

समाज में शिक्षा का स्थान

प्राचीन समय से ही शिक्षा की महत्ता को स्वीकार किया जाता है। समाज चाहे प्राचीन रहा हो या आधुनिक शिक्षा का महत्व सभी जगह समान रहा है। बस इतना अन्तर है कि प्राचीन समय में शिक्षा का क्षेत्र सीमित था। उस समय केवल पुरूषों तक ही शिक्षा का विस्तार माना जाता था लेकिन आज शिक्षा का क्षेत्र व्यापक एवं विस्तृत हो गया हे। यह पुरूष के दायरे से निकल कर स्त्री तक फैल गई है। यानि वर्तमान समय में स्त्री को भी शिक्षा का अधिकार प्रापत हो गया है। वह भी पुरूष के साथ बैठकर शिक्षा प्राप्त कर सकती है। वर्तमान समय में शिक्षा का अधिकार सभी को है। सरकार द्वारा कानून बनाया गया है। समय के साथ सरकार द्वारा विशेष सुविधाएं दी जाने लगी है। थोड़ी ही दूरी पर स्कूलों, कॉलेजों, विश्वविद्यालयों तथा अध्यापकों की सुनिश्चित व्यवस्था की गई है।

इसी सन्दर्भ में गीत चतुर्वेदी ने अपनी कहानियों के माध्यम से शिक्षा की महत्ता को स्पष्ट किया है। विजू सावंत के परिवार में चार बेटियां हैं और एक बेटा है। स्वयं मध्यम वर्गीय परिवार से सम्बन्ध रखता है और चौकीदारी का कार्य स्वयं करता है। इसकी आर्थिक स्थिति अच्छी न होने पर भी अपनी सभी बेटियों को शिक्षा दिलाता है। क्योंकि उसको तथा उसकी पत्नी को पता है कि शिक्षा के माध्यम से ही बेटियों का सम्मान बढ़ता है। शादी करने में आसानी होती है। पढ़ लिख कर बेटियों आत्मनिर्भर बनती है जिससे शोषण का शिकार नहीं होती।

अद्यतन युग में शिक्षा का प्रसार–प्रचार इतना बढ़ गया है कि इसके बिना किसी भी पुरूष एवं स्त्री की प्रगति व विकास सम्भव नहीं है। शिक्षा प्राप्त कर स्त्री ने समाज में अपनी एक अलग जगह बना ली है। अब वह पुरूष के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर जीवन की कठिनाइयों को दूर करती है। अब नारी का शिक्षा के माध्यम से समाज के प्रत्येक पक्ष आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक क्षेत्र में विशेश स्थान प्राप्त कर लिया है।

मध्यकाल में नारी जो पुरूष द्वारा किए गए अत्याचारों को तथा उसकी हिंसा प्रवृति का सामना करने की बजाय सहन करती थी। लेकिन अब शिक्षित नारी पुरूष द्वारा किए गये अत्याचारों को सहन करने की बजाय उसका सामना कर पुरूष की हिंसा प्रवृति को समाप्त करती है लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में कहीं कहीं आज भी नारी पर अत्याचार किए जाते हैं। उसका शोषण किया जाता है। इस सन्दर्भ में गीत चतुर्वेदी ने अपनी कहानी में नाम्या जाधव द्वारा अपनी पत्नी/बीवी के साथ हिंसात्मक व्यवहार को स्पष्ट करते हुए कहा ''वह बहुत शराब पीता था, गालियां देना उसका प्यारा शौक था, सड़क पर दौड़ा कर मारना या बीवी का हाथ पकड़कर घसीटते हुए ले जाना या पतरे पर खड़े होकर घर में आग लगा देने की घोषणा करना उसकी मुख्य गतिविधियां। बीवी उसके पास ज्यादा नहीं रही।'' लेकिन आज के समय में शिक्षित नारी इस प्रकार की कोई हिंसा सहन नहीं करती है। शिक्षा ने समाज के प्रत्येक पुरूश की सोच में परिवर्तन कर नारी के प्रति सम्मान देने की भावना का विकास किया है।

अंततः कहा जा सकता है कि गीत चतुर्वेदी ने अपनी कहानियों में शिक्षा के प्रभावों का वर्णन बखूबी ढ़ंग से किया है।

समाज का बदलता स्वरूप

जब भी समाज का नाम हमारे जहन में आता है तो चार बातें हमारे दिमाग में आती है, प्रशासनिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक। इसके बाद बदलाव की भूमिका सामने आती है। अक्सर हमारे समाज के लोग कहते हैं कि जमाना बदल गया है। हमारे देश ने परातन्त्र में लोकतन्त्र तक का सफर तय किया; पर अत्याचारों का दौर खत्म नहीं हुआ। लेकिन अब और ज्यादा बढ़ गया है।

आज हम लोकतन्त्रीय समाज में रहते हैं जो लोकनीति को बनाने में सहायक है लेकिन वो नीतियां मंजिल पर जाने से पहले ही दम तोड़ देती है। मध्यकाल में पुरूष द्वारा खाने के लिए ही कमाया जाता था लेकिन आज मानव खाने, पहनने, बचत व बच्चों की पढ़ाई आदि के लिए कमाता है। उस समय में किसी गाँव में कोई पिछड़ता था तो पूरा गांव साथ देता था लेकिन आज भाई भाई से पिछड़ रहा है। उसका कोई साथ नहीं देते। बदलते समाज में रिश्तों का खोखलापन दिखाई देता है। इसी दूरी के कारण आज समाज का दायरा कम होता जा रहा है। व्यक्ति अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए हिंसात्मक–प्रवृतियों को अपना रहा है।

समाज में रहने वाले युवा वर्ग की स्थिति इतनी दयनीय हो गई है कि वह दुर्व्यसनों का शिकार हो रहे है। इन्हीं गलत आदतों के कारण वह समाज में गलत कार्य करते हैं। समाज में भ्रष्टाचार इतना फैल गया है कि राजनेता भी इसके आधार पर समाज का नुकसान करते हैं और स्वयं भ्रष्टाचारी बन जाते हैं।

गीत चतुर्वेदी ने 'सावंत आंटी की लड़कियां' कहानी में भ्रष्टाचार के सन्दर्भ में कहा है ''हेमंत राव कांबले अभी दो–तीन घंटे थाने में और रहेंगें। ऐसा मोटे पुलिसवाले का मन है। दीनानाथ कांबले कुछ नहीं कर सकते। वह चाते हैं कि बेटे को ज्यादा पीटा न जाए, इसके लिए वह मांगे गए बीस हजार से दो ज्यादा ले आए हैं। उन्होंने बहुत कम शब्दों में विजू सावंत को भी इशारा दे दिया है कि वह भी हेमंत को छोड़ देने की सिफारिश कर दें, ऐसा करने पर वह विजू

Created by Universal Document Converter

सावंत के हिस्से से दस हजार भी खुद ही भर देंगे।''

समाज के बदलते स्वरूप में लड़की की बंदिशों को समाप्त किया गया बताया गया है यानि आज लड़की पर प्राचीन या मध्य काल के समान किसी प्रकार की बंदिशें नहीं हैं। वह आज लड़कों के समान शिक्षा प्राप्त कर अच्छे अंकों के साथ पास होती है और समाज की प्रगति में हाथ बटाती है। वर्तमान समय में एक लड़की सेना अधिकारी, डॉक्टर, शिक्षिका, राजनेत्री यहाँ तक कि देश के प्रथम नागरिक का भी स्थान प्राप्त कर रही है। आज लड़कियां प्रेम के मार्ग पर चल प्रेम विवाह करती है। ''वह ऊंचा था। एक बार उसने मुझे उठाकर उछाल दिया था, जैसे मैं कोई छोटी बच्ची हूं।

कितना डर गई थी मैं?

जान ले लोगे क्या? गिर जाती तो?

मेरे हाथ किसलिए हैं? जब गिरने का डर लगे, तो इन्हें पकड़ लेना।

तुमने मेरे माथे पर बिन्दी क्यों लगाई थी?

तुम्हारे माथे ने कहा था।

क्या कहा था?

आओ, हमेशा के लिए यहां सुख सूरज बनकर बस जाओ।''

कहीं कहीं गीत चतुर्वेदी ने अपनी कहानियों में प्रेम पर विरोध भी जाहिर किया है ''कॉलोनी में उससे बात करने वाला कोई नहीं बचा। जहां जाती है, समझ में आ जाता है कि उसे टाला जा रहा है, लेकिन टलना उसकी आदत है नहीं। वह विजू सावंत के घर जाकर बैठ जाती है। उसकी बेटी नंदू सावंत अलग किस्म की प्राब्लम में पड़ी हुई है। बेचारी घर से भाग गई थी। उसके मां बाप ने उसका घर से बाहर निकलना बंद कर दिया है। उसने पार्वती बाई को समझाना चाहा कि वह जिससे शादी करना चाहती है उससे करा दे, वरना आगे चलकर पछताना ही पड़ेगा। लेकिन पार्वती बाई ने उलटे उसी को चार बातें सुना दी। वह नंदू से मिलती है। उसकी आंखें रो–रोकर सूजी हुई है।''

उपर्युक्त कथन के माध्यम से स्पष्ट हुआ है कि समाज में एक तरफ प्रेम को बढ़ावा दिया जा रहा है। उसके आधार पर अन्तर्जातीय विवाह भी हो रहे हैं जिनमें सरकार भी सहयोग देती है। वहीं दूसरी तरफ प्रेम का विरोध भी समाज में किया जा रहा है।

निष्कर्ष : अंततः कहा जा सकता है कि गीत चतुर्वेदी ने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज की यथार्थता का स्पष्ट चित्रण किया है तथा समाज की कुरीतियों, रूढ़ियों पर करारा कटाक्ष किया है।

साहित्य केवल साहित्यकार के मन के भावों का संक्षिप्त रूप न होकर, प्रत्येक समाज के यथार्थ का चित्रण है। आजकल के बनते बिगड़ते समाज को देखकर एक सच्चा साहित्यकार। कहानीकार कभी भी चुपचाप नहीं बैठ सकता। वह अपनी कहानियों के माध्यम से लोगों को जागृत करता है और सामाजिकता की पहचान करता है। साहित्यकार सामाजिक यथार्थ को चित्रित करता है तब सभी परिस्थितियां चाहे वह राजनीतिक हो, सांस्कृतिक हो या आर्थिक या धार्मिक आदि हो सहज स्वाभाविक रूप से साहित्यकार की रचनाओ में स्थान पाती है। हर एक साहित्य इसका स्पश्ट प्रमाण है। गीत चतुर्वेदी आधुनिक काल के लेखक है, उनका सारा साहित्य समसामयिक सामाजिक यथार्थ को दर्शाने वाला चित्रपटल है। अतः गीत जी ने सामाजिक वास्तविकता का चित्रण बखूबी किया है।

सन्दर्भ :

1. सत्यकाम विद्यालका, आठ श्रेष्ठ कहानियाँ, पृ.9
2. डॉ० जेड, जघालै – राम दरश मिश्र के उपन्यासों में दधार्थ पृ.9
3. गीत चतुर्वेदी, सावंत आंटी की लड़कियाँ पृ. 88
4. गीत चतुर्वेदी, पिंक रिलप डेडी, पृ. 159
5. वही, पृ. 159
6. वही पृ. 155
7. वही पृ. 141
8. गीत चतुर्वेदी जी, सावंत आंटी की लड़कियाँ पृ. 36
9. वही, पृ. 98, 99
10. गीत चतुर्वेदी जी पिंक स्लिप डेडी पृ. 134
11. वही पृ. 124
12. वही पृ. 124
13. गीत चतुर्वेदी जी सांवत आंटी की लड़कियाँ पृ. 17
14. गीत चतुर्वेदी जी पिंक स्लिप डैडी पृ. 132
15. वही, पृ. 133
16. गीत चतुर्वेदी जी सांवत आंटी की लड़कियाँ पृ. 27
17. वही पृ. 58
18. वही पृ. 158
19. वही पृ. 163

श्रीमति पुनम रानी
एमफिल् हिन्दी विभाग,
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय,
रोहतक

पत्नि श्री अनिल कुमार
वार्ड न0 17, रामपुरा रोड,
सामने दादी सती रानी गली सफिदों
जिला जीन्द पिन कोड 126112

Created by Universal Document Converter

उपन्यासकार प्रेमचन्द की उपन्यासकला का क्रमिक अध्ययन

सारांश :

उपन्यास सम्राट् प्रेमचन्द हिन्दी के उन अग्र पांक्तेय उपन्यासकारों में से है। जिन्होंने उपन्यास के शेशव काल में ही उसमें एक अप्रितम गम्भीरीय, जनचेतन और समाज चेतना भर दी थी आज भी वह उससे आगे बहुत कम बढ़ सका है। समाज में व्याप्त एक असहनीय कुष्ठा, निराशा एवं समग्रतः उस जनहाहाकर को उपन्यासिक अभिव्यक्ति दी और एक युग को, युग की सारी प्रवृत्तियों और तमाम मनोवृत्तियों मान्यताओं के साथ प्रवत्ति कर डाला। उन्होंने हिन्दी उपन्यास को नया नामकरण, नया संस्कार और नया धरातल ही नहीं दिया, उसे एक नई चिंतन धारा, एक नई चेतना भूमि और सामाजिकता भी दी।

मुख्य शब्द : मनोवृत्तियों, प्रवृत्तियों, व्याभिचारों, अतिरंजित, उत्कर्ष।,

हिन्दी कथा साहित्य के मेरूदण्ड प्रेमचन्द हिन्दी साहित्य के इतिहासकाश में अपना वहीं महत्व रखते हैं जो सौमण्डल में सूर्य को प्राप्त है। साहित्यिक दधीचि ने क्या साहित्य के निर्माण एवं उसके उत्थान हेतु अपना सर्वत्व होम कर दिया। उन्होंने अपने उपन्यासों में भारतीय जीवन के सच्चे स्वरूप को प्रस्तुत किया था।''[1]

उपन्यासकार के रूप में प्रेमचन्द के लेखनकाल को दो हिस्सों में बांटा जा सकता है। 1900–1918 ई० का काल उपन्यास का निर्माणकाल है। उन्होंने पहले उर्दू में लिखना आरम्भ किया था। असरारे मआविद उर्फ देवस्थान रहस्य उनका प्रथम उपन्यास माना जाता है। यह वाराणसी के उर्दू साप्ताहिक आवाज–ए–खल्क में अक्टूबर 1903 से फरवरी 1905 तक धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुआ था। अमृतराय ने प्रेमचन्द : मंगलाचरण में हलके भाषान्तर के साथ प्रकाशित किया। इसमें प्रेमचन्द जी ने धर्म के नाम पर होने वाले व्याभिचारों और पाखण्डों का चित्रण किया लेकिन उपन्यास में हिन्दू समाज की बुराईयों का अतिरंजित वर्णन प्रमुख हो गया। अमृतराय ने इसे शरसार के रंग में रचित बताया है।[2]

दूसरा उर्दू उपन्यास हमखुर्मा व हमसवाब 1906 हिन्दी रूपांतर प्रेमा अथवा दो सखियों विवाह शीर्षक से 1907 में प्रकाशित हुआ था। नवाब राय के नाम से लिखा था, इसका केन्द्रिय विषय विधवा विवाह था, प्रेमा की रचना कर प्रेमचन्द ने उपन्यास को आधुनिक नवजागरण का संदेश वाहक तथा जीवन का प्रतिनिधि बना दिया।[3]

किशना उर्दू में लिखा तीसरा उपन्यास है जो समप्रति अनुपलब्ध है लेकिन जमाना के अक्तूबर 1907 के अंक में इस उपन्यास की नौबतराय नजर लिखित एक समालोचना से ज्ञात होता है कि किशना का प्रतिपाद्य मध्यवर्गीय समाज की समस्याएं विशेषकर स्त्रियों में गहनों के प्रति सनक की हद तक पहुंचा मोह सम्भवतः किशना गबन के रूप में विकसित किया, रूठिरानी जमाना के अप्रैल से अगस्त 1907 तक के अंकों में धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुआ था। यह ऐतिहासिक कथा थी।[4]

प्रेमचन्द ने उर्दू में जलवाए ईसार नाम का उपन्यास लिखा जो 1912 में प्रकाशित हुआ था, 1921 में वरदान शीर्षक से प्रकाशित हुआ। वरदान या जलवाए ईसार में वे सभी त्रुटियाँ और कमजोरियाँ है। जिनकी उम्मीद एक नौसिखए उपन्यासकार से की जा सकती है। निंसदेहः वरदान प्रेमचन्द की दुर्बल कृति थी।[5]

प्रेमचन्द के उपन्यास लेखन का उत्कर्ष काल सेवासदन के प्रकाशन से आरम्भ होता है, सेवासदन की रचना मूलतः उर्दू में 'बाजारे हुस्न' शीर्षक से 1917 में हुई थी पर उर्दू में प्रकाशकों की कमी के कारण यह तुरन्त प्रकाशित न हो सका, प्रेमचन्द ने उर्दू से निराश होकर पहले इसे हिन्दी में प्रकाशित करने का निश्चय किया और ''हिन्दी पुस्तक एजेंसी'' कलकत्ता में 1918 में, इस उपन्यास के साथि प्रेमचन्द का आगमन हिन्दी संसार में हुआ।[6]

सेवासदन के बाद उनके छोटे–बड़े 8 उपन्यास हिन्दी में प्रकाशित हुए। प्रेमाश्रम 1922, रंगभूमि 1925, कायाकल्प 1926, निर्मला 1927, प्रतिज्ञा 1929, गबन 1931, कर्मभूमि 1932, गोदान 1936।

प्रेमाश्रम और रंगभूमि दोनों पहले उर्दू में लिखे गए थे। प्रेमचन्द का हिन्दी में लिखा हुआ उपन्यास 'कायाकल्प' है। इसके लिए बाद प्रेमचन्द ने उर्दू की बैशाखी छोड़ दी। प्रतिज्ञा प्रेमचन्द के 1907 में प्रकाशित प्रेमा संशोधित रूप है। उनके उपन्यासों की सर्वप्रमुख विशेषता है कि उन्होंने समकालिन यथार्थ को बहुत कलापूर्ण ढंग से कथा साहित्य से जोड़ दिया, उन्होंने ने देश की पराधीनता के यथार्थ को उसे समस्त आयामों और जटिलताओं के साथ प्रस्तुत किया, वस्तुतः प्रेमचन्द के साहित्य में भावनात्मक राष्ट्रवाद को बहुत कम स्थान मिला है। क्योंकि देश की आजादी की समस्या उनके लिए मात्र भावानात्मक अथवा राष्ट्रप्रेम की समस्या नहीं थी वरन कहीं गहराई में देश के जनसमूदाय के आर्थिक शोषण और दमन से जुड़ी हुई थी।[7]

उनके उपन्यास आपातत मनोरंजन और उपदेश की सीमित परिधि से मुक्त कर यथार्थ का व्यापक आयाम प्रदान किया, प्रेमचन्द के प्रारम्भिक उपन्यासों में घटनाओं की योजना भी है। उन्होंने धीरे–धीरे घटनाओं को छोड़कर कार्यों को अपने कथा संसार का आधार बनाने लगते हैं यथार्थ से उनकी रचना का सम्बन्ध दिनों–दिन घनिष्टतर होता जाता है और आलोचकों के अनुसार उनके अन्तिम उपन्यास गोदान में यथार्थ अपने प्रखरतम प्रस्तुत हुआ है, प्रो० नलिन विलोचन लिखते हैं कि ''प्रेमचन्द के उपन्यास मनोरंजन के साधन भी हैं और सत्य के वाहक भी लेकिन गोदान इसका अपवाद है – वह

Created by Universal Document Converter

मात्र सत्य का वाहक है।'' प्रेमचंद का नारी विषय एक आदर्श रोमानी दृष्टिकोण से युक्त है, परम्रागत तर्क रहित और आधुनिक युग बोध के प्रतिकूल है, यह स्मृति ग्रंथों में वर्णित नारी आदर्शो का ही किंचित परिवर्तित रूप है इन मिथ्या आदर्शो पर आधुनिक जीवन की नींव नहीं रखी जा सकती, सेवासदन की शांता, प्रेमाश्रम की श्रद्धा और विधा, रंगभूमि की सौफिया, गोदान की मालती तेज और विद्रोहनी नारियां भी अपने को लेखकीय आदर्श के रूप के अनुरूप ढाल लेती है, महता गोविन्दी से उसकी स्तुति करते हुए कहते हैं नारी केवल माता है और इसके उपरान्त वह जो कुछ है वह सब मातृत्व का उपक्रम मात्र है। मातृत्व संसार की सबसे बड़ी साधना सबसे बड़ी तपस्या, सबसे बड़ा त्याग और सबसे महान विजय है।''[9]

प्रेमचंद हिन्दी के प्रथम कथाकार थे जिन्हें मानव मनोविज्ञान में गहरी पेट थी। वह पात्रों के चरित्रों का पूर्णतया देने के लिए पात्रों के मन की गहराईयों में घूस उनकी आन्तरिक भावानाओं का चित्रण करते हैं। इस प्रकार प्रेमचंद की उपन्यास यात्रा हिन्दी में सेवासदन आरम्भ होकर गोदान तक विभन्न सामाजिक, पारिवारिक, रानीतिक व धार्मिक विषयों का उठाती हुई आगे बढ़ती है। इसके अतिरिक्त प्रेमचंद ने मंगलसूत्र नामक उपन्यास का लेखन प्रारम्भ किया। किन्तु क्रुर नियती ने इस कृति को पूर्ण होने से पूर्व ही प्रेमचंद को हम से छिन लिया। किन्तु उन्होंने जो कुछ भी लिखा वही इतना महान् है कि हिन्दी साहित्य कभी भी उससे क्षण नहीं हो सकता। श्री मुरली मनोहर ने लिखा प्रेमचंद की प्रतिभा अनुपम थी। उन्होंने अपने उपन्यासों और कहानियों के माध्यम से मानव वाद का झण्डा ऊँचा किया।''

निष्कर्ष : मानव को विस्मयता और संकीर्णता के धरातल से ऊरपर उठाया। उन्होंने राष्ट्रीय नवचेतना का संदेश अपने साहित्य के द्वारा देश के कोने–कोन में प्रसारित किया। प्रेमचंद साहित्य के द्वारा उन्हें इन जटिल समस्याओं को समझाने का अवसर मिला। कथा साहित्य विलासिता और निष्कर्मयता के गर्त में बेहोश और निर्जीव पड़ा हुआ था। प्रेमचंद ने उसे जीवन दिया उसे मौन तोड़ा उसे बोलने की क्षमता दी।'[10]

प्रेमचन्द पूर्व हिन्दी में ऐसा कोई उपन्यासकार उपन्यास की कसौटी पर पूरी तरह खरा नहीं उतरा था। समकालीन उपन्यासकारों में अग्र पांक्तय है और विश्व साहित्य के उपन्यासकारों की भी समकक्षता कर सकते हैं।

संदर्भ :–

1. गोदान एक विवेचन – माया अग्रवाल, प्रकाशन नई दिल्ली, पृ. 1
2. गोदान नया परिप्रेक्ष्य – गोपाल राय, अनुपम प्रकाशन पटना
3. गोदान – नया परिप्रेक्ष्य – गोपाल राय, पृ.1
4. गोदान – नया परिप्रेक्ष्य – गोपाल राय, पृ.2
5. माया अग्रवाल – गोदान एक विवेचन, पृ. 5
6. गोदान नया परिप्रेक्ष्य – गोपाल राय, पृ. 3
7. गोदान एक विवेचन – माया अग्रवाल, पृ. 194
8. गोदान मात्र सत्य वाहक – गोपाल राय, पृ. 71
9. प्रेमचन्द के उपन्यासों का शिल्पविधान – कमलकिशोर गोयनका पृ. 56
10. गोदान एक विवेचन – माया अग्रवाल, पृ. 18

लाजवन्ती,
गाँव चरमाड़ा, त० इसराना,
जिला पानीपत, हरियाणा

Created by Universal Document Converter

उत्तर आधुनिकता एवं हिन्दी साहित्य

डॉ. अंजु देशवाल

सारांश : प्रत्येक सक्षम, समर्थ साहित्यकार अपने युग का दृष्टा, भोक्ता और निर्माता एक साथ होता है। साहित्य अपने युगीन परिवेश में आकार पाता है, इसलिए युगीन प्रवृत्तियों के प्रति समर्थन और विरोध के स्वर उसमें मिले–जुले रहते हैं। कालजयी साहित्य अतीत के प्रकाश में वर्तमान से जूझता है और भविष्य को निर्मित करने का प्रयास करता है। 'समकालीनता' कालसूचक शब्द न होकर 'वैचारिकता' से जुड़ा शब्द है। जिस कालखण्ड विशेष में जो विचारधारा, सशक्त, स्वीकार्य और प्रचलित रहती है, वही हमारी समकालीनता कहलाती है। पन्द्रहवीं–सोलहवीं शताब्दी से दूसरे शताब्दी के इक्कीसवें दशक तक आते–आते हमारी समकालीनता बदलने लगी। सूचना प्रोद्योगिकी के अमिट विस्तार के कारण वैश्वीकरण और विश्वग्राम की अवधारणाएं जड़ पकड़ने लगी, आर्थिक उदारीकरण के परिणाम स्वरूप 'डंकल प्रस्तावों के माध्यम से वैश्विक अर्थ व्यवस्था का निर्माण होने लगा। विगत तीस वर्षों में 'बहुराष्ट्रीय निगम' और विश्व व्यापार संगठन के माध्यम से मुक्त व्यापार को व्यावहारिक रूप दिया गया है। भौगोलिक उपनिवेशवाद का स्थान आर्थिक उपनिवेशवाद ने ले लिया और मरता हुआ पूंजीवाद पुनः पुनर्जीवित हो गया। बेल ने इस नए विश्व को 'उत्तर औधोगिक समाज' की संज्ञा दी। मार्शल मैक्लूहान, ल्योतार, जेमेसन, बौद्रीआ, देरिदा और हैबरमास ने इसे और अधिक प्रभावी ढंग से विश्लेषित किया।

इस उत्तर आधुनिक चिन्तन ने देखते ही देखते समाज, साहित्य, राजनीति, आर्थिक जीवन और कलाओं को अपने में समेट लिया। उत्तर आधुनिकता कोई निश्चित दर्शन न होकर विकसित होती हुई दार्शनिक प्रणाली मात्र है। भारतीय सन्दर्भ में शून्यवाद, मायावाद और बहुलवाद के सिद्धान्त इस उत्तर आधुनिकता में देखे जा सकते हैं। भारत में उत्तर–आधुनिकता की चर्चा साहित्य के क्षेत्र में दो दशक से अधिक पुरानी नहीं है। यह विचार है कि भारत अभी निर्धन और पिछड़ा देश है, इसलिए यहाँ उत्तर आधुनिकता पर विचार करना मानसिक पंगुता है, भारत की यथार्थ स्थिति को अनेदखा करना है। भारत आदिम युग और सुपरसोनिक युग में एक साथ रहता है। अशोक वाजपेयी भारतीय समाज की स्थिति पर टिप्पणी करते हुए कहते हैं कि हमारे यहाँ तो सारा इतिहास एक मेज पर थाली की तरह परोसा हुआ है। आप चाहें तो पहली शताब्दी की चटनी के साथ तीसरी शताब्दी की सब्जी मिलाकर, 17वीं शताब्दी के चावल और 20वीं शताब्दी की दाल के साथ खाइए। यह सुविधा पश्चिम के ऐतिहासिक समय में जी रहे देशों को भी नहीं है। उत्तर आधुनिक दृष्टि असल में भारतीयता का पुनर्वास है– समय की, काल की, शताब्दियों की, देखने की, अन्य दृष्टियों की, अनेक शैलियों की, जो भारतीय बहुलता रही है, उसका सहज स्वीकार है। हिन्दी साहित्य में उत्तर आधुनिकता की कुछ अवधारणाएं उभर कर आई हैं, जिन पर विचार निम्न प्रकार से किया जा सकता है।

पिछले कुछ दशकों से भारतीय समाज में बहुस्तरीय विकेन्द्रीयकरण की स्थितियां पैदा हुई हैं। 'वर्ण' और 'पुरूषवादी वर्चस्व सत्ता' केन्द्रीयता के महत्वपूर्ण सन्दर्भ रहे हैं, जो आज टूट रहे हैं, जिन्हें तोड़ने में उत्तर आधुनिक चिन्तन का भी योगदान है। वर्ण व्यवस्था टूटने से दलितों का उत्थान हुआ, उनमें जागरूकता आई और वे अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने लगे। उधर 'पुरूषवादी सभ्यता' के खिलाफ नारियों ने मोर्चा खोल दिया। वर्तमान में दलित और नारी विमर्श पर बड़ी संख्या में साहित्य रचा जा रहा है। उत्तर आधुनिक चिन्तन ने इस धारणा को मजबूती प्रदान की कि श्रेष्ठता किसी एक की बपौती नहीं है, बल्कि न्यूनतम श्रेष्ठता पर अधिकार सभी का है। उत्तर आधुनिकता ने जातीय संरचना का मूलाधार हिला दिया। दलित अधिकाधिक आरक्षण की मांग कर रहे हैं तो सवर्ण विरोध में आतंक फैला रहे हैं। नारी सन्दर्भ में देखें तो 'ऐतरेय ब्राह्मण' में कहा गया कि उत्तम नारी वही है जो पति को संतुष्ट करे, पुत्र को जन्म दे तथा पति की बात का जवाब न दे। भक्तिकाल में भी नारी माया रूपणी ही बनी रही और त्याज्य कहलाई। उत्तर आधुनिकता ने इसे चुनौती दी और आज नारी आत्मनिर्भर होने लगी, विभिन्न सामाजिक–राजनैतिक गतिविधियों में भाग लेने लगी। उत्तर आधुनिक युग में वह काम सम्बन्ध, प्रेम, विवाह, रोजगार आदि पर स्वतन्त्र निर्णय लेने लगी। वहीं उत्तर आधुनिक 'उपभोक्ता मानसिकता' के तहत नारी को वस्तु, भोज्या बना दिया गया। आज मीडिया, विज्ञापन में हर उत्पादन की बिक्री में उसका वस्तुकरण कर दिया गया।

विकेन्द्रीकरण की प्रक्रिया में ही शहरों की चकाचौंध व गाँव/कस्बों की बर्बादी सामने आ रही है। शहरी विकास के लिए ग्रामीण एवं बनवासी कीमत चुका रहे है। पर्यावरण और परिस्थितिकीय समस्याओं की ओर उत्तर आधुनिकता ने ध्यान आकर्षित किया है। पर्यावरण के तमाम मुद्दों पर अन्तर्राष्ट्रीय चिन्तन प्रारम्भ हुआ है। 'अर्थ सम्मिट' जैसे आयोजन इसके प्रमाण हैं।' भू–मण्डलीय ताप वृद्धि, ओजोन परत में छेद, पर्यावरण प्रदूषण जैसे मुद्दों पर सहमति बनती जा रही है। वैश्वीकरण की प्रक्रिया ने इस प्रवृत्ति को आगे बढाया है।

भारतीय राजनैतिक परिदृश्य में भी राजनैतिक दल अब प्रादेशिक दलों की सहायता के बिना केन्द्र में सरकार नहीं बना पा रहे है।। प्रदेशों में विभिन्न दलों की सरकारें हैं। पंचायत स्तर पर सत्ता का विकेन्द्रीयकरण हो रहा है। समाज में सत्ता के विखण्डन के दृश्य सामने आ रहे हैं। समाज में सेवाक्षेत्र का विस्तार भी बदलते परिदृश्य का परिणाम है। गत वर्षों में विशेषकर शहरों में, उत्पादन से अधिक महत्वपूर्ण सेवा क्षेत्र होने लगा है। 'कम्पयूटर साफ्टवेयर' इस सेवा

Created by Universal Document Converter

क्षेत्र का महत्वपूर्ण आधार बनकर तेजी से उभरने लगा है। विभिन्न कम्पनियों में मार्केटिंग विभाग बनने लगे हैं। विक्रयोपरान्त सेवा की व्यवस्था होने लगी है।

इतिहासकार विपिन चन्द्र मानते हैं कि भारत वैश्वीकरण और आर्थिक उदारीकरण के चलते विश्व अर्थ व्यवस्था का अंग बन गया है। दिलीप एस.स्वामी ने 1994 में ही भारत को आर्थिक दृष्टि से उपनिवेश घोषित कर दिया था। भारत निरन्तर उपभोक्ता समाज की ओर बढता जा रहा है। भारत का नागरिक ब्रोदिला के शब्दों में सतत् असंतुष्ट उपभोक्ता बनता जा रहा है। संचार क्रान्ति ने इस उपभोक्तावाद को मजबूत किया है। सामाजिक स्तरीकरण का आध ाार उपभोग का स्तर बनता जा रहा है। विज्ञापन उतेजना पैदा करके उपभोक्ता को समान खरीदने के लिए मजबूर करने लगे हैं। किशोर व युवावर्ग में उपभोग चेतना जबरदस्त रूप में दिखाई देती है। विज्ञापन के मायाजाल में उलझा भारतीय समाज उत्पाद नहीं विज्ञापनों द्वारा सम्प्रेषित उसकी छवि खरीद रहा है। वस्तुएं नहीं ब्राण्ड बिक रहे हैं।

उपभोक्तावाद के इस खतरे को हमारे देश के मनीषियों ने पहले ही भांप लिया था, इसलिए उन्होंने संयम, सदाचार पर अत्याधि ाक बल दिया। भारत में वैदिक और भक्तिकाल का साहित्य इस जगत प्रपंच की व्याख्या करता है। आचार की कठोरता और विचार में स्वतन्त्रता भारतीय चिन्तन का मूल मन्त्र रहा है। चिन्तन के क्षेत्र में चर्वाकवादी भी हैं और बौद्ध शून्यवादी भी, निर्गुणवाद भी सगुणवाद भी। भारत में सबके हित की बात कही गई न कि सर्वोत्तम की उत्तरजीविता की। कीरी और कुंजर को समान रूप से ईश्वर की कृति यहाँ माना गया और दोनों को जीने का समान अधिकार दिया गया। सर्वोदय और अंत्योदय आज भी हमारी सामाजिक व्यवस्था के अंग हैं। भूत ऋण अर्थात् प्रकृति के विभिन्न पदार्थों के प्रति मनुष्य ऋणी है, यह भाव भी भारत के सामाजिक पक्ष के चिन्तन का आधार रहा है। भारतीय समाज में सदैव पर्यावरण की रक्षा की बात कही गई है। पेड़ लगाने को 100 पुत्रों की प्राप्ति के समान पुण्य कार्य समझते थे। हमारी परम्परा में प्रकृति प्रेम है, प्रकृति के प्रति सहज भाव है, सहभाव है परन्तु प्रकृति पर विजय पाने के लिए उसके विनाश का दोहन आवश्यकताओं की पूर्ति तक स्वीकार्य है और धारणीय विकास हमारे जीवन और चिन्तन का अनिवार्य हिस्सा रहा है। विकेन्द्रीकरण और पर्यावरण चिन्तन वो आधुनिक चिन्तन हैं जो प्राचीन भारतीय समाज का ही अंग हैं।

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि भारतीय समाज की उभरी नई पहचान और परिधि पर फेंके गए वर्गों का उदय बदली हुई परिस्थितियों का ही परिणाम है। धर्म का वर्तमान उत्तर आधुकिन रूप मानव को मुक्त करने वाला है क्योंकि वह रूढिमुक्त है। विश्वीकरण को वे भारत के हित में मानते है।। बदले हुए परिदृश्य में विकेन्द्रीयकरण और बहुलता का सर्वाधिक महत्व है। भारतीय समाज में विचारों की स्वतंत्रता को सदा ही महत्व दिया गया। अनके मत, मतान्तरों की उपस्थिति, वर्ण, क्षेत्र, धर्म आदि की विभिन्नता हमारी राष्ट्रीयता में कभी बाधक नहीं बनी। उपभोक्तावाद के खतरों से भारतीय मनीषा परिचित थी, इसलिए सदा ही संयम ओर निग्रह पर जोर देती रही। इन तथ्यों को ध्यान में रखकर हम बदलते परिदृश्य में भी भारतीय समाज को अक्षुण्ण बनाए रख सकते हैं।

सन्दर्भ–

1. देवेन्द्र इस्सर, उत्तर आधुनिकता साहित्य और संस्कृति की नयी सोच।
2. रमेश उपाध्याय, आज का पूंजीवाद और उसका उत्तर आधुनिकतावाद।
3. सच्चिदानंद झा, भूमण्डलीकरण की चुनौतियां।
4. चमनलाल गुप्त, उत्तर आधुनिकता और समकालीन हिन्दी उपन्यास।
5. एस.एल.दोषी, आधुनिकता, उत्तर आधुनिकता एवं नव–समाजशास्त्रीय सिद्धान्त।

डॉ. अंजु देशवाल
हिंदी विभाग,
सहायक प्रोफेसर
श्री लालनाथ हिन्दू कॉलेज,
रोहतक।

Created by Universal Document Converter

झोलाछाप चिकित्स के कारण एवं परिणाम

12 महीपाल सिंह

सारांश : झोलाछाप चिकित्सा से अभिप्रायः— वह चिकित्सा व्यवस्था जिसमें अप्रशिक्षित, अनुभवहीनता तथा चिकित्सा के क्षेत्र में अल्पज्ञान प्राप्त व्यक्ति जो चिकित्सा के कार्य में व्यस्त हैं जा कि विना किसी चिकित्सा ज्ञान के उक्त व्यवसाय से जुडे हुए हैं ऐसे चिकित्सक प्रायः वे लोग होते है जो किसी चिकित्सक के क्लीनिक या नर्सिग होम में कुछ दिनो तक कम्पाउन्डर इत्यादि का कार्य करते है। और फिर अपना क्लीनिक खोलकर आमजन के जीवन से खिलवाड करने लगते है। अधिकांश ऐसे चिकित्सक ग्रामीण क्षेत्रों में अपना व्यवसाय चलाते है और ग्रामीण लोगों को यह लोग आसानी से अपना शिकार बना लेते है।

कारण

सरकारी चिकित्सकों की चिकित्सा सेवा के प्रति उदासीनता के कारण झोलाछाप चिकित्सकों को बढावा मिलता है। सरकार का लचीला व्यवहार व सारकारी डाक्टरों की चिकित्सा के प्रति गैर जिम्मेदारी पूर्ण रवैया के कारण झोलाछाप व्यवसाय फलता फूलता रहा है।

मेडिकल कालेजों और सरकारी अस्पतालों के डॉक्टरों के सम्बन्ध में सन 1983 में बना एक कानून पूर्णतः सरकारी डॉक्टरों को निजी प्रैक्टिस के सम्बन्ध में वाहयता दर्शाता है जिसकी डॉक्टर धज्जियां उडाते हुए निजी प्रैक्टिस करते है इतने वर्षों में कानून के उल्लघन के प्रति आज तक किसी डॉक्टर के खिलाफ कोई कार्यवाही नही हुई। इससे स्पष्ठ होता है कि शासन प्रशासन इन डॉक्टरों के प्रति रहम दिल है दूसरी तरफ सरकारी डॉक्टर निजी प्रैक्टिस न करने के नाम पर सरकार से भत्ता लेते है। साथ ही निजी प्रैक्टिस भी जारी रखते है। सवकुछ जानते हुए सरकार ने न तो प्रैक्टिस बन्दी कानून वापिस लिया और न ही इसके उल्लंघन के लिए आज तक किसी को दण्डित किया। सरकार और डॉक्टरों की इस परस्पर समझदारी के कई कारण सोचे जा सकते है इनमे एक सुनिश्चित कारण यह है कि खुद या किसी नाते रिश्तेदार के बीमार होने पर उन्हे सरकारी अस्तपतालों के गन्दे माहोल के वजाय नामी गिरामी डॉक्टरों के निजी अस्पतालों का सुविधाजनक तत्र मुहैया हो जाता है।

सरकारी डॉक्टरों की निजी प्रैक्टिस सन 1933 में प्रान्तीय सेवा संवर्ग के गठन के साथ ही प्रतिबन्धित कर दी गयी थी। इसके एवज में डॉक्टरों को प्रैक्टिस बन्दी भत्ता देने का प्रावधान था।

कई दशकों बाद सन 1981 में राज्य सरकार ने अचानक सोता सांप जगा दिया और प्रतिबन्ध हटाकर निजी प्रैक्टिस को स्वैच्छिक कर दिया हालांकि यह स्वच्छता सिर्फ दो साल चली और पुनः सन 1983 में सरकार को अपनी गलती का अहसास हुआ और कानून बनाकर निजी प्रैक्टिस एक फिर प्रतिबन्ध कर दी गयी और प्रैक्टिस न करने के एवज में भत्ता देने की व्यवस्था लागू कर दी गयी।

इस प्रतिबन्ध के खिलाफ कई डॉक्टर न्यायालय से स्थगन आदेश लाने में सफल रहे सरकार का रवैया उसवक्त भी नरमथा लिहाजा डॉक्टरों की निजी प्रैक्टिस वेखटक चलती रही लेकिन सन 1993 में परिचमी बंगाल के इस तरह के एक प्रकरण में सर्वोच्च न्यायालय ने एक फैसला दिया कि राज्य सरकार को कानून लागू करने का अधिकार है जाहिर है कि राज्य सरकार का सन 1983 का कानून प्रभावी हो गया और निजी प्रैक्टिस रूक जानी चाहिए थी लेकिन ऐसा नही हुआ प्रतिवध के बाबजूद डॉक्टर निजी प्रैक्टिस करते रहे । उन्हे न किसी ने रोका न टोका सन 2004 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने निजी प्रैक्टिस के कारण सरकारी अस्पतालों की वदहाली पर चिंता जताते हुए वर्षों से एक ही स्थान पर तैनात डॉक्टरों के स्थानातरण सम्बन्धी आदेश दिया लेकिन परिणाम जस कातस रहा उच्च न्यायालय के तमाम प्रयासों के बाबजूद भी सरकारी अस्पतालों की चिकित्सा व्यवस्था में कोई सुधार नजर नही आता दरअसल अव ऐसा लगने लगा है कि सरकारी डॉक्टरों की निजी प्रैक्टिस लाइलाज वीमारी वनचुकी है सन 1983 में जारी उ0प्र0 सरकारी डॉक्टर एलौपैथिक निजी प्रैक्टिस पर निर्वन्धिक नियमावली मे भी यह कहा गया था कि इसमें प्रावधान का उल्लंघन करने वाले सरकारी कर्मचारियों की आचरण नियमावली सन 1956 के तहत दुराचरण के दोषी होगें लेकिन सरकार को अवतक एक भी डॉक्टर दुराचरण करता हुआ नही दिखा

इसी तरह समय समय पर उच्च न्यायालय द्वरा दी गयी टिप्पणियां यथा

1. 11 सितम्बर 2006
2. 18 सितम्बर 2006
3. 12 दिसम्बर 2006

उक्त सभी तिथियों में चिकित्सकों की निजी प्रैक्टिस सम्बन्धी राज्य सरकार को कार्यवाही हेतु आदेश दिये गये लेकिन सभी आदेशों की अनदेखी की गयी।

संगीन जुर्म तो खैर अपनी जगह है— साधरण व्यक्ति यदि लालवत्ती लाइन के अन्दर आ जाऐ तो उसे जुर्माना भरना पड़ता है। गाडी का प्रदूषण नियत्रण प्रमाण पत्र न हो तो चालान भरना पडता है।

दरसल एक साधारण व्यक्ति और सरकारी डॉक्टर मे यही फर्क है। स्वास्थ्य सुविधाए बने मौलिक अधिकार नोविल पुरूकार विजेता अर्सत्सेनः हर वीमार के लिए उसे समय से दवा मुहैया कराने की जिम्मेदारी सरकार के कंधे पर डालते हुऐ अर्मत्यसेन ने स्वास्थ्य सुविधाओं को मौलिक अधिकार में शामिल करने की वकालत की है।

Created by Universal Document Converter

उनका कहना है कि देश के हर नागरिक को मुफ्त इलाज कराने का हक हासिल होना चाहिय। सेन ने भारत में स्वास्थ्य सेवाओं जा हाल वेहद खराव वताया है सरकार का प्रयास वडे काम के हो सकते है झोलाछाप डॉक्टर स्वास्थ्य मत्रालय सूत्रों के अनुसार भारतीय चिकित्सा अनुसांधन परिषद और राष्ट्रीय इनोवेशन फाउडेशन संयुक्त रूप से नुस्खो पर शोध के लिये समझोता हुआ जिसके अन्तर्गत परंपरागत चिकित्सा ज्ञान के आधार पर उपचार करने वाले वैध, नीम, हकीमों जिन्हे झोलाछाप डॉक्टरों की संज्ञा दी जाती है। लेकिन वैज्ञानिक महसूस कर रहे है किन उक्त ज्ञान के भण्डार को खंगालने से कुछ काम की चीजें हाथ आ सकती है। इस तरह के सरकारी प्रयास कही न कही झोलाछाप चिकित्सकों को प्रोत्साहन देते है। परिणामः ग्रामीण क्षेत्रों की स्वास्थ्य सेवाओं की वीमार स्थिति हालांकि भारत ने पिछले दशको में स्वास्थ्य मानको मे महत्वपूर्ण प्रगति की है लेकिन जन सख्या का एक वडा हिस्सा आज भी विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में उचित स्वास्थ्य सेवाओं से वंचित है आज देश में 15 लाख डॉक्टर व स्वास्थ्य कर्मी है जिसमें 13 लाख निजी क्षेत्र में है समुचित मानक की कमी ने झोलाछाप चिकित्सा को खूब पैर फैलाने का अवसर दिया है चूंकि निजी उच्चस्तर की सेवाएं अधिकतर नगरीय क्षेत्रों में है इसलिए नगरीय ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं की खाई और गहरी हो गयी है। जहां तक मैने अपने शोध विषय बरेली जनपद के ग्रामीण क्षेत्रों की चिकित्सा तथा स्वास्थ्य सेवाओं में झोलाछाप चिकित्सकों की भूमिका का समाजशास्त्रीय अध्ययन जो कि एम.जे.पी.रूहेखण्ड विश्वविद्यालय बरेली के अधीन शोध अध्ययन में यह पाया है कि निम्न विन्दुओं ने भी झोलाछाप चिकित्सा व्यवस्था को वढाया है कुल 300 इकाईयों को मैने अपना शोध का विषय वनाया है जिनका साक्षात्कार उपरान्त निम्न परिणाम पाया गया। महगी चिकित्सा व्यवस्था के प्रति दुष्टिकोण 76ः हाँ 10ः नही, 14ः कोई कुछ पता नही, ग्रामीण क्षेत्रों में योग्य चिकित्साकों का अभाव के प्रति दृष्टिकोण 90ः हाँ 10ः नही चिकित्सा से जुडे राज्यकर्मियों के स्वभाव के प्रति दृष्टिकोण सन्तोषजनक 10ः असन्तोषजनक 70ः तटस्थ 20ः राजकीय स्वास्थ्य केन्द्रों पर चिकित्साको की स्थिति सम्बन्धी के प्रति दृष्ठिकोण 30ः हाँ 70ः नही प्रति दिन चिकित्सालयों में आने सम्बन्धीदृष्टिकोण के प्रति 10ः हां 44ः नही शेष 46ः को कुछ नही पता यहां तक की ग्रामीण जनों के प्रति सहानुभूति पूर्वक व्यवहार के प्रति दृष्टिकोण 10ः हां 72ः नही शेष 18ः को कुछ भी नही पता।

निष्कर्ष : झोलाछाप चिकित्सा व्यवस्था का परिणाम यह होता है कि रोगी कभी कभी तो ऐसी स्थिति का सामना करते है कि वह और गम्भीर रोगी बनजाते है और उनकी वीमारी लाइलाज वनती चली जाती है लोग और अधिक कर्ज से दवते चले जाते हैं जिससे इस कृषिप्रधान भारत देश में और अधिक ऋण ग्रस्तता की स्थिति वनती चली जाती है जिससे लोगों का जीवन स्तर और निम्न स्तर का होता चला जाता है। लोग इस कारण अपनी अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति प्राप्त भी नहीं कर पाते है।

सन्दर्भ सूची

1. डॉ.पी.डी. मिश्रा एवं डॉ. श्रीमति वीना मिश्रा –प्राकृतिक चिकित्सा सिद्धान्त एवं व्यवहार प्रकाशन – रोहिताश प्रिण्टर्स, 268 एसवाग रोड लखनऊ प्रथम संस्करण 1998 पृष्ठ संख्या 106, 107, 108 उ0प्र0
2. अमर उजाला 18 फरवरी 2004 वर्ष 39 ओम 32 पृष्ठ 10 प्रस्तुति रमेश दुवे वरेली
3. दैनिक जागरण 04 फरवरी 2009 न्याय 144 पृष्ट 10 प्रस्तुति रमेश दुवे सस्करण
4. अमर उजाला 09 जनवरी 2004 पृ. 3 सस्करण वरेली
5. 15 फरवरी सन 2009 वर्ष 4 अंक 39 अमर उजाला वरेली स्सकरण
6. महीपाल सिंह शोध ग्रन्थ वरेली जनपद के ग्रामीण क्षेत्रों कीं चिकित्सा तथा स्वास्थ्य सेवाओं में झोलाछाप चिकित्सकों की भूमिका का समाजशास्त्रतीय अध्ययन वर्ष 2010 पेज नं. 155, 126, 127, 128, 129, 131, 137, 139, 141

महीपाल सिंह

प्रकाशन जफरवेग जेन कम्प्यूटर शहमत गंज बरेली। उ.प्र.

Created by Universal Document Converter

मोहन राकेश के नाटक ''आधे अधूरे'' का विवेचन

सारांश : मोहन राकेश (1925–1972) आधुनिका युग के प्रसिद्ध साहित्यकार थे विशेषकर उनके नाटक हिन्दी लेखन जगत में महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं, उन्होंने तीन नाटक लिखे थे जिनमें आधे अधूरे उनका अंतिम नाटक था। इसमें राकेश जी ने आधुनिक संदर्भों का इस प्रकार वर्णन किया है जो हर पाठक को झकझोरती है और सोने के लिए विवश करती है, उनके नाटक में परिवार के विघटन का चित्रण बड़े ही सजीव ढंग से हुआ है कि किस प्रकार यांत्रिक सभ्यता के दबाव में एक मध्यवर्गीय अनुशासनहीन परिवार आर्थिक व सामाजिक दबाव में परिवार के सभी सदस्य किस प्रकार अनिश्चित जीवन भोगी है। इस नाटक में उन्होंने मनुष्य के अर्न्तद्वन्द्व और उनकी मनोभावनाओं का बड़ा सुन्दर किया जो आज भी पाठक वर्ग पर अपना प्रभाव बनाए हुए हैं क्योंकि हर पाठक इस नाटक को पढ़कर कहीं न कहीं अपने अन्दर के अधूरेपन को उससे जोड़ता है।

मुख्य शब्द : उच्छृंखलताएं, विडम्बना, पारस्परिक सामंजस्य, आधुनिकीरण

आधे अधूरे 1969 में लिखित नाटक भारतीय परिवारों में व्याप्त एक सामाजिक समस्या को उठाया है जो आज हमारे समाज विशेषकर नागर समाज आज जिस सांस्कृतिक संक्रमण काल से गुजर रहा है। भौतिक सभ्यता और आधुनिकीकरण की अंधी दौड़ में हम ऐसे जकड़े गये है कि हम कसमसाने के सिवा कुछ नहीं कर सकते। आज जब नारी घर से निकल कर आर्थिक बोझ को कम करने के लिए नौकरी करने लगी और वह पुरूषों के सम्पर्क में आयी तो युगों पूर्व से विकृत काम–कुण्ठा ने मर्यादा का बांध तोड़ दिया। फलतः मध्यवर्ग एक ऐसी यंत्रणा से होकर गुजर रहा है कि परिवार अब परिवार ही नहीं रहा है। महानगरीय परिवार एक अजीब कशमकश, घुटन अलगावा, दिशाहीनता, पारिवारिक कलह के दौर से गुजर रहा है, आधे अधूरे में इसी समस्या को प्रस्तुत किया गया है।

एक परिवार के चार सदस्य सावित्री, बिन्नी, किन्नी और अशोक के मध्यम से राकेश जी के आधुनिक समाज का आईना प्रस्तु करने में सफलता प्राप्त हुई है। मोहन राकेश जी ने नाटक की एक समृद्ध भूमिका बांधते हुए नाटक के आरम्भ से ही पारिवारिक वातारण के ऐसे दृश्यों को दिखाया है जो नाटक के नाम को साथक करते है। वे एक ऐसे यथार्थ को सामने लाता है जिसे आज के मध्यवर्गीय परिवार झेर रहे हैं। यह और बात है कि यहाँ जैसी अनुशासनहीनता सभी परिवारों में नहीं मिलती किन्तु कमोवेश समस्याएं तो मिल ही जाएगी, वास्तव में नाटककार ने अपने पात्रों का नाम चरित्राकन करने में सर्वत्र यथार्थ पर दृष्टि रखी है। नाटककार ने स्पष्ट किया है कि जब परिवार की आय ठीक–ठाक थी तो चार सौ रूपये किराये के मकान में महेन्द्रनाथ का परिवार रहता था, परिवार के सभी सदस्य ऐय्याशी का जीवन व्यतीत करते थे और बच्चे कान्वेट में पढ़ते थे किन्तु उनकी अनुशासन हीनता और फिजुलखर्ची ने उन्हें अपने सामाजिक स्तर से ऐसा धकेला की एकाएक निम्नवित्तिया परिवार की श्रेणी में आ गया और यह सामाजिक स्तर की भूख परिवार को विघटन के स्तर पर ले आई क्योंकि सावित्री में यह भूख उच्चस्तर पर है और वह बड़े–बड़े नामधारियों के सम्पर्क में आ जाती है क्योंकि उसे व्यक्ति नहीं उसके पद से प्यार है। उसके धन से प्यार है।[2]

यह एक यर्थाथवादी नाट्य रचना है महेन्द्रनाथ नाटक के प्रारम्भ से ही एक टूटे हुए व्यक्ति के रूप में हमारे सामने आता है और उसका 'निठल्लापन उसकी और परिवार की जिन्दगी चौपट करने का जिम्मेदार है। अपने चारित्रिक विशेषता का प्रदर्शन वह स्वयं इस प्रकार करता है ''अपनी जिन्दगी चौपट करने का जिम्मेदार में हूँ, तुम सब की जिन्दगी चौपट करने का जिम्मेदार भी मैं हूँ। फिर भी मैं इस घर से चिपका हूँ क्योंकि अन्दर से मैं आराम तलब हूँ घरघुसरा हूँ, मेरी हड्डियों में जंग लगा है।''[3]

आधे–अधूरे नाटक में मोहन ने राकेश ने यथार्थ को अभिव्यक्त करने के लिए व्यंग्यात्मकता को अपनाया गया है कोई पात्र ऐसा नहीं है जिसकी भाषा में व्यंग्य की झल नहीं हो, विशेषकर महेन्द्रनाथ और अशोक के संवादों की भाषा को पूर्णतया व्यंग्यपरक है।

सावित्री – वैसे हजार बार कहोगे कि लड़के नौकरी के लिए किसी से बात नहीं करती? जब मौका निकालती हूँ उसके लिए तो।

महेन्द्रनाथ – हाँ–हाँ..... सिंघानिया तो लगा ही देगा, इसलिए तो बेचारा आता है यहाँ चल कर।

सावित्री को 'आधे–अधूरे' नाटक में मत्वकांक्षिणी आधुनिक नारी के रूप में राकेश जी ने प्रस्तुत किया है। जो पति की असमर्थता अथवा आर्थिक वैषम्य को उसका अधूरापन मानकर स्वयं अपने अधूरेपन को अन्य पुरूषों से सम्बद्ध करपूर्ण करने का प्रयास करती है और पर पुरूष आकर्षण उसके व्यक्तित्व को ही तोड़ रख देता है।

अशोक को नाटक में आधुनिक असंतुष्ट युवा वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत किया है। युवा पीढ़ी आज चर्चा का प्रधान विषय बन गई, 'कुछ परिस्थितियों ही ऐसी निर्मित हो गई है कि युवा पीढ़ी तीखी आलोचनाओं का शिकार बन रही है।' आधे–अधूरे नाटक में अशोक युवा पीढ़ी का बड़ा ही सशक्त ढंग से प्रतिनिधित्व करता है, अशोक में आवारापन, विरोधी, स्पष्टभाषी, फैशनपरस्त, दायित्वहीनता जो ही घर में युवा वर्ग की समस्याएं ही दिखाई देती है।

वास्तव में आज हमारा समाज जिस दोहरे चरित्र को जी रहा है उससे युवा वर्ग विक्षुब्ध है और उसे तमाम मूल्यों, आदर्शो और मान्यताओं से विद्रोह का बीड़ा उठा लिया है, इसी आधे–अधूरेपन का शिकार बिन्नी है जो मनोज के साथ घर छोड़कर भाग जाती है और उससे प्रेम विवाह कर लेती है, लेकिन अपने विवाहित जीवन में भी

Created by Universal Document Converter

वह सुख से न रह सकी। इसका कारण था परिवार से उत्तराधिकार में मिला आवारापन जो सावित्री के परिवार की मूलसमस्या का उद्‌घाटन करने में अपनी भूमिका निभाता है। वह इस विघटनशील परिवार की एक ऐसी सदस्या है जिसने विघटन को प्रत्यक्ष रूप से झेला है और यंत्रणाओं का शिकार है जो इस परिवार को अस्त–व्यस्त करने के साथ बिन्नी की गृहसीी को भी अपना शिकार बना लेता हैर, अपने मन के गुबार को वह माँ के सामने व्यक्त करती है –

''एक गुबर–सा है जो हर वक्त मेरे अन्दर भरा रहता है और मैं इंजार में रहती हूँ जैसे कि कब कोई बहाना मिले जिससे बहार निकाल लूं, मुझे अपने से एक अजीब सी चिढ़ होने लगती है। मुझे मनोज की उस बात पर बहुत गुस्सा आता है जब वह कहता है कि यह सब तो तुम अपने परिवार से लाई हो, मैं अन्दर से तिलमिला उठती हूँ, तुम बता सकती हो। ममा, कि क्या चीज है वह? और कहाँ है वह? इस घर की खिड़कियों, दीवारों में? छत में? तुममें? डैडी में? कहाँ छिपी है वह मनहूस चीज जो वह कहता है मैं इस घर से अपने अन्दर लेकर गयी हूँ।''[4]

इस प्रकार अशोक व बिन्नी दोनों में एक अधूरापन है जो उनको अपनी जिंदगी को अच्छी तरह व्यवस्थित होने में बाधक है।

''मोहन राकेश के इस नाटक पर डॉ० विजय बापट से ठीक लिखा है ''आधे–अधूरे बेहद चर्चा वाला नाटक है जिसमें आधुनिक जीवन का साक्षात्कार प्रस्तुत किया गया है। एक परिवार के विघटन, कड़वाहट का चित्रण किया गया है जिसकी विडम्बना यह है कि व्यक्ति स्वयं अधूरा होते हुए भी औरों के अधुरेपन को सहना नहीं चाहता, काल्पनिक पूरेपन की तलाश मैं अपने और अपने परिवार की जिंदगी को नरक बना देता है।''[5]

'आधे–अधूरे' समकालीन जिंदगी का पहला सार्थक हिन्दी नाटक है जो मौजूदा जीवन की विडंबना के सघन बिन्दुओं को बिना कोई हल या विकल्प पेश किये पूरी ईमानदारी के साथ प्रस्तुत करता है। वह वास्तव में एक स्तर पर स्त्री–पुरूष के बीच के लगाव और तनाव का दस्तावेज है, इस अभिसप्तक परिवार का हर एक सदस्य एक दूसरे से कटा हुआ है। घर की त्रासदायक 'हवा' से वह अपने और एक–दूसरे के लिए जहरीले हो रहे है''[6]

परिवार में सभी के आपसी सम्बन्ध करीब–करीब चुक गये है और अब साथ–साथ रहने की और सामाजिक सम्बन्ध ढोने की कटुता ही शेष है, पुरूष महेन्द्रनाथ जीवन में असफल होकर स्त्री की कमाई पर जीवन जी रहा है लेकिन फिर भी व्यंग्यों से स्त्री को छेदता रहता है, बच्चों की माँ–बाप के प्रति श्रद्धा तो काफर हो गयी है, ममता भी उड़ती चली जा रही है, बच्चे भी विपथगामी होते जा रहे है और नाटक के वाक्य अंधेरा अधिक गहरा होता जा रहा है – यथार्थ की अनुभूति करता है, यह नाटक आज के समय की महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

नाटक के अन्त में सभी पात्र एक–एक कर घर वापस लौट आते है सावित्री शिवदत्त के घर से निकल पड़ती है, महेन्द्रनाथ भी अपने मित्र के यहाँ से लौट आता है क्योंकि जिस अधूरेपन की तलाश में वे निकलें थे वह उन्हें हर जगह मिलता है अधूरापन बाहर नहीं उनके अन्दर है इसलिए हमें अपने अन्दर के अधूरेपन को निकालने की जरूरत है। तभी पूरा परिवार एक साथ खुश रह सकता है। परिवार ही वह धूरी है जो सभी सदस्यों को बौधे रखती है, आज प्रत्येक परिवार में कलह, उच्छृंखलता, अनुशासनहीनता दिखाई दे रही है जिसका कारण समाज का औद्योगीकरण तथा भौतिकवादी स्वभा, फिर भी यदि परिवार अनुशासित है तो यह बिखराव होने से बचा जा सकता है।

निष्कर्ष : मोहन राकेश का यह नाटक आज के समाज का सार्थक चित्रण करता है और अपने नाम की प्रांसगगिकता की कसौटी पर खरा उतरता है।

संदर्भ :–

1. आधे–अधूरे एक विवेचन, डॉ० कृष्णदेव शर्मा व डॉ० माया अग्रवाल (अनीता प्रकाशन, नई दिल्ली) पृष्ठ – 118
2. आधे–अधूरे एक विवेचन, डॉ० कृष्णदेव शर्मा व डॉ० माया अग्रवाल पृष्ठ – 65
3. आधे–अधूरे एक विवेचन, डॉ० कृष्णदेव शर्मा व डॉ० माया अग्रवाल पृष्ठ – 84
4. आधे–अधूरे एक विवेचन, डॉ० कृष्णदेव शर्मा व डॉ० माया अग्रवाल पृष्ठ – 79
5. आधे–अधूरे एक विवेचन, डॉ० कृष्णदेव शर्मा व डॉ० माया अग्रवाल पृष्ठ – 120
6. आधे–अधूरे एक विवेचन, डॉ० कृष्णदेव शर्मा व डॉ० माया अग्रवाल पृष्ठ – 143

लाजवन्ती,
गाँव चरमाड़ा, त० इसराना,
जिला पानीपत, हरियाणा

Created by Universal Document Converter

डॉ० राजेन्द्र सिवाच, डॉ० सतीश कुमार

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भारत–चीन सीमा विवाद और भारत की सुरक्षा पर इसके प्रभाव

सारांश : भारत व चीन संबंधों में तनाव का महत्त्वपूर्ण कारण सीमा विवाद है। उल्लेखनीय है कि भारत व चीन के बीच लग्भग 3488 किलोमीटर लम्बी सीमा रेखा है जो विभिन्न सन्धियों द्वारा परिभाषित तथा परम्पराओं द्वारा मान्यता प्राप्त है। दोनों देशों के मध्य मुख्य सीमा विवाद पूर्व में अरुणाचल प्रदेश तथा पश्चिम में लद्दाख से लग्ती सीमा पर है। भारत–चीन सीमा को सामान्यतः तीन क्षेत्रों में बांटा ग्या है– (1) पश्चिमी क्षेत्र (2) मध्य क्षेत्र (3) पूर्वी क्षेत्र

(1) पश्चिमी क्षेत्र– पश्चिमी क्षेत्र में चीन के साथ 2152 किमी लंबी भारतीय सीमा है। यह सीमा जम्मू और कश्मीर तथा चीन के झिंजियांग (सिक्यांग) प्रांत के बीच है।

अक्साई चिन– अक्साई चिन पर क्षेत्रीय विवाद की जड़ें ब्रिटिश साम्राज्य की अपने भारतीय उपनिवेश और चीन के बीच कानूनी सीमा की स्पष्ट व्याख्या न करने की विफलता में निहित हैं।

✦ ब्रिटिश राज के दौरान भारत और चीन के बीच दो सीमा, प्रस्तावित की गई थीं – जॉनसन लाइन (Johnson"s Line) और मैकडॉनाल्ड लाइन (McDonald Line)

✦ जॉनसन लाइन, अक्साई चिन को भारतीय नियंत्रण मे प्रदर्शित करती है, जबकि मैकडॉनाल्ड लाइन इसे चीन के नियंत्रण में प्रदर्शित करती है।

✦ भारत चीन के साथ अन्तर्राष्ट्रीय सीमा के रूप में जॉनसन लाइन को सही मानता है, जबकि दूसरी ओर, चीन मैकडॉनल्ड लाइन को भारत–चीन के मध्य अन्तर्राष्ट्रीय सीमा रेखा मानता है।[1]

✦ भारतीय–प्रशासित क्षेत्रों को अक्साई चिन से अलग करने वाली रेखा को वास्तविक नियंत्रण रेखा (Line of Actual Control) के नाम से जाना जाता है और यह रेखा चीन द्वारा दावा की जाने वाली अक्साई चिन सीमा रेखा के साथ समवर्ती है।

✦ भारत और चीन के बीच 1962 में विवादित अक्साई चिन क्षेत्र को लेकर युद्ध हुआ था। भारत का दावा है कि यह कश्मीर का हिस्सा है, जबकि चीन का दावा है कि यह झिंजियांग का हिस्सा है।

मध्य क्षेत्र – मध्य क्षेत्र में लगभग 625 किलोमीटर लम्बी सीमा रेखा लद्दाख से नेपाल तक जलविभाजक (वाटरशेड) के साथ–साथ चलती है। इस सीमा रेखा पर भारत के हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड राज्य, तिब्बत (चीन) के साथ लगते हैं।

पूर्वी क्षेत्र– पूर्वी क्षेत्र में सीमा रेखा 1140 किमी लम्बी है तथा यह भूटान की पूर्वी सीमा से लेकर भारत, तिब्बत और म्यांमार के मिलन बिंदु, तालू दर्रा के पास तक विस्तृत है। इस सीमा रेखा को मैकमोहन रेखा (हेनरी मैकमोहन के नाम पर) कहते हैं। यह सीमा रेखा हिमालय पर्वत के उत्तरी भाग में स्थित ब्रह्मपुत्र नदी के जलविभाजक से लगी हुई है, जहाँ लोहित, दिहांग, सुबनसिरी और केमांग नदियाँ उस जल विभाजक से होकर निकलती हैं।

मैकमेहोन रेखा– दोनों देशों के बीच सीमा विवाद की मुख्य जड़ मैकमेहोन रेखा है। अप्रैल, 1914 में भारत और तिब्बत तथा तिब्बत व चीन के बीच सीमा के निर्धारण के लिए तीनों राष्ट्रों के प्रतिनिधियों द्वारा शिमला समझौता किया ग्या। इसमें ब्रिटिश सरकार की ओर से भारत सचिव आर्थर हेनरी मैकमेहोन ने भाग लिया। इसमें बाहरी तिब्बत और भारत के बीच ऊँची पवर्तत श्रेणियों को सीमा मानकर एक मानचित्र पर लाल पेंसिल से रेखा बनायी गयी, जिसमें तीनों प्रतिनिधियों के हस्ताक्षर हुए। इसी सीमा रेखा को मैकमेहोन सीमा रेखा के नाम से कहा जाने लग। चीन को आन्तरिक तिब्बत और बाहरी तिब्बत के मध्य सीमा निर्धारण पर आपत्ति थी, इसी कारण उसने बाद में इस सन्धि पर हस्ताक्षर करने से मना कर दिया, लेकिन भारत और तिब्बत की सीमा के बीच उसे कोई आपत्ति नहीं थी। यही कारण है कि जब तिब्बत को चीन का अंग मानने वाले 1954 के भारतीय समझौते के दौरान चीन ने भारत–तिब्बत सीमा को लेकर कोई सवाल नहीं उठाया तो भारत यह मान बैठा कि मैकमेहोन रेखा पर कोई आपत्ति नहीं है।[2] 23 जनवरी, 1959 को चीन के प्रधानमंत्री चाघ–एन–लाई ने भारत सरकार को यह स्पष्ट कर दिया कि दोनों देशों के बीच कभी भी सीमाओं का निर्धारण नहीं हुआ है। जैसा कि उनके पत्र से स्पष्ट है–

"भारत व चीन के बीच कभी भी सीमाओं का निर्धारण नहीं हुआ है। मैकमेहोन रेखा चीन के तिब्बत क्षेत्र के वि:) आक्रमणकारी नीति का परिणाम थी। कानूनी तौर पर उसे वैध नहीं माना जा सकता है।' (I wish to point out that the Sino&Indian boundary has never formally delimited= Historically] no treaty or agreement on the Sino&Indian boundary has ever concluded between the Chinese Central Government and the Indian Government=)

इस प्रकार दोनों राष्ट्रों के बीच तनाव को ,क मुख्य कारण सीमा विवाद है जो कि अभी तक ज्यों का त्यों उलझा हुआ है। अक्साई चिन का क्षेत्र पाकिस्तान द्वारा चीन को दि, जाने के कारण सीमा समस्या और अधिक जटिल हो गयी है। सामरिक महत्त्व के इस क्षेत्र को चीन कभी भी नहीं छोड़ना चाहेग और इसी कारण उसने इस क्षेत्र को अनेक राजमार्गों से जोड़कर अपनी स्थिति को और सुदृढ़ बना लिया है।

Created by Universal Document Converter

डोकलाम विवाद (Doclam Issue)– डोकलाम में स्थित ट्राईजंक्शन वह बिंदु है, जहाँ भारत (सिक्किम), भूटान और चीन (तिब्बत) की सीमाएं मिलती हैं। यह ट्राईजंक्शन ही इस विवाद की जड़ है। भारत दावा करता है कि यह क्षेत्र बटांगला है, जबकि चीन का दावा है कि यह दक्षिण में 6–5 किमी दूर जिमोचेन में है। डोकलाम भूटान और चीन के बीच विवादित क्षेत्र है। भारत का कहना है कि यह क्षेत्र भूटान का है। चीनी सैनिक इस क्षेत्र में अक्सर घुस आते हैं जिससे भारत के रणनीतिक हित प्रभावित होते हैं। यह चिकन नेक गलियारा के नजदीक का क्षेत्र है। यदि चीन आगे बढ़ता है तो पूर्वोत्तर राज्यों का लिंक काट सकता है।

सन् 1988 और 1998 में चीन और भूटान के बीच समझौता हुआ था कि दोनों देश डोकलाम क्षेत्र में "ांति बना, रखने की दिशा में काम करेंगे।[3]

दोनों के दावे ब्रिटेन और चीन के बीच 1890 में हुई कलकत्ता संधि की प्रतिस्पर्द्धात्मक व्याख्याओं पर आधारित हैं। 2012 में भारत और चीन के विशेष प्रतिनिधियों के बीच हुए समझौते के अनुसार, दोनों पक्ष तब तक यथास्थिति बना, रखेंगे, जब तक उनके प्रतिस्पर्द्धी दावे को तीसरे पक्ष (भूटान) से परामर्श कर सुलझा नहीं लिया जाता।[4]

पैंगेंग झील– पैंगेंग झील लद्दाख में स्थित है। यह 4350 मीट की ऊँचाई पर स्थित 135 किलोमीटर लम्बी है और लद्दाख से तिब्बत तक फैली हुई है। इस झील का 45 किलोमीटर क्षेत्र भारत में स्थित है, जबकि 90 किलोमीटर क्षेत्र पर चीन ने नाजायज कब्जा कर रखा है। वास्तविक नियंत्रण रेखा (एलएसी) इस झील के मध्य से गुजरती है। यहाँ तक पहुँचने के लिए दुनिया की दूसरी सबसे ऊँचाई वाली सड़क, चांग्ला दर्रे से गुजरना पड़ता है जो करीब 17 हजार फीट की ऊँचाई पर है।

पैंगेंग झील से सटी आठ पहाड़ियां हाथ की उँगलियों के आकार की है। इसलि, इन पहाड़ियों को 'फिंगर एरिया' कहा जाता है। एक से लेकर चार नंबर तक की फिंगर पर भारत का अधिकार है, जबकि पाँच से आठ पर चीन का कब्जा है। ये पूरा फिंगर एरिया विवादित क्षेत्र है यानि मिलिट्री भाषा में कहे तो ये दोनों देशों के बीच एक बड़ा 'फ्लैश प्वाइंट' है।

विवाद का कारण– लद्दाख की पैंगेग झील में चीन ने अपनी पैट्रोलिंग बोट्स की तादाद बढ़ाकर 3 गुना कर (पहले 3 बोट्स, अब 9 बोट्स) दी। 5 मई, 2020 की रात को लद्दाख के पैंगेंग झील के करीब विवादित फिंगर एरिया में भी दोनों देशों के सैनिक आपस में भीड़ गए थे। इससे पहले साल 2017 में दोनों देशों के सैनिकों के बीच मारपीट और पत्थरबाजी का वीडियो तो वायरल हो ग्या था।[6]

गलवान घाटी– यह घाटी नुकीले पर्वतों के बीच जमीन का हिस्सा है, इन्हीं पर्वतों से गलवान नदी निकलती है। इस नदी का उद्ग्म अक्साई चिन में है, जबकि यह पूर्व से बहती हुई लद्दाख में भारतीय क्षेत्र के एलझसी के पास श्योक नदी में मिल जाती है। इस घाटी की भौगेलिक अवस्थिति लद्दाख के पूर्व और अक्साई चिन के पश्चिम में है।

वर्तमान में गलवान घाटी में भारत और चीन के मध्य तनाव की स्थिति अपने चरम पर है। दोनों देशों के सशस्त्र सैन्य बलों की हिंसक झडप्णें में दोनों पक्षों के सैनिक मारे गए। सन् 1975 के पश्चात् यह दोनों राष्ट्रों की सबसे हिंसक झड़प है। वर्तमान में चीन लगतार सीमा का उल्लंघन कर भारतीय क्षेत्रों में घुसपैठ कर रहा है। दोनों पक्षों के सैन्य बल सीमा पर तैनात कर दिए गए है। पिछले कुछ वर्षों में चीन ने सीमा के आस–पास के क्षेत्रों में सडकों का निर्माण कर भारत की सुरक्षा को प्रत्यक्ष रूप से चुन।

संदर्भ

1. सतीश कुमार, अनिल, राष्ट्रीय सुरक्षा, पृ॰ 144 चुनौतियां उत्पन्न की हैं।
2. राम सूरत पा डेय, चीन केन्द्रित भारत की सुरक्षा चुनौतियां, पृ॰
3. Washir Hussain, Þlndia and the upcoming Druk Democracy', Himalaya South Asian, 30=05=2008=
4. सतीश कुमार, अनिल, राष्ट्रीय सुरक्षा, पृ॰ 144–145
5. Times of India, 6 August, 2017
6. नवभारत टाइम्स, 7 मई, 2020

डॉ॰ राजेन्द्र सिवाच
Former prof. & Head DSS,
MDU, Rohtak
95184 655 59

डॉ॰ सतीश कुमार
Govt. College, Hisar

Created by Universal Document Converter

अन्नु

राष्ट्रीय संकट से निपटने में सहायक : सरकार तथा जनता का सहयोग

सारांश : राष्ट्रीय संकट से हमारा तात्पर्य उन परिस्थितियों से हैं जिनमें किसी राष्ट्र के सामने ऐसी समस्या खड़ी होती हैं जो उसके अस्तित्व को चुनौती देती हैं। यह समस्या प्राकृतिक तथा मानवीय किसी भी तरह की हो सकती है। आज के समय में ऐसी ही एक गंभीर समस्या पूरे विश्व के सामने कोरोना वायरस के रूप में आई है। हमारे देश में भी इस समस्या ने राष्ट्रीय संकट का रूप ले लिया है और जो समय बीतने के साथ गंभीर होता जा रहा है। जब तक इस वायरस का इलाज नहीं मिल जाता हमें सरकार के साथ मिलकर शांति तथा धैर्य से काम लेना होगा क्योंकि घबराहट हमारी सहनशक्ति के लिए सबसे बड़ा खतरा है जो हमारी हार की वजह बन सकता है। जिसके परिणाम बहुत भयानक हो सकते हैं। मुख्य रूप से फरवरी में भारत में कोरोना वायरस का संक्रमण देखने को मिला जब पहला प्रभावित व्यक्ति पाया गयाद्य इसके बाद सरकार ने अनेक कदम उठाए ताकि स्थिति को संभाला जा सके। स्वयं माननीय प्रधानमंत्री जी ने दूरदर्शन के सीधे प्रसारण में19 मार्च 2020, 24 मार्च 2020, 3 अप्रैल 2020, 14 अप्रैल 2020और 12 मई 2020 को जनता को संबोधित कियाद्य प्रधानमंत्री ने जनता को संबोधितकरते हुए 19 मार्च 2020,रविवार को जनता कर्फ्यू का एलान किया जिसका जनता ने बढ़ चढ़कर समर्थन किया। इसके बाद सरकार द्वारा समय–समय पर लगाया गयालॉक डाउन जून में अपने चार चरणों में पहुंच चुका है। तीन चरणों के बाद ज्यादातर राज्यों में सरकार ने लॉक डाउन में छूट दी। इन लॉक डाउन का पालन भी जनता ने अच्छे से किया जिससे यह काफी हद तक अपने उद्देश्य को पूरा कर सका। भारत जैसे देश में लॉक डाउन का उद्देश्यकोरोना वायरस से निपटने के लिए तैयारी मात्र था क्योंकि हम स्वास्थ्य और चिकित्सा के क्षेत्र में सीमित साधन रखते हैं। हमें अपने इन साधनों में वृद्धि करनी थी और साथ ही इन साधनों का सुचारु रूप से प्रयोग करने के लिए एक निर्धारित योजना का निर्माण भी करना था द्यलॉक डाउन ने हमें वह समय प्रदान किया ताकि हम इस वैश्विक समस्या से निपट सके द्यलॉक डाउन खोलना आम जनता खासकर दैनिक कामगारों,मजदूरों व किसानों के लिए बहुत जरूरी था इसलिए सरकार ने लॉक डाउन में छूट दी जिससे एक तरफ लघु उद्योगों, मजदूरों व किसानों को आजीविका तथा रोजगार उपलब्ध हो पाया वहीं सरकार ने भी कोरोना वायरस से निपटने की उचित संभावनाएं ढूंढने का लगातार प्रयास किया परंतु यह सब जनता व सरकार के आपसी सहयोग तथा समन्वय से संभव हो पाया। इतने बड़े देश में पूर्ण सहयोग संभव नहीं है इसीलिए छिटपुट घटनाएं सरकार व जनता के सहयोग की भावना को ठेस पहुंचाने वाली भी रही हैं।

प्रवासी मजदूरों की वापसी का मामला ऐसा ही एक गंभीर मामला है। प्रवासी मजदूर जिनमें हम मध्य प्रदेश, बिहार, उत्तर प्रदेश, पश्चिम बंगाल तथा पूर्वी भारत के क्षेत्रों से आए मजदूरों का वर्णन कर रहे हैं। लॉक डाउन की वजह से इन मजदूरों के रोजगार बंद हो गए जिस वजह से इनके सामने आजीविका की समस्या उत्पन्न हो गई। इसलिए इन लोगों ने अपने घर लौटने के प्रयास किए परंतु विभिन्न राज्यों की सीमाएं बंद हो जाने तथा परिवहन के साधनों पर रोक लग जाने की वजह से आवागमन बाधित हो गया। इस वजह से इन लोगों ने विरोध प्रदर्शन शुरू कर दिए और बहुत से लोगों ने पैदल ही घर वापसी का रास्ता अपनाया। सरकार की तरफ से भी समय–समय पर इस समस्या से निपटने के लिए उचित कदम उठाए गएद्य राज्यों की मांग पर केंद्र सरकार ने लॉक डाउन के दौरान विभिन्न राज्यों में फंसे मजदूर और दूसरे लोगों की वापसी की अनुमति दी।

सरकार के सामने आई समस्याएँ :

1. विभिन्न राज्यों में फंसे हुए प्रवासी मजदूरों व अन्य लोगों की संख्या का सही अनुमान न होना।
2. अपने राज्यों को लौट रहे मजदूरों के लिए उस राज्य के पास क्वारंटिन करने और खाने–पीने की सुविधाओं की अस्पष्टता।
3. जरूरी संसाधनों का अभाव।
4. मजदूरों के वेतन संबंधी मुद्दा।

विभिन्न राज्य सरकारों ने भी अपने अपने स्तर पर इन समस्याओं को हल करने का प्रयास किया

पश्चिमी बंगाल

यहां की सरकार ने कहा कि देश के विभिन्न हिस्सों में फंसे तमाम छात्रों, पर्यटकों और प्रवासी मजदूरों को चरणबद्ध तरीके से वापस लाया जाएगा। पश्चिम बंगाल की मुख्यमंत्री श्रीमती ममता बनर्जी ने 5 मई 2020 को ट्वीट किया कि कोटा में फंसे राज्य के लगभग ढाई हजार छात्रों को बसों से ले आया गया है अब अजमेर तथा केरल के त्रिवेंद्रमसे दो ट्रेनों से लगभग ढाई हजार तीर्थ यात्री, पर्यटक और प्रवासी मजदूर अगले 2 दिन में यहां पहुंच जाएंगे।

छत्तीसगढ़

छत्तीसगढ़ सरकार का अनुमान है कि उनके राज्य के सवा लाख श्रमिक देश के अलग–अलग राज्यों में फंसे हैं। अकेले जम्मू कश्मीर में 15000 से ज्यादा श्रमिक फंसेहुए हैं। राज्य सरकार का दावा है कि इन सभी श्रमिकों का डाटा बेस तैयार कर लिया जाएगा और इनको ऑनलाइन पंजीकृत किया जाएगा। कुछ हेल्प लाइन नंबर भी इसके लिए जारी किए गए हैं। अलग अलग राज्यों के मजदूरों के लिए नोडल अधिकारी भी बनाए गए हैं।

ओडिशा

ओडिशा सरकार के अनुसार विभिन्न राज्यों में फंसे लगभग

Created by Universal Document Converter

5 लाख प्रवासी श्रमिकों ने वापस आने के लिए सरकारी नियमों के अनुसार अपना पंजीकरण किया है ।

राजस्थान

राजस्थान सरकार के श्रम विभाग के सचिव बताते हैं कि राजस्थान से जाने वाले प्रवासियों का किराया नहीं लिया जाएगा द्यलॉक डाउन शुरू होने के दौरान बनाएगएशेल्टर होम से करीब 60 हजार प्रवासी मजदूरों को रवाना किया जाएगा। राजस्थानसरकार ने हर राज्य के लिए आईएएस और आईपीएस अधिकारी लगाए हैं जो वहां से जाने वाले मजदूरों की समस्याओं का समाधान करेंगे द्यश्रम विभाग के सचिव डॉ नीरज के अनुसार 15 लाख लोगों ने ऑनलाइन पोर्टल परआनेव जाने के लिए रजिस्ट्रेशन किया है।

असम

असम सरकार ने दूसरे राज्यों में फंसे मजदूरों, छात्रों, नौकरी करने वाले युवाओं और अपने दूसरे नागरिकों को सुरक्षित वापिस लाने के लिए 2 मई को हेल्पलाइन नंबर 74281 599 664 जारी किया। इसमें कहीं भी फंसे लोगों को मिस कॉल देने का आग्रह किया गया था। एक लाख दस हजार से अधिक लोगों ने मिस कॉल दिया। इन लोगों के रजिस्ट्रेशन के लिए विभिन्न प्रबंध किए गए।

बिहार

पटना से मुख्य मंत्री श्री नीतीश कुमार ने ऐलान किया कि बिहार सरकार छात्रों व मजदूरों के किराए के खर्च को वहन करने के अलावा अतिरिक्त 500 रूपये की राशि देगी।

मध्य प्रदेश

मध्य प्रदेश सरकार के अनुसार दूसरे राज्यों में 1 लाख मजदूर फंसे होने का अनुमान है। इनकी वापसी के लिए 31 ट्रेनों के प्रबंध करने की योजना रेल मंत्री को भेजी गई।

उत्तर प्रदेश

राज्य सरकार ने 7 लाख प्रवासी मजदूरों की वापसी का प्रयास किया तथा उन्हें राज्य के भीतर ही काम देने का आश्वासन दिया।

अलग अलग राज्य सरकारों ने प्रवासी नागरिकों की समस्या को अपने स्तर पर हल करने का प्रयास किया। केंद्र सरकार ने भी इस संदर्भ में उचित कदम उठाकर इस समस्या का हल निकालने का हर संभव प्रयास किया। कोरोना वायरस के बढ़ते प्रकोप की वजह से देश में 3 मई तक लॉक डाउन हो गया और इससे मजदूरों और प्रवासी कामगारों की चिताएँ और अधिक बढ़ गई जिसका जिक्र माननीय प्रधान मंत्री ने देश को संबोधित करते हुए भी किया द्यश्रम मंत्रालय एवं रोजगार मंत्रालय ने मजदूरों के वेतन संबंधी मुद्दे और उनकी समस्याओं के समाधान के लिए अहम कदम उठाया। मजदूरों के वेतन संबंधी मुद्दे और उनकी समस्याओं को हल करने के लिए देश भर में 20 कंट्रोल रूम बनाए गए। इनको स्थापित करने का उद्देश्य इन कंपनियों व फैक्टरियों पर दबाव डालकर मजदूरों को वेतन दिलवाना था जो कि वेतन देने से इनकार कर रहे थे।

हालांकि यह प्रयास नाकाफी रहे क्योंकि अलग–अलग स्थानों से इन प्रवासियों के आक्रोशित स्वर सुनाई देते रहे। किसी को परिवहन के साधनों की उपलब्धता न होना, तो कहीं किराया लिया जाना, तो कहीं उचित प्रबंधन का अभाव तथा क्वारंटिन स्थलों का अच्छे से प्रबंधन न होना आदि विभिन्न समस्याएं दिखाई देती रही।

इस कठिन समय में कुछ व्यक्तियों ने अपने स्तर पर भी जरूरत मंदो की मदद की और सरकार के प्रयासों के फलस्वरूप अनेक प्रवासी अपने घर पहुँच सके।

वर्तमान विषय के संदर्भ में जानकारी एकत्रित करने हेतु मैंने कुछ छात्राओं से एक सर्वे के माध्यम से उनके विचार जानने का प्रयास किया। ये छात्राएँ झज्जर के अलग–अलग गांवों से हैं और उच्च शिक्षा ले रहीं हैं। इनसे एक सर्वे के माध्यम से पूछा गया कि राष्ट्रीय संकट की स्थिति में सरकार तथा जनता के सहयोग का क्या महत्व है। सभी छात्राओं ने इस विषय के पक्ष में अपनी राय दी और कहा कि जनता और सरकार का सहयोग राष्ट्रीय संकट का सामना कर सकता है। इन्होंने कोरोना वायरस जैसी राष्ट्रीय आपदा से निपटने के लिए सरकार का साथ देने की बात कही। उन्होंने माना कि वे प्रधानमंत्री के जनता से सीधा संपर्क प्रसारण को देखती थी तथा उन्होंने और उनके आसपास के लोगों ने प्रधानमंत्री द्वारा कही बातों का अनुसरण भी किया। 74 प्रतिशत ने माना कि सरकार का लॉक डाउन खत्म करने का फैसला सही है परंतु 24 प्रतिशत ने इसका विरोध किया। सभी ने इस बात को स्वीकार किया की राष्ट्रीय संकट ही नहीं सामान्य परिस्थिति में भी सरकार व आम जनता के मध्य सहयोग होना चाहिए जो कि एक लोक कल्याणकारी राज्य के लिए बहुत आवश्यक है। जब उनसे पूछा गया कि जनता सरकार से किस तरह सहयोग कर सकती है तो उन्होंने कानून के पालन की बात कही। मजदूरों की समस्या संबंधी विषय पर उन्होंने अपनी राय दी और कहा कि अगर सरकार सही समय पर समस्या को हल करने संबंधी निर्णय लेती तो समस्या इतनी गंभीर नहीं होती केवल 9 प्रतिशत ने ही सरकार के निर्णय को सही माना। उन सभी के विचार थे कि प्रवासी मजदूरों की समस्या को हल करने के लिए सरकार को उनकी सुरक्षा तथा जीवन यापन का प्रबंध करना चाहिए था। साथ ही परिवहन के साधनों का उचित प्रबंध भी आवश्यक था। इससे यह समस्या इतनी गंभीर ना होती। जब उनसे पूछा गया कि प्रवासी मजदूरों की समस्या के भविष्य में क्या परिणाम होंगे तो उन्होंने माना कि लोगों के वापिस अपने गृह राज्य लौटने से मजदूरों का राज्य में अभाव हो जाएगा। सभी छात्राओं का यह मानना था कि इससे कारखानों और कृषि मजदूरों का अभाव राज्य को सहना पड़ेगा। जब उनसे पूछा गया कि इसमें आम लोगों की क्या भूमिका हो सकती है कि यह समस्या गंभीर ना होती तो 71 प्रतिशत ने यह माना कि प्रवासी मजदूरों को सुरक्षा का विश्वास दिलाया जाता और उनकी आर्थिक मदद की जाती तो उन्हें यहां से जाने से रोका जा सकता था। उन्होंने सरकार व जनता के सहयोग के लिए लगभग

Created by Universal Document Converter

एक जैसे विचार व्यक्त किए। उनका मानना था कि कानून व नियमों का पालन करके जनता सरकार के साथ सहयोग कर सकती है। नागरिक अधिकारों और कर्तव्यों का पालन सरकार और जनता के सहयोग को मजबूत बनाता है।

निष्कर्ष :

अंत में हम वर्तमान स्थिति को देखते हुए यह तो नहीं कह सकते कि कोरोना वायरस और उससे जुड़ी बाकी समस्याएं हल हो चुकी हैं बल्कि आने वाला समय लोगों तथा सरकार दोनों के लिए चुनौती लेकर आएगा जिससे निपटने का अहम साधन जनता व सरकार के आपसी सहयोग से ही निकलेगा। विकट परिस्थितियों में लोगों ने सरकार का साथ छोड़ दिया तो स्थिति गंभीर हो जाएगी और साथ ही सरकार को भी उचित कदम उठाने होंगे ताकी रोजगार के साधन तथा जरूरत के सामानों का अभाव न हो, क्योंकि भुखमरी अपने आप में एक गंभीर समस्या है जिसके परिणाम बहुत भयानक हो सकते हैं। हम इस बात से इनकार नहीं कर सकते कि लॉक डाउन की वजह से रोजगार के साधनों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है जिससे की आर्थिक संकट जैसी स्थिति बनने लगी है परंतु संयम तथा धैर्य से सीमित साधनों में भी जीवन यापन कर हम इस संकट से निकल सकते हैं। हम आशा करते हैं कि आने वाला समय हमारे लिए स्वास्थ्य तथा समृद्धि लेकर आएगा तथा यह तभी संभव है जब हम मिलकर इस संकट का सामना करें।

संदर्भ:

1. www-hindustantimes- Com
2. https;//aajtak-in-today-in/story/world_figure & china & coronavirus & toll & soars&to & 636 & confirmed &cases&over &31thousand&1&1161836-html
3. दैनिक जागरण, हरियाणा,15 अप्रैल 2020.
4. दैनिक भास्कर, हरियाणा,15 अप्रैल 2020.
5. www-bbc-com] 5 may 2020
   क. प्रभाकर मणि तिवारी की रिपोर्ट
   ख. आलोक प्रकाश पुतुल की रिपोर्ट
   ग. संदीप साहू की रिपोर्ट
   घ. मोहर सिंह मीना की रिपोर्ट
   ड. नीरज प्रियदर्शी की रिपोर्ट

Mrs. Annu
Assistant Professor,
Political Science,
Maharaja Agrasen P.G College for Women, Jhajjar.
ANNU.BAHMANIA@GMAIL.COM
Mobile : 999-20-44806.

Created by Universal Document Converter

भारत में चुनाव सुधार : एक समीक्षा

डॉ० ममता देवी

सारांश : भारत में संसदीय लोकतांत्रीय शासन प्रणाली की स्थापना की गई हैं, जिसमें जनता एक निश्चित समय के लिए अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करती है। जनता द्वारा निर्वाचित ये प्रतिनिधि उस काल में देश का शासन चलाते है। इसलिए लोकतन्त्र के संचालन के लिए चुनाव आवश्यक है। चुनावों के द्वारा ही सरकार को वैधानिकता प्राप्त होती है। लोकतन्त्र की सफलता स्वतन्त्र तथा निष्पक्ष चुनावों पर ही निर्भर करती है।

संविधान के लागू होने से लेकर अब तक देश में 17 आम चुनाव हो चुके हैं जिनके द्वारा मतदाताओं ने कई बार सत्ता परिवर्तन भी किया है। परन्तु फिर भी यहां की चुनाव प्रणाली में अनेक कमियां है। भारतीय चुनाव प्रणाली की मुख्य कमियां निम्नलिखित हैं :

1. **राजनैतिक दलों को प्राप्त जनसमर्थन और उन्हें प्राप्त स्थानों के अनुपात में अन्तर (Dispeity between the People Support to Political Parties and the Number of Seats Won by them)** : भारतीय चुनाव प्रणाली का एक मुख्य दोष यह है कि एक चुनाव क्षेत्र से वह उम्मीदवार निर्वाचित घोषित कर दिया जाता है, जिसे अन्य उम्मीदवारों से अधिक मत प्राप्त होते है, चाहे पराजित उम्मीदवारों को मिलें मतों का योग विजयी उम्मीदवार को मिले मतों से कितना भी अधिक क्यों न हो ? इस चुनाव प्रणाली में प्रायः उस दल को सत्तारूढ़ दल होने का अवसर मिल जाता है जिसे देश के मतदाताओं का बहुमत प्राप्त नहीं होता और जिसे प्राप्त हुआ मत प्रतिशत (Percentage of Votes) विपक्ष को मिले मत प्रतिशत की तुलना में बहुत कम होता है। आज तक केन्द्र में सत्तारूढ़ होने वाले किसी भी दल को 50 प्रतिशत मतों का समर्थन प्राप्त नहीं हुआ, फिर भी इसे स्पष्ट बहुमत, दो–तिहाई बहुमत और कई बार उससे भी अधिक स्थान प्राप्त हुए हैं।

2. **चुनावों में धन की बढ़ती भूमिका (Increasing Role of Money in Elections)** : चुनाव में एक और गम्भीर समस्या है चुनावों में धन की बढ़ती हुई भूमिका हमारे संविधान निर्माता इस विशय में पहले से ही सजग थे, इसलिए उन्होंने लोकसभा व राज्य विधानसभा के सदस्य के चुनाव के लिए खर्च की जाने वाली राशि की सीमा निश्चित की। आरम्भ में यह सीमा लोकसभा के चुनाव के लिए 35 हजार थी जिसे बाद में बढ़ाकर 4.5 लाख कर दिया गया। दिसम्बर 1997 में सरकार ने एक अधिसूचना जारी की। इस अधिसूचना के अनुसार लोकसभा के चुनाव के लिए यह राशि 15 लाख तय की गई, वर्तमान में चुनाव आयोग ने लोकसभा सीट के लिए बड़े राज्यों में धनराशि 70 लाख व छोटे राज्यों में 54 लाख तय की है, परन्तु व्यवहारिक रूप में यह राशि भी बहुत कम बताई जाती है और कहा जाता है कि व्यावहारिक रूप में लोकसभा चुनाव में उम्मीदवार को इससे कई गुणा अधिक धन खर्च करना पड़ता है। चुनावों में पैसा पानी की तरह बताया जाता है। कई बार नोट से वोट खरीदे जाते है। चुनावों में विदेशी धन जो प्रायः काला धन होता है, का प्रयोग भी एक गम्भीर समस्या है।

3. **चुनाव में सत्तारूढ़ दल द्वारा सरकारी मशीनरी का दुरूपयोग (Misuse of Official Mechinary by Ruling Party in Elections)** : चुनावों में सत्तारूढ़ दल सरकारी मशीनरी का खुलकर दुरूपयोग करता है। मतदाताओं को सत्तारूढ़ की और आकर्षित करने के लिए चुनावों के समय मन्त्रियों तथा कुछ अन्य उच्च अधिकारियों द्वारा प्रायः स्कूलों, अस्पतालों, पुलों आदि को शिलान्यास किये जाते है। सरकारी कर्मचारियों के वेतन तथा भत्तों में वृद्धि की जाती है और कर्जे माफ किये जाते है। नई विकास योजनाऐं घोषित की जाती है।

4. **निर्वाचन अधिकारियों पर अनुचित दबाव (Pressure on Election Officers)** : प्रायः यह आरोप लगाया गया है कि सत्ताधारी दल चुनाव अधिकारियों पर अनुचित दबाव डालकर अपने हितों को साधने का प्रयत्न करते है। पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त सेन वर्मा ने एक बार स्वयं स्वीकार किया था कि ''राजनीतिक दबाव में आकर मतदाता सूचियों में गड़बड़ी की गई। मन्त्रियों तक ने चुनाव में हस्तक्षेप किया। संसद सदस्यों तक के नाम मतदाता सूचियों में से निकाल दिये गए। ताकि वे चुनाव न लड़ सकें तथा प्रतिद्वन्दी उम्मीदवारों के नामांकन पत्र भारी संख्या में रद्द कर दिए गए। चुनाव के पहले और चुनाव अधिकारियों को तंग करने की शिकायत भी कम नहीं है।

5. **मतदाता सूचियों के सम्बन्ध में समस्याऐं (Problems Relating to Votes Lists)** : चुनाव से पहले सत्तारूढ़ दल द्वारा मतदाता सूचियों में फेरबदल करना भी भारतीय चुनाव प्रणाली की एक मुख्य समस्या है। मतदाता सूचियों को दोहराने के नाम पर विरोधी वर्गों के मतदाताओं के नामों को निकालने तथा अपने समर्थकों के नामों को सूचियों में जोड़ने का प्रयास किया जाता है।

6. **निर्दलीय उम्मीदवारों की बढ़ती हुई संख्या (Increasing Number of Independent Candidates)** : भारतीय चुनावों में निर्दलीय उम्मीदवारों की संख्या बढ़ती जा रही है। यह बढ़ती हुई संख्या चुनाव व्यवस्था में कई प्रकार की कठिनाइयां पैदा करती है और सारा चुनाव दृश्य धुंधला पड़ जाता है। अधिकतर उम्मीदवार तो मजाक के लिए चुनाव में खड़े हो जाते है या फिर वे प्रमुख उम्मीदवारों से धन बटोरने के लिए चुनाव में खड़े हो जाते हैं।

7. **मतदाताओं की अनुपस्थिति (Absence of the Voters)**: हमारे चुनावों में बहुत से मतदाता भाग लेते ही नहीं। मतदान चुनाव

Created by Universal Document Converter

में रूचि लेते ही नहीं। मत पत्र का प्रयोग न करना एक प्रकार से लोकतन्त्र को धोखा देना ही है। अक्सर देखने में आता है कि 60 प्रतिशत मतदाता वोट डालते है।

8. चुनाव याचिकाएं (Election Petitions) : हमारी प्रणाली की एक अन्य त्रुटि यह है कि चुनाव में की गई धांधलियों के विरूद्ध याचिकाएं चुनाव के बाद दर्ज कराई जाती है, जिनके निर्णय होने में कई वर्ष लग जाते है। इस प्रकार यह याचिकाएं चुनाव से भी अधिक खर्चीली व कष्टदायी बन जाती है।

9. कुछ अन्य कमियां (Some Other Weakness) : उपरोक्त कमियों के अतिरिक्त भारतीय चुनाव व्यवस्था की कुछ अन्य कमियां प्रायः देखने को मिलती है, जैसे फर्जी मतदान, चुनाव नियमों का उल्लंघन, चुनाव अधिकारियों द्वारा पक्षपात, चुनाव आयोग के पास अपना स्वतन्त्र कर्मचारी वर्ग न होना, मतदान केन्द्रों पर अवैध रूप से कब्जा आदि।

भारतीय चुनाव प्रणाली में सुधार करने के लिए करने के लिए समय–समय पर विभिन्न समितियों को नियुक्त किया गया। इन समितियों के सुझावों के अतिरिक्त राजनैतिक दलों, चुनाव आयोग, कई अन्य सार्वजनिक संस्थाओं तथा कुछ प्रबुद्ध व्यक्तियों ने चुनाव पद्धति में सुधार के बारे में जो सुझाव दिये है, वे इस प्रकार हैं –

1. आनुपातिक प्रतिनिधित्व (Proportional Representatives) : दलों को प्राप्त जन समर्थन और उन्हें प्राप्त स्थानों के अनुपात में गम्भीर अन्तर की समस्या के लिए एक सुझाव आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली को अपनाने का है। यह सुझाव प्रमुख विधिवेता नाना पालकीवाला ने दिया है। एक अन्य सुझाव देश में सूची प्रणाली (List System) को अपनाए जाने का है, जिसके अनुसार प्रत्येक राजनीतिक दल को उस द्वारा प्राप्त मतों के अनुपात में स्थान मिल सकेगा। भारतीय जनता पार्टी द्वारा भी इस प्रणाली का समर्थन किया जाता है। परन्तु यह प्रणाली बहुत जटिल है और भारत जैसे विशाल देश में जहां अशिक्षित लोगों की संख्या अधिक है। इस प्रणाली का व्यावहारिक रूप में सफल होना बहुत कठिन है।

2. चुनाव खर्च को सीमित करना (To Check Election Expenses) : चुनावों में खर्च होने वाले धन का सीमित करना बहुत जरूरी है। चुनाव में धन की बढ़ती भूमिका को कम करने के सम्बन्ध में निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकते हैं :

✧ राजनीतिक दलों तथा उम्मीदवारों का चुनाव में खर्च होने वाले धन का व्यापक रूप से हिसाब–किताब रखना चाहिए।

✧ प्रत्याशी द्वारा किये जाने वाले व्यय की सीमा वास्तविकता के आधार पर निर्धारित की जानी चाहिए।

✧ चुनाव आयोग ने यह सिफारिश की है कि चुनाव के सम्पन्न हो जाने के बाद चुनाव व्यय का गलत ब्यौरा देने वाले उम्मीदवार को जुर्माने के साथ–साथ 6 महिने से एक वर्ष तक का कारावास भी दिया जाना चाहिए।

✧ चुनाव की अवधि में उम्मीदवार या राजनीतिक दलों को सार्वजनिक संस्थाओं तथा सरकार द्वारा अनुदान पर रोक लगाकर चुनाव में धन की शक्ति को कुछ हद तक कम किया जा सकता है।

✧ चुनाव से नाम वापस लेने और चुनाव की तिथि के बीच का अन्तर कम से कम करने से चुनाव खर्च में कमी की जा सकती है।

✧ चुनाव खर्च का पूर्ण अथवा आधा खर्च सरकार द्वारा दिया जाए।

✧ राज्य के द्वारा कुछ सामान्य सुविधाओं की व्यवस्था करने पर भी धन की भूमिका को कुछ कम किया जा सकता है।

3. मतदाता सूचियों को दोहराना (Revision of Electoral Rolls) : यह आवश्यक है कि मतदाता सूचियों को पूर्ण बनाए रखने का कार्य निरन्तर चलता रहे। मरने वाले लोगों के नाम सूचियों से कटते रहे और मताधिकार की आयु प्राप्त कर लेने वालों के नाम जुड़ते रहे। मतदाता सूचियां उद्यतम (Up to date) बनती रहनी चाहिए।

4. सत्ताधारी दल द्वारा सरकारी मशीनरी के दुरूपयोग पर रोक (To Check the Misuse of Official Mechinery by the Ruling Party) : शासकदल द्वारा सरकारी मशीनरी के दुरूपयोग को रोकने के लिए समुचित व्यवस्था होनी चाहिए। चुनाव के दिनों में मन्त्रियों के उद्घाटन समारोहों पर जाने, लोकहित की योजनाओं की घोषणा करने, कर्ज माफ करने तथा अधिकारियों व कर्मचारियों की सुविधाओं में वृद्धि करने पर रोक लगा देनी चाहिए।

5. उम्मीदवारों तथा राजनीतिक दलों के लिए आचार संहिता (Code of Conduct for Candidates and Political Parties) : चुनाव की प्रक्रिया आरम्भ होने से पहले चुनाव आयोग द्वारा सभी राजनीतिक दलों के परामर्श से एक आचार संहिता का निर्माण किया जाए जिसका सभी इस कठोरता से पालन किया जाए। चुनाव आयोग को यह अधिकार देना चाहिए कि वह इस आचार संहिता का उल्लंघन करने वालों के खिलाफ कड़ी कार्यवाही कर सके।

6. पहचान पत्र जारी करना (Identity Cards) : चुनाव में फर्जी मतदान को रोकने के लिए देश के सभी मतदाताओं को पहचान पत्र जारी किये जाने चाहिए। पहचान पत्र को प्रस्तुत किये बिना किसी भी मतदाता को मतदान नहीं करने देना चाहिए।

7. अनिवार्य मतदान (Compulsory Voting) : चुनाव में भाग लेने वाले मतदाताओं की संख्या में निरन्तर कमी आने को रोकने के लिए यह सुझाव दिया जाता है कि सरकार को कानून बना करके मतदाता के लिए अपने मत का प्रयोग करना अनिवार्य कर दिया जाये। इसका उल्लंघन करने वालों के लिए जुर्माना अथवा दंड की व्यवस्था की जाए।

8. संसद और राज्य विधानसभाओं के लिए एक साथ चुनाव की व्यवस्था : 1967 के चौथे आम चुनाव तक भारत में लोकसभा और राज्य विधान सभाओं के चुनाव एक साथ होते थे, लेकिन 1971 ई० में यह स्थिति समाप्त हो गयी और अब तक कभी पुनः यह स्थिति नहीं बन पायी है। यदि लोकसभा और विधान

Created by Universal Document Converter

सभाओं के चुनाव एक साथ हो तो राज्य द्वारा चुनाव व्यवस्था में किया जाने वाला खर्च और विविध राजनीतिक दलों के उम्मीदवारों द्वारा किये जाने वाले खर्च दोनों में ही बहुत कमी हो जायेगी। इसके अतिरिक्त, लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में चुनाव अलग–अलग होने पर सदैव ही चुनाव का वातावरण बना रहता है और यह स्थिति राज्य व्यवस्था के लिए अत्यधिक अहितकर है।

9. चुनाव अवधि में सार्वजनिक संस्थाओं को अनुदान देने पर रोक : चुनाव की अवधि में दलों या उम्मीदवारों द्वारा सार्वजनिक संस्थाओं को अनुदान देने पर रोक लगा देनी चाहिए।

10. अन्य सुझाव (Other Suggestions) :

✧ चुनाव आयोग द्वारा किया गया यह सुझाव बहुत महत्वपूर्ण है कि चुनाव प्रचार के दौरान उम्मीदवारों तथा राजनीतिक दलों द्वारा नोट लिखने तथा पोस्टर चिपकाने से खराब की गई दीवारों पर सफाई तथा पुताई का कार्य उन उम्मीदवारों अथवा दलों द्वारा किया जाए अन्यथा उनके विरूद्ध कड़ी कार्यवाही की व्यवस्था हो।

✧ आरक्षित क्षेत्रों में कुछ समय बाद परिवर्तन होता रहना चाहिए।

✧ चुनाव आयोग को अधिक स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए, ताकि वे निष्पक्ष तथा स्वतन्त्र चुनाव करा सके।

✧ मुख्य चुनाव आयुक्त की नियुक्ति करते समय लोकसभा में विपक्ष के नेता, उच्चतम न्यायालय मुख्य न्यायाधीश तथा राज्यसभा की सलाह ली जानी चाहिए।

✧ मतदान केन्द्रों पर कब्जा करने के प्रयत्न करने वालों के विरूद्ध कड़ी कार्यवाही की जाए।

✧ प्रचार माध्यमों से मतदाताओं को शिक्षित किया जाए ताकि वे झूठे प्रचार के चक्कर में न पड़े और अपने मत का प्रयोग सोच समझकर करें।

✧ चुनाव सम्बन्धी झगड़ों के शीघ्र निपटारे के लिए व्यवस्था होनी चाहिए।

✧ चुनाव में उम्मीदवारों तथा राजनीतिक दलों द्वारा अपने चुनाव प्रचार में धर्म अथवा जाति के प्रयोग पर कड़ी पाबंदी लगा देनी चाहिए।

चुनाव सुधारों के लिए पिछले कई वर्षा से सरकार चिंतित और प्रयत्नशील है। 61वें संविधान संशोधन, 1998 द्वारा संविधान के अनुच्छेद 326 में संशोधन कम मतदान की आयु 21 वर्ष की बजाय 18 वर्ष कर दी गई। पंजाब के निर्वाचनों को ध्यान में रखकर सरकार ने 19 जनवरी, 1992 को एक अध्यादेश जारी कर संसदीय एवं विधानसभा निर्वाचनों में प्रचार की न्यूनतम अधिकारिक अवधि को 20 दिन से घटाकर 14 दिन कर दिया। उल्लेखनीय है कि पंजाब के चुनावों को ध्यान में रखकर सरकार ने एक अन्य अध्यादेश द्वारा गैर–राजनैतिक दलों के प्रत्याशियों की चुनावों के दौरान मृत्यु पर चुनाव रद्द न करने का उपबन्ध किया था।

मुख्य चुनाव आयुक्त श्री टी०एन० शेषन ने चुनावों की खामियों को दूर करने के लिए कई कदम उठाये थे : मतदाताओं को पहचान पत्र जारी करना, चुनावों में फिजूल खर्ची रोकने के लिए पर्यवेक्षक तैनात करना मतदान के पहले 6 दिन 'ड्राइ डे' घोषित करना। जन प्रतिनिधि कानून 1951 में संशोधन किया गया ताकि मतदान में इलैक्ट्रानिक मतदान – मशीनों का इस्तेमाल किया जा सके। जनप्रतिनिधित्व (संशोधन) अधिनियम 1988 के अन्तर्गत एक नई धारा 13 'ग' शामिल की गई। जिसमें यह प्रावधान है कि चुनाव के लिए मतदान सूचियों को तैयार करने, संशोधित करने और उन्हें ठीक–ठाक करने के लिए लगाए गए कर्मचारी और अधिकारी उस अवधि के लिए चुनाव आयोग में प्रतिनियुक्ति पर माने जाऐंगे, जिसमें वे इस तरह का काम करते है और उन पर चुनाव आयोग का नियन्त्रण, अधिक्षण तथा अनुशासन लागू होता। सरकार ने कानून बनाकर चुनाव आयोग को बहुसदस्यीय संस्था बना दिया है। जनप्रतिनिधि अधिनियम में संशोधित मुख्य प्रावधान निम्नलिखित है–

1. जमानत राशि में आयोग द्वारा पहले की अपेक्षा तय की गई राशि को वर्तमान समय में बढ़ाया गया है ताकि सदस्यों की संख्या को कम किया जा सके।
2. सभी राजनीतिक दलों के लिए चुनाव आयोग में पंजीकृत करवाना आवश्यक कर दिया गया है। सभी राजनीतिक दल अपने दल के संविधान में प्रावधान करेंगे कि दल भारत के संविधान में तथा समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता व लोकतन्त्र के सिद्धान्तों में पूर्ण आस्था व भक्ति रखेगा और भारत की प्रभुसत्ता, एकता व अखण्डता का समर्थन करेगा।''
3. पंजीकृत राजनीति दलों के उम्मीदवारों का नामांकन कम से कम एक मतदाता द्वारा और निर्दलीय उम्मीदवार का नामांकन कम से कम 10 मतदाताओं द्वारा प्रस्तावित किया जाऐगा। ऐसा अरूचितकर उम्मीदवारों (Non Serious Candidate) की संख्या को कम करने के लिए किया गया है।
4. चुनाव, अधिकारियों अथवा चुनाव पर्यवेक्षकों को मतदान केन्द्र के कब्जे के मामले में गिनती रोकने का अधिकार दे दिया गया है।
5. एक व्यक्ति एक साथ लोकसभा तथा विधान सभा का चुनाव नहीं लड़ सकता।
6. सभी प्रकार का चुनाव प्रचार चुनाव की समाप्ति के समय से 48 घंटे पहले समाप्त कर दिया जाएगा।
7. लोकसभा के चुनाव के उम्मीदवार के लिए चुनाव खर्च सीमा बढ़ाकर 70 लाख कर दी गई।

इस संशोधन के अनुसार चुनाव से 48 घंटे पहले शराब की बिक्री पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाएगा तथा मतदान केन्द्रों के पास शस्त्र लेकर घूमने पर पाबन्दी लगा दी गई है।

निष्कर्ष : संक्षेप में, हम कह सकते है कि भारत में अब तक 17 आम चुनाव हो चुके हैं। ये सभी चुनाव सामान्यतः शान्तिपूर्ण ढंग से सम्पन्न हुए है, लेकिन साथ ही चुनाव पद्धति और चुनावों में कुछ

Created by Universal Document Converter

ऐसी बातें देखने में आयी हैं, जिन्होंने जनता की चुनावों में आस्था को कम किया है यदि उन्हें समय रहते नियन्त्रित नहीं किया गया, तो कालान्तर में चुनावों के प्रति आस्था को और अधिक आघात पहुँचा सकती है। इसलिए चुनाव आयोग को और सशक्त बनाया जाए, ज्यादा अधिकार दिए जाए, ताकि वह चुनाव सुधार के ज्यादा प्रयास कर सके। हालॉकि बहुत सारे सुधार किए भी गए है लेकिन वो पर्याप्त नहीं है।

संदर्भ सूची

1. डब्ल्यू०एच० मोरिस जोन्स, ''दा गर्वनमैन्ट एण्ड पॉलिटिक्स इन इण्डिया'', बी०आई० पब्लिकेशन, 1974, दिल्ली
2. डी०डी० बसु, ''एन इन्ट्रोडक्शन टू दा कान्स्टीट्यूशन ऑफ इण्डिया'', पैनटिश हॉल प्रैस, नई दिल्ली, 1994
3. ग्रेनविल आस्टिन, ''इण्डियन कान्स्टीट्यूशन'', ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, 1966
4. पी०वी० सेतू, ''इण्डियन ज्यूडिशिरी, हिमालय पब्लिकेशन हाऊस, 2004

डॉ० ममता देवी
सहायक प्रोफेसर
राजनीति विज्ञान विभाग
महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय
रोहतक–124001 (हरियाणा)

Created by Universal Document Converter

हिन्दी साहित्य और स्त्री विमर्श का सम्बन्ध

सारांश :

साहित्य समाज का दर्पण होता है इसलिए समाज के बदलाव के साथ हमारे साहित्य में भी बदलवाव आता है, प्राचीन भारत में महिलाओं की स्थिति काफी अच्छी थी, मनु स्मृति में भी कहा गया है यत्र नार्मुस्तु पुज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता परन्तु मध्यकाल आते–आते तत्कालीन परिस्थितियों और विदेशी आक्रमणों के कारण स्त्रियों की दशा में गिरावट आने लगी, समाज में व्याप्त बुराईयों, परिस्थितियों ने महिलाओं के जीवन को पूर्णत अंधकारमय बना दिया था।

एक साहित्यकार का दायित्व किसी राजनेता और इतिहासकार से बढ़कर होता है। इसलिए समय–समय पर हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श के विभिन्न पहलुओं को साहित्यकारों ने उठाया और स्त्री–मुक्ति का प्रस्थान माना गया है। स्त्री अधिकारों की आवाजें हिन्दी साहित्य में उठती रही है तथा समाज के पोंगा–पंथियों का विरोध किया गया है।

मुख्य शब्द : स्त्री सशक्तिकरण, नवजागरण काल, छायावाद युग, वैज्ञानिक विकास।

स्त्री विमर्श ने हिन्दी साहित्य में अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कराई है, जो स्त्री समाज में हायिये पर थी, उन्हें आधुनिक काल के कवि समाज ने केन्द्र में स्थापित कर दिया। स्त्री न केवल अपने अधिकारों के प्रति सेचत हुई है बल्कि उनकी रक्षा के लिए जो लड़ाई शुरू की है वह अब आंदोलन में परिवर्तित हो चुकी है। इस आंदोलन में समाज सुधार आंदोलनों व लेखकों भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बालकृष्ण भद्र, प्रतापनारायण मिश्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, प्रसाद निराला ने अपनी लेखनी से बल प्रदान किया। प्रताप नारायण मिश्र ने समाज में विधवाओं की स्थिति की दयनीय दशा का वर्णन ''कौन करे जो नहिं कसकत, सुनी विपत्ति बाल विधवन की।''

स्त्री शिक्षा पर भारतेन्दु ने काफी जोर दिया था, 3 नवम्बर 1873 की कवि वचन सुधा में लिखा है ''यह बात तो सिद्ध है कि पश्चिमोत्तर देश की कदापि उन्नति नहीं होगी जब तक की यहां की स्त्रियों को शिक्षित नहीं किया जाएगा, क्योंकि यदि पुरूष विद्वान और पंडित हो और उसकी स्त्रियों मुर्ख रहेगी तो उनमें आपस में कभी स्नेह नहीं होगा और नित्य कलह होगा।''

भारतेन्दु काल में जिस स्त्री विमर्श को साहित्य में स्थान मिला उसे सबसे ज्यादा बढ़ावा द्विवेदी युग में मिला जिनमें मैथिलीशरण गुप्त और अयोध्यासिंह उपाध्याय की रचनाएं साकेत, हिन्दु, भारत भारती व यशोधरा।

हिन्दू में मैथिलीशरण गुप्त में विधवाओं की समर पाओ की तरफ समाज का ध्यान आकर्षित किया –

''विधवाओं का पुनर्विवाह, नहीं उच्च आदर्श निवाह,
पर उससे अच्छा सौ बार जो है दुराचार व्याभिचार,
पुष्ट करो तुम अपना पक्ष, किन्तु न भूलो अंतिमलक्ष।''[2]

कविरत्न सत्यनारायण जी ने नारी को मानव जाति का उतमांश कहा है उसके कुशलक्षेम के बिना समाज की भौतिक और अध्यात्मिक उन्नति हो नहीं पावेगी, नारी भोग्या नहीं है। उन्होंने नारी के प्रति अपार श्रद्धा को व्यक्त किया है।

''अहो पूज्य भारत महिलागण, अहो आर्यकुल प्यारी,
अहो आर्य गृहलक्ष्मी सरस्वतीा, आर्य लोक उजियारी,
अहो आर्य मर्यादा स्रोतमी, आर्य हृदय की स्वामिनी,
आर्य ज्योति आर्यत्व द्योतिनी, आर्य वीर्य धन दायिनी''[3]

19वीं शताब्दी में शुरू हुए समाज सुधार आंदोलनों के कारण समाज में लोगों का ध्यान स्त्री मुक्ति के प्रश्नों पर गया और लगातार प्रयास किए जाने लगे और छायावादी युग में पंत, प्रसाद और निराला ने समाज में व्याप्त स्त्री समस्याओं को उठाकर उनकी दशा व दिशा का वर्णन किया। प्रसाद ने अपने नाटकों के माध्यम से विशेषकर स्कन्दगुप्त, चन्द्रगुप्त और ध्रुवस्वामिनी, हूणसेनापति – सैनिकों से आदेश देता है इन बालकों को तेल से भीगा हुआ कपड़ा डालकर जलाओं और स्त्रियों को गरम लोहे से दागों।

स्त्रियाँ पुकार करती हुई कहती है –

''हमारे निर्वलों के बल कहां हो?
हमारे दीन के सबल कहा हो?''
मातृगुप्त – कायरों स्त्रियों पर यह अत्याचार''[4]

ध्रुवस्वामिनी वो प्रसाद का एक समस्या नाटक है जिसमें उन्होंने स्त्री की स्वतन्त्रता, विधवा विवाह और पुरूष की दुष्ट प्रवृत्तियों जो एक स्त्री को एक सामान की तरह समझते थे और अपनी कमजोरी को छिपाने के लिए युद्ध न करके अपनी पत्नी को अपना राज्य बचाने के लिए दूसरे व्यक्ति को सौंपने के लिए तैयार है। इसमें प्रसाद ने ध्रुवस्वामिनी के माध्यम से कहना चाहा है कि जब तक अपनी रक्षा के लिए खुद प्रसास नही करेगी तब तक कुछ नहीं हो सकता इसलिए ध्रुवास्वामिनी के विरोध का वर्णन किया है ''मैं कोई उपहार में दी जाने वाली वस्तु नहीं, अगर तुम मेरी रक्षा नहीं कर सकते तो मुझे मेरी इच्छा के खिलाफ भेंट भी नहीं कर सकते।''

निराला जी ने भी स्त्री जीवन में आमूल चूल परिवर्तन के लिए महान् विप्लव की ही जरूरत महसूस की जा रही थी। यह विप्लव वैज्ञानिक विकास द्वारा संभव हुआ और उसी की प्रगति के साथ–साथ स्त्री चिंतन के धरातल लगातार विकसित होते गए। निराला ने 1929 में सुधा में लिखा 'इस समय संसार में वैज्ञानिक ज्ञानलोक का जितना ही विस्तार बढ़ता जा रहा है। सभ्यता तथा स्त्रियों से संबंध रखने वाले विचार क्रमशः उतने ही बदलते जा रहे हैं समाज जाति तथा व्यक्ति की स्वतन्त्रता के साथ ही ऊँची सुनाई दे

Created by Universal Document Converter

रही है।''[5]

निराला ने सुधा में 1930 हिन्दु अबला शीर्षक से चिंतन किया है, हिंदू धर्म के ठेकेदार पंडितों ने शास्त्र के नियमों का न जाने कैसा उल्टा–पुल्टा विधानगढ़ दिया गया है, निराला ने इसे हिन्दू धर्म का नृशां पापाचार कहा है, जिसमें स्त्री की इच्छा का कोई सम्मान नहीं।''[6]

छायावादी कवियों ने स्त्री विमर्श के शिक्षा संबंधी एवं अधिकारों संबंधी कठिनाइयों पर विचार किया पर उसमें दलित स्त्री के शिक्षा संबंधी कठिनाइयों पर विचार नहीं किया गया जिस स्तर पर होना चाहिए, हाँ महादेवी ने इस पर चर्चा की है उसमें किसी के वर्चस्व की बात नहीं है वह विमर्शो के घमासान के ऊपर स्त्री की अलग एवं पुरूष की अलग सत्ता के रूप में विवेचित करने के बजाए दोनों को एक मानवी सत्ता के एक समाज अंग के रूप में मानने एवं एक समाज अधिकार देने की हिमायत करता है।

मुंशी प्रेमचंद जी ने भी अपनी कहानियों और उपन्यासों में स्त्री की भिन्न–भिन्न समस्याओं को उठाया है सेवासदन, निर्मलार, गबन, गोदान। गोदान में उन्होंने मेहता के माध्यम से अपने विचार व्यक्त किये है। प्रो० मेहता, ''स्त्री पुरूष से उतनी ही श्रेष्ठ है जितना प्रकाश अंधेरे से, मनुष्य के लिए क्षमा, त्याग और अहिंसा जीवन के उच्चतम आदर्श है। नारी इस आदर्श को प्राप्त कर चुकी है। मैं कहता हूँ कि उसका सारा अध्यात्म और योग एक तरफ, नारियों का त्याग एक तरफ।''[7]

प्रेमचन्द जी ने आधुनिक शिक्षा को विध्वंसकारी, अकल्याणकारी व हानिप्रद बताते हुए उसे नारी के लिए प्राकृतिक गुणों से युक्त उस शिक्षा की कल्पना की है जो मानव के लिए कल्याणकारी गुणों से युक्त हो।

''मैं ये नहीं कहता कि देवियों को शिक्षा की जरूरत नहीं है, जरूरत है और पुरूषों से अधिक मैं नहीं कहता, देवियों को शक्ति की जरूरत नहीं है और पुरूषों से अधिक, लेकिन वह विद्या और वह शक्ति नहीं जिससे पुरूष ने संसार को हिंसा क्षेत्र बना डाला है, अगर वहीं विद्या और वहीं शक्ति आप भी लेगी तो संसार विध्वंस हो जाएगा, मरूस्थल हो जाएगा, आपकी विधा और आपके अधिकार हिंसा और विध्वंस में नहीं, सृष्टि और पालन में है।''[8]

हमारे साहित्य में प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक नारी के साथ होने वाले भेदभाव व अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठाई गई है।

आचार्य शुक्ल के कथनानुसार ''प्रत्येक देश का साहित्य जनता की चितवृत्तियों का प्रतिबिम्ब होता है इसलिए इन चितवृत्तियों में परिवर्तन के साथ साहित्य भी परिवर्तित होता रहता है।'' अब समाज में स्त्रियों हर क्षेत्र में पुरूष के साथ कंधा से कंधा मिलाकर चुनौति प्रस्तुत कर समाज, साहित्य में अपना लौहा साबित कर रही है।

भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू ने भी कहा था कि किसी भी शब्द का उत्थान और पतन उस राष्ट्र की महिलाओं की स्थिति पर काफी अंशों में निर्भर करता है। मुझे पूरा विश्वास है कि आज भारत की प्रगति उसकी महिलाओं की उन्नति से मापी जा सकती है। आज सम्बन्धों में पारस्परिक सामंजस्य व पवित्रता का अभाव दिखाई देता है। आधुनिक स्त्रि किसी बंधन में रहना नहीं चाहती। इसलिए लिए पति–पत्नी के सम्बन्धों का नया रूप सामने आया है। इसके साथ–साथ दलित स्त्री विमर्श को भी साहित्य में स्थान मिला है।

निष्कर्ष : इस प्रकार हिन्दी साहित्य नारी की स्थिति को मजबूत करने का हमेशा से प्रयास करता रहा है और उन व्यक्तियों और समाज में व्याप्त बुराईयों को कटघरे में खड़े करते रहे हैं। जो नारी को नरक में धकेल स्वयं महापुरूष बनना चाहते हैं।

संदर्भ :–

1. जगदीश चतुर्वेदी अनामिका पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स लिमिटेड, नई दिल्ली स्त्री वादी साहित्य विमर्श।,
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ० बहादुर सिंह, हिन्दू गुप्त पृ. 120
3. हिन्दी साहित्य का इतिहास, डॉ० बहादुर सिंह, पृ. 339
4. स्कन्दगुप्त नाटक जयशंकर प्रसाद, पृ. 64
5. नवलनन्द किशोर सम्पादक निराला रचनावली खण्ड–6 पृ. 255 राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली
6. नवलनन्द किशोर सम्पादक निराला रचनावली खण्ड–6 पृ. 275 राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली
7. गोदान : एक विवेचन – माया अग्रवाल, अनीता प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 226
8. गोदान : एक विवेचन – माया अग्रवाल, अनीता प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 273

लाजवन्ती,
गाँव चरमाड़ा, त० इसराना,
जिला पानीपत, हरियाणा

Created by Universal Document Converter

संगीत एवं नाट्य कला का सामंजस्य

डॉ. अनिता शर्मा

सारांश : नाट्य और संगीत समूचे संसार की सभी संस्कृतियों में अत्यंत निकट और नैसर्गिक सहयोगी रहे हैं। विश्व की अन्य संस्कृतियों के कलाचितकों के चिन्तन में भारतीय कलाओं या भारतीय उपमहाद्वीप की कलाओं का नाट्य और संगीत का सामंजस्य और सम्बन्ध स्वीकार किया गया है। यह भारतीय कला और भारतीय इतिहास की एक सच्चाई है। व्यवहारिक तौर पर नाट्य और संगीत परम्परा पृथक विधा के तौर पर नहीं देखे जाते और यह सम्बन्ध अत्यन्त प्राचीन समय से रहा है। नाट्य शास्त्र को ''पंचम वेद'' माना जाता है। नाट्य शास्त्र के अनुसार इस पंचम वेद की रचना ब्रह्मा ने की है। ब्रह्मा जी ने चारों वेदों का अनुसरण करके ''नाट्य वेद'' नामक ''पंचम वेद'' की रचना की ऋग्वेद से पाठ्य या बोलने के अंश, सामवेद से गीत, यजुर्वेद से अभिनय और अथर्ववेद से श्रृंगार आदि रसों को ग्रहण किया। ब्रह्मा जी ने गान्धर्व की शिक्षा शिव जी के आदेशानुसार नन्दीगण से प्राप्त की थी। यह सिखने के बाद एक नट की कल्पना की तो तत्काल एक मुनि अपने पाँच शिष्यों के साथ वहाँ उपस्थित हो गए। ब्रह्मा जी ने इनको सांगोपांग नाट्यवेद सिखाया। मुनि ने पाँचों शिष्यों की सहायता से गीत और रस आदि से युक्त अनेकों नाटकों की रचना करके बह्मा जी को आन्नदित किया। ब्रह्मा जी ने उन्हें वरदान दिया कि तुम तीनों लोकों में ''भरत'' कहलाओगे, नाट्यवेद भी तुम्हारे नाम पर भरत कहलाएगा। इसके बाद मुनि को ब्रह्मा जी ने आदेश दिया कि नाट्य के प्रचार के लिए तुम भारतवर्ष में निवास करो। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि नाट्य और संगीत का अटूट सम्बन्ध है। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। भारतीय चिन्तनधारा की एक बड़ी मौखिक विशेषता यह रही है कि यहाँ पर सभी विधाओं, शास्त्रों व कलाओं का अन्तिम लक्ष्य आत्मानुभूति माना गया है इसलिए इन सब कलाओं का आपस में सम्बन्ध है। वेदों के साथ जोड़कर इन विधाओं व कलाओं को स्थाई व शाश्वत रूप दिया गया। चिकित्सा शास्त्र आयुर्वेद के रूप में, युद्ध विद्या की धनुर्वेद के रूप में, संगीत कला की गांधर्ववेद के रूप में और अर्थशास्त्र की अर्थशास्त्र के रूप में क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद के उपवेद–स्वरूप प्रतिश्ठा इसका प्रमाण है संगीत–कला की गांधर्ववेद के रूप में इस बात का भी प्रमाण कि संगीत केवल लोकरंजन की वस्तु नहीं, अपितु आत्मानुभूति का साधन भी रहा है। आचार्य कैलाशचन्द्र देव बृहस्पति के अनुसार जिन कलाकारों को वैदिक युग में हेय दृष्टि से देखा जाता था, नाट्य में उनकी काफी प्रतिष्ठा थी। नाट्य के आदिम प्रयोक्ता भरत को ब्रह्मा का शिष्य कहा जाता है। भारतीय संगीत–विद्या से सम्बद्ध गांधर्व, गान और संगीत आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता रहा है और इन सबका सम्बन्ध नाट्य से ही है। इस प्रकार गांधर्व और नाट्य को ''नाट्यवेद'' के रूप में ''पंचम वेद'' कहा गया है ।

भरत के नाट्यशास्त्र में नाट्य के अंग के रूप में गांधर्व की जो विवेचना की गई है उसी से हमें संतोष करना पड़ता है। गान्धर्ववेद में ध्वनि व उसकी शक्तियों का बहुत सूक्ष्म विश्लेषण किया गया है। साथ ही नृत के प्रकार व विविध नृत्यों का उल्लेख इस बात को दर्शाता है कि ''गांधर्व'' व नृत्य का समावेश भी आपस में सामजस्य स्थापित करता है। नाट्य व संगीत का विकास साथ–साथ होता रहा है जो दोनों की ''उपवेद'' एवं ''पंचमवेंद'' के रूप में प्रतिष्ठापना से भी प्रमाणित होता है। भरत का ''नाट्यशास्त्र'' होने से नाट्य परम्परा निबद्ध रूप से बनी रही। नाट्य में लोकवृत का अनुकरण होने के कारण जीवन की छोटी से छोटी परिस्थिति का भी चित्रण किया जाता है। नाट्य में कई प्रकार के तत्वों का मिश्रण होता है जैसे पाठय और गीत श्रवण द्वारा और अभिनय दृष्यांश में आ जाता है। रस इन दोनों में समान रूप से विचरण करता है। रस को तो केवल अनुभव ही किया जा सकता है। पाठ्य के अन्तर्गत नाट्य की कथा, संवाद, कथन सब पद्यांश में आते हैं। ''गीत'' में स्वर, लय, ताल समाए रहते हैं। इन सब को मिलाकर नाट्य बनता है। मतंग और शारंगदेव के काल में नाट्य के लिए ''गीत, वाद्य एवं नृत्य के प्रयोग के लिए ''संगीत'' शब्द का प्रयोग किया गया। स्वर, लय, ताल गांधर्व का प्रयोग नाटय के अंग के रूप में नहीं बल्कि नाट्य के आरम्भ से पहले अर्थात पूर्व अंग से ही प्रयोग किया जाता है। सारा नाट्य स्वर, ताल के बिना अधूरा माना जाता है। नृत्य को भी बाद में नाट्य का अंग बनाया गया। गीत का अनुकरण वाद्य करता था और वाद्य का नृत्य। बाद में गीत, वाद्य, नृत्य का प्रयोग स्वतंत्र होने लगा। आज भी हम संगीत का अर्थ केवल गायन व वादन को ही समझते हैं। संगीत में दृश्यांश केवल न्यूनाधिक मात्रा में ही रहता है। नाट्य में दृश्य चतुर्विध अभिनय है। गेय होने के कारण संगीत में वाचिक अभिनय की प्रधानता रहती है। गाते बजाते समय भावानुकूल हाथ व चेहरे की चेष्टाओं को आंगिक अभिनय के अन्तर्गत रखा जाता है। संगीत में रसानुभूति होने के कारण सात्विक अभिनय का भी दर्शन होता है। गाते बजाते समय उच्च श्रेणी के गायक वादकों में अश्रु, पुलक, स्वेद और स्वर भंग आदि स्वाभाविक रूप से प्रकट होते हैं। गाते बजाते कलाकार विभिन्न भावों द्वारा अपने मनोभावों को व्यक्त करता है वो भी नाट्य का ही एक रूप है। चाहे मार्गी संगीत हो या देशी संगीत उनमे नाटक भी एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है और नाट्य में संगीत एक अभिन्न अंग के रूप में अपनी भूमिका निभाता है। नृत्य गतियो, कथानक भावों और अभिनेता के वाचिक सात्विक और व्यवहारिक अभिनय में संगीत अभिन्न रूप से जुड़ा है। नाट्य भी

Created by Universal Document Converter

संगीत का सबसे बड़ा अंग है। संगीत ही सम्प्रेषण की परतों को खोलता है और उनके समस्त भावों को स्वर, लय, ताल के माध्यम से सहज बनाते हुए दर्शकों को अपने साथ सम्मिलित करता है। अनेक साक्ष्य ये साबित करते हैं कि नाटक में संगीत की हैसियत महज एक अलंकार वस्तु की नहीं है, वह समग्र रंगानुभव के एक प्रभावी घटक के रूप में प्रतिष्ठित है। आधुनिक नाट्य परम्परा में लोक संगीत, लोकधुन, लोकगाथाओं को अपना आधार बनाया तो किसी ने शास्त्रीय संगीत से प्रेरणा ली और किसी ने अपनी नाट्य कला में पृथक और विशिष्ट संगीत रचा। 17 मई 1998 को कारंत ने नाटय एवं संगीत के सामंजस्य को स्थापित करते हुए कहा है कि ''नाटक में संगीत कोई जोड़ी हुई चीज नहीं है वह नाटक की स्थिति को गंभीर बना देगा। ध्वनि भी, संवाद भी और भाषा भी, संगीत भी एक थियेटर से मिल जाते हैं। रंगमंच से हटकर संगीत का कोई अर्थ नहीं है। संगीत पूरे संदर्भ से जुड़ा रहता है। नाटक संगीत संवाद से शुरू होता है। संवाद का भी एक स्वर होना चाहिए। यहाँ तक कि नाटक में एक पात्र के जूते की आवाज भी संगीत हो जाती है।

कालान्तर में ध्रुवागान के रूप में नाटकों में संगीत का प्रयोग विशिष्ट भावों की अभिव्यक्ति के लिए किया जाने लगा। प्राचीन समय में नाटकों में प्रयुक्त हो रहे संगीत में रागों की जननी जातियों के व्यवहार के संकेत भी मिलते हैं। विशिष्ट प्रकार की तालों का प्रयोग भी उस समय किया जाता था। संगीत में ही किसी न किसी रूप में परिस्थिति अथवा विशिष्ट भाव रहता था। रस की दृष्टि से संगीत में नाट्य तत्व सूक्ष्म रूप में रहता है। नाट्य की अपेक्षा संगीत में एक अपनी विशेषता है। नाट्य संगीत कला है, इसमें कल्पना एक व्यक्ति की रहती है और ''नट'' उसे प्रस्तुत करता है। लेकिन संगीत में कल्पना भी गायक या वादक करता है और उस कल्पना की प्रस्तुति भी कलाकार स्वयं ही करता है। अपनी कल्पना को वह बड़ी सहजता से प्रस्तुत करता है, नट वैसा नहीं कर सकता। आजकल नाटकों में पाँच प्रकार के संगीत की योजना की जाती है। गीतों के साथ वाद्य योजना विशिष्ट रसों के अनुकूल उतेजित करने वाली वाद्य ध्वनि के रूप में, किसी विशेष प्रभाव के लिए घण्टा, झांझ, घड़ियाल, विजयघण्टा, शंख व नगाडे का प्रयोग चौथे प्रकार में वे गीत जो रंगपीठ पर उपस्थित पात्रों को कोई सूचना देने में विशेष प्रभाव डालने के उद्देश्य से गवाए जाते हैं। पाँचवें प्रकार के गीत रंगमंच पर ही गाए जाते हैं। नाटककार को यह निर्देश दिए जाते हैं कि किस दृश्य में, कहाँ पर, कितनी देर में, किस प्रकार से, किस वाद्य से, किस विशेष राग या ताल में संगीत की योजना द्वारा प्रस्तुति देनी है। गीत के अवसर को पूर्णरूपेण ध्यान में रखा जाता है, किस ऋतु में, किस विशेष परिस्थिति में, किस भाव द्वारा गीत का आयोजन हो । गीति नाट्य आदि क्योंकि पूर्ण रूप से ही संगीतबद्ध होता है । इसलिए रस और भाव का ही ध्यान रखा जाता है। गद्य नाटक के लिए गीत की अवसर अनुकूलता आवश्यक है। नाटकों में कुल व्यक्ति विवाह जैसे मंगल अवसर से लेकर अन्तिम संस्कार तक सब गीत गाना आवश्यक समझते हैं। परन्तु कुछ विद्वान इस बात को नकारते हैं। गीत की योजना वहाँ हो जहाँ पात्र अकेला हो, गीत वाद्य सीख रहा हो या सिखा रहा हो विभिन्न मंगल कार्यों में प्रेमाचार के अवसर पर, चक्की पीसते समय, देवताओं की स्तुति करते समय, विशेष ऋतु में, दृश्यों को दर्शाने के लिए, सैन्य अभियान में, उपदेश आदि के लिए मुख्य रूप से संगीत की योजना की जाती है। नाट्य के अनुकूल अलग–अलग भावों के लिए अलग–अलग प्रकार के रागों में गीत का गायन होता है। विभिन्न अवसरों का निर्देश देने के लिए अलग–अलग वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। वाद्यों की ध्वनि की प्रकृति के आधार पर ही नाट्य के रस व भाव के अनुसार उसका प्रयोग करना चाहिए।

निष्कर्ष : संक्षेप में संगीत नाट्य का एक प्रमुख अंग है। संगीत नाटक को संजीवता एवं गति प्रदान करने के साथ–साथ विशिष्ट रस अथवा भावों की उत्पति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। संगीत के अभाव में नाटक उस कविता अथवा गीत के समान प्रतीत होता है, जिसमें शब्द और छन्द तो हैं परन्तु स्वर, लय, ताल का उसमें अभाव है। अतः विशिष्ट नियमों अथवा अवसर को ध्यान में रखते हुए नाट्य में की गई संगीत की योजना ही नाट्य के लिए सफलता के द्वार खोलती है। नाट्य कला तब तक सफल नहीं होती जब तक उसमें संगीत का प्रयोग न किया जाए। दोनों कलाएं एक दूसरे की पूरक हैं। दोनों का सम्बन्ध गहरा है। अतः हम कह सकते हैं कि संगीत एवं नाट्य कला एक दूसरे के बिना अधूरे हैं। दोनों कलाएं एक दूसरे के बिना पूर्ण नहीं है।

संदर्भ सूची

1. पं. सीता राम चतुर्वेदी, भारतीय तथा पाश्चात्य रंगमंच, पृ. 6, 7
2. आचार्य कैलाश चन्द्र देव वृहस्पति, ध्रुपद एवं उसका विकास, पृ. 4,5
3. पं. सीता राम चतुर्वेदी, भारतीय तथा पाश्चात्य रंमंच, पृ. 686, 687, 688
4. सुरेश अवस्थी, हे सामाजिक, राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, दिल्ली 1999, पृ. 264
5. ग्रीस रस्तोगी, रंग भाषा, राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, पृ. 179

डॉ. अनिता शर्मा

सहायक प्रवक्ता, संगीत गायन विभाग

सेठ नवरंग राय लोहिया जयराम गर्ल्स

कॉलेज, लोहार माजरा (कुरूक्षेत्र)

Created by Universal Document Converter

दुष्यंत कुमारकृत 'एककंठ विषपायी' का मिथकीय चिंतन

डॉ. सरोज जैन

हिंदी साहित्य में दुष्यंत कुमार कालजयी कवि हैं। ऐसे कवि समय और युग परिवर्तन हो जाने के बाद भी प्रासंगिक रहते हैं। दुष्यंत जी के लेखन का स्वर सड़क से संसद तक गूंजता है। उन्हें हिंदी गजल का सशक्त हस्ताक्षर माना जाता है। उनकी गणना निया कविता के अच्छे कवियों में की जाती है। इनकी रचना में सम्वेदना का ताप, अनुभूति की ईमानदारी और अभिव्यक्ति का बल है। वे उदार प्रगतिशील विचारों के कवि हैं। संघर्षशील जीवन और भविष्य के प्रति इनकी गारी निष्ठा है। कवी दुष्यंत कुमार धरती के यथार्थ से सम्पूर्ण रूप से जुड़े हुए व्यापक चेतना के कवि हैं। उनकी काव्य रचनाओं में दमित वासनाओं तथा कुंठाओं के स्थान पर समकालीन जीवन की विषम परिस्थितियों का चित्रण सहृदयता के साथ हुआ है। उनके काव्य नाटक 'एक कंठ विषपायी' में शिव के विषपान की पौराणिक कथा के माध्यम से संसार के व्यापक हित के निमित्त एक व्यक्ति द्वारा समस्त पीड़ाओं के हलाहल को पि लेने का संदेश दिया है।

'एक कंठ विषपायी' काव्य का मिथक शिवपुराण से सम्बंधि ात है। इसके अतिरिक्त श्रीमद्भागवत पुराण, ऋग्वेद, ब्राह्मण ग्रन्थ, महाभारत तथा रामचरितमानस में भी कथा का उल्लेख मिलता है। कवी दुष्यंत कुमार ने 'एक कंठ विषपायी' काव्य की रचना तत्कालीन युग सन्दर्भों की प्रस्तुति की हेतु किया है। उन्होंने शिव के चरित्र को परम्पराभंजक विद्रोही तथा सामाजिक विषमता का विष पीनेवाले के रूप में नवीं सन्दर्भों में रखकर अपने उत्कृष्ट कवि कर्म का परिचय दिया है। कवी ने प्रस्तुत काव्य में सामाजिक, धार्मिक परम्परा को मानने वाले तथा इन परम्पराओं को तोड़ने वाले व्यक्ति के मध्य का संघर्ष दिखाया है। साथ ही रूढ़िवादी मूल्यों के स्थान पर नवीनता की स्थापना करना कवि का मुख्य उद्देश्य रहा है। पूरा कथा पर आधारित 'एक कंठ विषपायी' युगीन सत्य का सम्प्रेषण करने वाली सफल कृति है। कवी ने इस नाटकाव्य 'एक कंठ विषपायी' के रूप में शिव के मिथक द्वारा हिंदी साहित्य को एक समर्थ कृति प्रदान की है। इसमें घटनाओं से अधिक मनोभावों पर विशेष बल दिया है।

दक्ष द्वारा शिव और सती की किस प्रकार उपेक्षा की गई है–

मेरा दृढ़ निश्चय है
मेरे आयोजन में
शंकर का कोई स्थान नहीं होगा।
यही नहीं
युग युग तक
किसी यज्ञ अथवा आयोजन में
उसको निमंत्रण तक न जाएगा।
देखूं, वः मेरा क्या करता है ?
अपने अतिथियों को आमंत्रित करने की
मुझे स्वतंत्रता है।
सती अगर चाहे
तो दर्शक की तरह रहे
वरना वः लौट जाए।
मेरा उन दोनों से कोई संबंध नहीं।
मैं उससे स्वयं कहे देता हूँ .....[1]

दुष्यंत कुमार की प्रमुख कृति है दृ'एक कंठ विषपायी'। इसकी कथा में दुसरे विश्व युद्ध में हुए मानवीय मूल्यों के ह्रास की व्यंजना की गई है। पौराणिक शिव कथा से अनुप्राणित प्रस्तुत काव्य नाटक में दुष्यंत कुमार ने इतिवृत्ति का सहारा लेकर सामायिक बोध और युगीन सन्दर्भों को अभिव्यक्ति प्रदान की है। कवि ने इन सन्दर्भों को स्वीकार करते हुए काव्य की भूमिका में लिखा है दृ "जर्जर रूढियों और परंपरा के शव से चिपटे हुए लोगों के सन्दर्भ में प्रतीकात्मक रूप से आधुनिक पृष्ठभूमि और नए मूल्यों को संकेतित करने के लिए इस कथा में पर्याप्त सामर्थ्य है।"[2]

'एक कंठ विषपायी'सन् 1963 में प्रकाशित काव्य नाटक है, जो युद्ध की समस्या को लेकर इसके समाधान ढूढ़ने के सन्दर्भों में प्रस्तुत काव्य है। इसके माध्यम से कवि ने चीन भारत संबंधों के खट्टे–मीठे चिट्ठे खोलने का प्रयास किया है। इस सिध्दांत में पंचशील सिध्दांतों को चूर–चूर होते देख कर कवी आहत हो उठाता है। कवि के विचार में इसके चलते भारतीय प्रजातंत्र के आगे एक प्रश्न चिह्न लग गया है। कवि दुष्यंत कुमार को चीनी आक्रमण के बाद भारतीय नेताओं द्वारा इस चुनौती को स्वीकारना और आगेजिस प्रकार के निर्णय लिए गए वह सब अच्छा नहीं लगता। यही कारण है कि 'एक कंठ विषपायी' का ब्रह्मा भी निरंतर आदर्शों का लबादा ओढ़े रहता है। कवि दुष्यंत कुमार ने एक कंठ विषपायी काव्य को चारदृश्यों में बाँट कर अपने विचारों को उद्घाटित किया है प्रस्तुत काव्य का पहला दृश्य दक्ष और पत्नी वीरिणी के परस्पर वार्तालाप से आरंभ होता है। वे किसी अत्यंत गंभीर प्रश्न पर विचार विमर्श कर रहे हैं। वीरिणी के मांगलिक अवसर पर पुत्री तथा जामाता को बुलाने का निवेदन दक्ष को ठीक नहीं लगता है। कवि ने दक्ष के क्रोध में प्रकट मनोभावों को इस प्रकार अभिव्यक्त किया है

"वह, जिसने घर की परंपरा तोड़ी है,
वह, जिसने मेरे यश पर कालिख पोती है,
जिसके कारण
मेरा माथा नीचा है सारे समाज में,
मेरे घर अतिथि रूप में आये?"[3]

तभी एक अनुचर द्वारा शंकर के अपने गणों एवं नंदी को लेकर यज्ञ मंडप में आने की सूचना प्राप्त होती है।शंकर अपने अपमान से अधिक आहत हैं, अतिथियों को भला बुरा सुना रहे हैं तब दक्ष क्रुद्ध

Created by Universal Document Converter

होकर महादेव की निंदा करते हैं। इस अनिष्टकारी कल्पना से वीरिणी व्याकुल हो जाती है। इस समय एक अनुचर आकर बताता है कि सती अग्नि में भस्म हो गई है। इस संदर्भ के द्वारा कवि का ध्येय सत्ता पर तीखा व्यंग करना रहा है। शासन का आकांक्षी सत्ताधारी स्वतंत्र बोध, अस्तित्व बोध तथा जनता की मर्यादाओं को भूल गया है।

काव्य के दूसरे दृश्य में शिव गणों के माध्यम से तहस–नहस हो गई व्यवस्था का चित्रण हुआ है। उसे देखकर ऐसा लगता है मानो वहाँ युद्ध हुआ हो। जिससे सारी व्यवस्था का कर्म नष्ट हो गया हो। इसी क्षण वहाँ भगवान विष्णु और ब्रह्मा प्रवेश करते हैं। इसी क्रम में उस उदास वातावरण में देवराज इंद्र और वरुण का प्रवेश होता है। वे इस विध्वंस की स्मृति में लीन हो गए हैं। कवि क्षत–विक्षत हो गई व्यवस्था को एक भृत्य सर्वत द्वारा अपनी व्यंग्यपूर्ण भाषा में यह कहलाता है–

"यहाँ कुछ भी नहीं है शेष
यहाँ शेष ही तो है सब कुछ
देखो
सारे नगर में ताजा
जमा हुआ रक्त है
और सड़ी हुई लाशें हैं
मुड़ी हुई हड्डियाँ हैं
क्षत–विक्षत तन हैं
और उन पर भिन्नाते हुए
चीलो और गिद्धों के झुंड
और मक्खियां हैं।[4]

प्रस्तुत संदर्भ की व्याख्या करते सर्वहत भागने की तैयारी करता है, परंतु देवों द्वारा किए गए आक्रमण में उसे पकड़ने की कोशिश चलती है। जिसको ब्रह्मा रोक देते हैं। कवि का मानना है कि सत्ता ललक क्रूरता तथा इसके लिप्त किए भयावह युद्ध जन–विनाशक होते हैं। कवि दुष्यंत ने सर्वहत के माध्यम से मानवीय संवेदना के यथार्थ को निरूपित करने का प्रयास किया है।

तीसरे दृश्य में हिम मंडित कैलाश पर्वत पर पत्नी सती के अपार शोक में मन विश्रांत से महादेव शंकर अपने कंधे पर सती का शव रखेहुए दुख में निमग्न हो खड़े दिखाई देते हैं। वे सती के अस्त–व्यस्त केशों को अपनी उंगलियों से सहलाते जैसे उससे बातें करते हुए दिखते हैं। कवि शिव के अंतर्द्वंद को उनके स्वगत कथन द्वारा जाहिर कराता है। वे परिस्थितियां आगे चलकर प्रतिहिंसा और उग्रवाद में बदल जाती हैं। शिव के क्रोध को ठंडा करने के लिए वरुण और कुबेर उनकी आराधना करते हैं। तब शिव इसे प्रपंच समझकर और क्रोधित हो जाते हैं। शिव अपने देवत्व को धिक्कारते हुए इस छल और आडंबर पूर्ण आदर्श से लड़ते रहने का मन बनाते हैं। कंधे पर पड़ा शव निहारने में तल्लीन होकर वे वस्तु स्थिति को भूल जाते हैं। यह कवि का मंतव्य है कि शव की सड़ी हुई दुर्गंध की तरह ही युगों से चली आ रही परंपराएं आगे चलकर सड़ जाती हैं। नए मूल्यों को प्रस्थापित करने में इस तरह के युद्ध हुआ करते हैं। महादेव की इस प्रतिहिंसा से कुबेर भयभीत हो जाते हैं। शिव उन्हें कैलाश छोड़ देने की बात कहकर अपनी तांडव युद्ध की सूचना देते हैं।

चौथे दृश्य में ब्रह्मा और इंद्र के बीच में चल रहे युद्ध के विवाद की विशद चर्चा का वर्णन है। इंद्र ब्रह्मा से शिव को आततायी घोषित करते हैं। साथ ही आत्मरक्षा के लिए वे युद्ध की मांग भी करते हैं। ब्रह्मा को इंद्र का यह तर्क अच्छा नहीं लगता है। वे इंद्र को प्रतिहिंसावादी करार देते हैं। इसी समय इंद्र को सूचना मिलती है कि क्रोधित शिव की सेनाएं चली आ रही है। ब्रह्मा इंद्र को युद्ध करने से रोकते हैं। युद्ध के समस्याओं से चिंतित ब्रह्मा का अभिमत है कि युद्ध सामूहिक प्रतिघात है। शासक का दायित्व होता है कि प्रजा की रक्षा करें। इंद्र को वर्तमान सत्ताधारी की तरह युद्ध करके कुर्सी बचाने की चिंता सदा बनी रहती है।ब्रह्मा को देवलोक की अपेक्षा सत्य की रक्षा करना अधिक संगत लगता है। कवि ने अस्तित्व के संकट को दोहराते हुए कहा है–

"आप लोग शासक हैं
और शासकों को कहीं
रक्त की कमी हुआ करती हैद्य"[5]

ऐसे परिवेश में वहाँ के नागरिकों के मन में असुरक्षा की भावना घर कर गई है। चारों ओर त्राहि–त्राहि मच है। उनके सामने अँधेरा छा गया है –

"आह !
लुट गए
आह ! मिट गए
इन सब हत्यारों ने हमको
रक्षा का आश्वासन देकर लुट लिया।
भूमि छिन गई
आँखों का सारा आकाश खो गया।
अब अंधियारे में ततोल्त्र फिरते हैं हम
–ओ मेरी जिंदगी कहाँ है तू ?
– ओ मेरी जिंदगी कहाँ है तू ?"[6]

कवि का मत है कि जब नवीन मूल्यों की स्थापना की तैयारी शुरू हो जाती है, तो उनके सामने पुरानी तथा जीर्ण शीर्ण हो गई परंपराएं मिटने लगती है। यह सत्य है कि नवीन सत्यों को व्यक्ति सरल तरीके से स्वीकार नहीं कर पाता है। सभी देवगण भगवान ब्रह्मा विष्णु की अभ्यर्थना में झुक जाते हैं और शिव की सेनाओं की वापसी हो जाती है।

इस काव्य नाटक का मूलाधार शिव, सती तथा दक्ष की कथा का प्रभाव है। शिव की कथा का वर्णन पुराणों में आया है। किंवदंतियों के अनुसार सती की देह को ब्रह्मा ने खंडों में बाँट दिया, जिसके आधार पर धर्म तीर्थ स्थापित हो गए। ऋग्वेद में रुद्र को संहारक के रूप में दर्शाया गया है। रामचरितमानस में भी शिव सती

Created by Universal Document Converter

तथा दक्ष के यज्ञ संबंधी कथा का उल्लेख मिलता है य यथा–

"सती मरनु सुनी संभु गन लगे करन मख खीस
जग्य बिघस बिलोक भृगु रच्छा कीन्ही मुनीसद्य"[7]
'समाचार सब संकर पाए,बीरभद्रकरि कोप पठाए
जग्य बिधंस जाइ तिन्ह कीन्हा, सकल सुरन्ह बिधिवत फलु दीन्हा।'

कवि दुष्यंत कुमार ने इस पुरावृतों के आधार पर अपने नाट्य काव्य की कथा में नई मौलिकताको प्रतिपादित किया है। कवि की विशिष्ट कल्पना का पात्र सर्वहत है। कवि ने इस को माध्यम बनाकर तत्कालीन प्रजातांत्रिक विफलताओं पर करारा व्यंग किया। राजनीतिक विषमता में जनजीवन का कितना विनाश होता है। इसकी विशद व्याख्या कवि ने की है। युद्ध की समस्या तथा समाधान नारी पुरुष के मध्य स्के संबंधों की कथा कवि के समक्ष मूल प्रश्न बनकर खड़ी है। कवि द्वारा दिखाए गए दक्ष यज्ञ में क्रूर शासक का दंभ शिव द्वारा सती के शव को ढोना जीर्ण शीर्ण गलित परंपराओं का घोतक है युद्ध के पश्चात सूनसान राजपथ क्षत–विक्षत शरीर और मंडराते गीध और चीले भिनभिनाती मक्खियां आदि इस ह्रासमान मूल्यों की कथा कहते हैं। कहा जाता है कि दुष्यंत कुमार ने इस कथा संयोजन में एक नवीन प्रयोग करके युग सापेक्ष सत्य को उद्घाटित किया है।

निश्चय ही दुष्यंत कुमार ने अपनी उत्तम काव्यनाट्य कृति 'एक कंठ विषपायी' में संघर्ष की विभीषिका को पौराणिक संदर्भ से प्रस्तुत करने का सफल प्रयास किया है।

संदर्भ :

1. दुष्यंत कुमार, एक कंठ विषपायी, पृ. 35
2. दुष्यंत कुमार, एक कंठ विषपायी(भूमिका),पृ. 7
3. दुष्यंत कुमार, एक कंठ विषपायी, पृ. 11
4. दुष्यंत कुमार, एक कंठ विषपायी, पृ. 47–48
5. दुष्यंत कुमार, एक कंठ विषपायी, पृ. 117
6. तुलसीदास, रामाचारितमानस, पृ. 77
7. तुलसीदास, रामाचारितमानस, पृ. 77

डॉ. सरोज जैन
अध्यक्ष, हिंदी विभाग
वैश्य महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रोहतक (हरि)

Created by Universal Document Converter

विशिष्टाद्वैत दर्शन में रामानुजाचार्य अभिमत तत्त्वचिन्तन

सारांश : भारतीय दर्शन में वेदान्त दर्शन सम्प्रदाय का विशिष्ट स्थान है। उत्तर मीमांसा अर्थात् वेदान्त में उपनिषद् प्रतिपाद्य जीव और ब्रह्म का प्रतिपादन किया गया है। अद्वैत वेदान्त से विशिष्ट अभेद के कारण विशिष्टाद्वैत कहलाने वाले सम्प्रदाय के आचार्य रामानुज का मानना है कि तत्त्वत्रय की सत्ताएँ ही संसार की मूलाधार हैं। रामानुजाचार्य चित्त, अचित्त् और ईश्वर इन तत्त्वों को तत्त्वत्रय मानते हैं। चित्त– चेतन भोक्ता जीव है। अचित्त– जड भोग्य जगत् है। ईश्वर दोनों का अन्तर्यामी है। चित्त् और अचित्त् दोनों नित्य और परस्पर स्वतन्त्र द्रव्य हैं। किन्तु दोनों ईश्वर पर आश्रित हैं और सर्वथा उनके अधीन हैं। दोनों स्वयं में द्रव्य हैं, किन्तु ईश्वर के गुण या धर्म हैं। प्रस्तुत पत्र में रामानुज अभिमत तत्त्वत्रय का विवेचन करने का प्रयास किया गया है।

श्रीमद् रामानुजाचार्य द्वारा प्रवर्तित विशिष्टाद्वैत दर्शन की प्रमुख मान्यताओं में तत्त्वत्रय का सिद्धान्त सर्वाशिरोमणी है और यही वैदिकों का सारतम सिद्धान्त है। इसीलिए तत्त्वत्रय की चर्चा श्रुतियों, स्मृतियों, पुराणों तथा इतिहासों में पद–पद पर उपलब्ध होती है। तत्त्व शब्द पारमार्थिक पदार्थ का बोधक है। "तत्त्वानां त्रयम्" यही तत्त्वत्रय शब्द की व्युत्पत्ति है। इससे स्पष्ट है कि पारमार्थिक पदार्थों को तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है। रामानुजाचार्य के दर्शन में सत्ता या परमसत् के सम्बन्ध में तीन स्तर माने गये हैं – ब्रह्म अर्थात् ईश्वर, चित्त् अर्थात् आत्म तत्त्व और अचित् अर्थात् प्रकृति तत्त्व। वस्तुतः चित् और अचित्–इस ब्रह्म से पृथक नहीं हैं बल्कि ये विशिष्ट रुप से ब्रह्म के ही दो स्वरूप हैं एवं ब्रह्म या ईश्वर पर ही आधारित हैं। यही रामानुजाचार्य का विशिष्टाद्वैत का सिद्धान्त है।

इन तीनों तत्त्वों को हम इस प्रकार देख सकते हैं–

प्रथम तत्त्व– चित् या आत्म तत्त्व।

द्वितिय तत्त्व– अचित् या प्रकृति तत्त्व।

तृतीय तत्त्व– ब्रह्म या ईश्वर तत्त्व।

1. चित्त् या आत्म तत्त्व – यह आत्मा– देह, इन्द्रिय, मन, प्राण, तथा ज्ञानय इन पाँचों से भिन्न है। वह स्वयं प्रकाश, नित्य, अपने आश्रयभूत शरीर में व्यापक है। यह आत्मा प्रत्येक शरीर में अलग–अलग तथा स्वाभाविक रूप से आनन्द स्वरूप है।

1.1 आत्मा की आनन्दरूपता– आत्मा आनन्द स्वरूप है। सुख का दूसरा नाम ही आनन्द है। आत्मा के सुखस्वरूप होने के कारण ही सबको अपना आत्मा अनुकूल प्रतीत होता है। मरता हुआ मनुष्य भी चाहता है कि मैं कुछ देर तक ओर जी लूँ। "सुखमहम्स्वाप्सम" इस प्रकार की होने वाली प्रत्यभिज्ञा भी आत्मा की सुखरुपता में प्रमाण है। इस प्रत्यभिज्ञा का यही अर्थ है कि मैं इस स्वप्नकाल में जैसे सुखी रहा ,उसी तरह से सोया।

1.2 आत्मा का ज्ञानाश्रयत्व – आत्मा ज्ञानवान है, अर्थात् ज्ञान ही उसका प्रधान गुण है। आत्मा के ज्ञानाश्रयत्व का प्रतिपादन करती हुई श्रुति कहती है "एष हि द्रष्टा, श्रोता, घ्राता, रसयिता, मन्ता, बोद्धा, कर्त्ता, विज्ञानात्मा पुरुषः" अर्थात् यह आत्मा ही देखने वाला, सुनने वाला, सूंघने वाला, रसास्वाद लेने वाला, मनन करने वाला, जानने वाला, करने वाला तथा विज्ञान स्वरूप है। " यो वेदेदं जिघ्राणीति स आत्मा" अर्थात् जो यह जानता है कि मैं सूंघता हूँ, वही आत्मा है।

1.3 आत्मा की नित्यता – आत्मा को नित्य बताने का अर्थ है कि उसका कभी भी विनाश नहीं होता है। वह त्रिकालदर्शी है। श्रुति भी कहती है– "न जायते म्रियते वा विपश्चित" अर्थात् आत्मा न तो उत्पन्न होता है और न ही मरता है। आत्मा को नित्य पदार्थों से बढकर नित्य बताया गया है। "अजो निजः शाश्वतोऽयम पुराणः" अर्थात् यह जीवात्मा अजन्मा, त्रिकालदर्शी, शाश्वत तथा प्राचीन है।

1.4 आत्मा का अजडत्व – आत्मा को अजड कहने का अभिप्राय है कि जिस तरह घट, पट आदि विषय अपने प्रकाश या प्रतीति के लिए प्रकाशक या प्रकाश इत्यादि की अपेक्षा रखते हैं, उसी तरह से आत्मा को अपने प्रकाश के लिए किसी प्रकाश की आवश्यकता नहीं होती है। आत्मा की प्रतीति सबको हमेशा होती रहती है। सा कभी नहीं होता कि आत्मा रहे और उसकी प्रतीति न हो। "हृद्यन्तर्ज्योतिः पुरुषः" अर्थात् शरीर के भीतर रहने वाला आत्मा प्रकाश स्वरूप है। यहाँ आत्मा को ज्ञान स्वरूप तथा निर्दोष बताया गया है।

रामानुज के अनुसार चौतन्य और आत्मा में गुण और गुणी, धर्म और धर्मी का सम्बन्ध है। चौतन्य या ज्ञान आत्मा का गुण और धर्म हैं। आत्मा ही ज्ञान का आश्रय है। "ज्ञातृत्वमेव जीवात्मस्वरूपं"। आत्मा स्वभाव से चित्त् रूप है। शरीर मे निवास करने से अथवा शरीर से सबद्ध होने के कारण आत्मा कर्म करता है। इसी कर्म से अच्छे–बुरे फल प्राप्त करता है। ज्ञाता होना आत्मा का निजी स्वभाव है य कर्त्ता और भोक्ता होना नहीं। आत्मा में कर्तृत्त्व और भोक्तृत्त्व तो शरीर के कारण हैं। अतः यह जीवात्मा का सांसारिक धर्म है। आत्मा में जितने भी व्यापार होते हैं वे सबके सब परमात्मा की इच्छा के अनुकूल ही होते हैं। "एतस्य वाक्षरस्य प्रशासने गार्गी सूर्याचन्द्रमसौ विधृतौ तिष्ठतः" अर्थात् हे गार्गी ! इस अक्षर तत्त्व के प्रशासन में सूर्य, चन्द्रमा इत्यादि सम्पूर्ण जगत् व्यवस्थित रहता है। यह श्रुति जीवात्मा को परमात्मा का प्रशस्य बतलाती है। इस श्रुति के "विधृतौ" पद से स्पष्ट है कि परमात्मा जीवों के धारक हैं।

2. अचित्त् या प्रकृतितत्त्व – अचित् तत्त्व तत्त्वत्रय का दूसरा तत्त्व है। अचित् तत्त्व को ही जड, द्रव्य अथवा अचेतन तत्त्व कहा जाता है। इस अचित् तत्त्व का स्वरूप यह है कि वह ज्ञानशून्य तथा विकारास्पद होता है। इसलिए "क्षरम् प्रधानम्" श्रुति उसे क्षर शब्द से अभिहित करती है। अचेतन तत्त्व को दर्शनों में प्रधान शब्द से अभिहित

Created by Universal Document Converter

किये जाने का कारण है कि वह परमात्मा की लीला में प्रधान सहायक है। इस अचित् तत्त्व के तीन भेद हैं – शुद्धसत्त्व, मिश्रसत्त्व, तथा सत्त्वशून्य।

2.1 शुद्धसत्त्व– शुद्ध सत्त्व अचित् तत्त्व का प्रथम भेद है। शुद्धसत्त्व रजोगुण तथा तमोगुण के मिश्रण से रहित केवल सत्त्वगुणस्वरूप है अर्थात् वहाँ पर विद्यमान सत्त्व गुण में रजोगुण तथा तमोगुण का मिश्रण नहीं रहता। इसीलिए इसे शुद्धसत्त्व शब्द से अभिहित किया गया है, शुद्धसत्त्व नित्य है। "त्रिपादस्यमृतं दिवि" श्रुति भी अमृत शब्द द्वारा उसे नित्य बताती है। शुद्धस्वरूप होने के कारण वह ज्ञान तथा आनन्द को उत्पन्न करने वाला है। वह सीमातीत तेजः स्वरूप है।

इस शुद्ध सत्त्व की प्रकाश स्वरूपता का वर्णन करती हुई कठ श्रुति कहती है – " न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकाः, नेमा विद्युतो शान्ति कुतोप्यमग्निः" अर्थात् उस शुद्ध सत्त्व में इतना तेज है कि उसके प्रकाश के सामने न तो सूर्य प्रकाशित होता है, न तो चन्द्रमा और न तारे प्रकाशित होते हैं । वह कैसे प्रकाशित होगा। इसकी सीमा को नित्य, मुक्त तथा ईश्वर भी नहीं बता सकते हैं, क्योंकि वह अनन्त प्रदेश पर्यन्त फैला हुआ है, वह अत्यन्त अद्‌भुत है। यह शुद्ध सत्त्व नीचे की ओर प्रकृति से सीमित है और ऊपर की ओर वह अनन्त प्रदेश पर्यन्त फैला हुआ है। यह शुद्ध सत्त्व संसारी जीवों के लिए प्रकाशित नहीं होता है। वह नित्य तथा मुक्त जीवों और ईश्वर के लिए प्रकाशित होता है।

2.2 मिश्रसत्त्व – यह मिश्रसत्त्व अचित्तत्त्व का दूसरा भेद है। इस मिश्रसत्त्व को ही प्रकृति शब्द से अभिहित किया जाता है। मिश्रसत्त्व के स्वरूप का निरूपण करते हुए श्रीलोकाचार्य कहते हैं "मिश्रं सत्त्वं नाम– सत्त्वरजस्तमोरूप – गुणत्रययुक्तः, बद्धचेतनानां ज्ञानानन्दयोस्तिरोधायकः, विपरीतज्ञानजनकः, नित्यः, ईश्वरस्य क्रीडापरिकरभूतः, प्रदेशभेदेन कालभेदेन च सदृशानां विसदृशानां विकाराणाम् उत्पादकः, प्रकृतिरविद्यामाया इति अभिधीयमानः कश्चिद विशेषः" अर्थात् मिश्रसत्त्व, अचित् तत्त्व का वह भेद विशेष है जो सत्त्व गुण, रजोगुण तथा तमोगुण– इन तीनों गुणों से युक्त होता है। विष्णुपुराणकार श्रीपराशर महर्षि भी कहते हैं कि यह अचित् विशेष तीनों गुणों से युक्त रहने के कारण त्रिगुण शब्द से अभिहित किया जाता है– "त्रिगुण तद् जगद्योविरनदि प्रभवाप्ययं"

सांख्यदर्शन में त्रिगुणात्मिका प्रकृति को जगत् का मूल कारण कहा गया है। रामानुज ने भी सृष्टि के मूलभूत कारण को प्रकृति कहा है। सांख्य की तरह पुरुष और प्रकृति में आत्यन्तिक भेद पर आधारित द्वैत में इनकी आस्था नहीं है। रामानुज के मत में प्रकृति ईश्वर पर आधारित, उनकी विशेष शक्ति है। इसी के द्वारा वह संसार की संरचना करता है। अतः माया को इन्होनें ईश्वर की सृजन शक्ति कहा है "परब्रह्मशक्तिरूपाया अजायाः अवगतैः" । यह प्रकृति ही बद्ध जीवों के स्वाभाविक ज्ञान तथा आनन्द को तिरोहित करने का काम करती है। श्रीमद् रामानुजाचार्य जी कहते हैं कि परमात्मा की माया से जिसके स्वरूप का ज्ञान हो गया है, वह मिश्रसत्त्व नित्य द्रव्य है। प्रलयकाल में वह अपनी साम्यावस्था में रहने के कारण अपने सदृश ही कार्यों को उत्पन्न करती है। किन्तु सृष्टिकाल के आने पर परमात्मा के सत्य संकल्प के कारण उसके गुणों में वैषम्य उत्पन्न हो जाता है और उस अवस्था में वह अपने से भिन्न आकार वाले महदादिकों को उत्पन्न करता है।

इस मिश्र सत्त्व को प्रकृति, अविद्या तथा माया आदि शब्दों से अभिहित किया जाता है। इस मिश्र सत्त्व के चौबीस विकार होते हैं। उन विकारों में प्रथम विकार प्रकृति है। इस प्रकृति की कई अवस्थाएँ होती हैं – विभक्तम्, अविभक्तम् तथा अक्षर। प्रकृति की इन अवस्थाओं की चर्चा श्रुति में इस प्रकार आती है – "अव्यक्तमक्षरे लीयते, अक्षरं तमसि लीयते, तमः परे देवे एकीभवति" अर्थात् अव्यक्त का अक्षर तत्त्व में लय होता है, अक्षर तत्त्व का तमस् में लय होता है और तमस् परदेवता परमात्मा में जाकर उसमें ही मिल जाता है।

2.3 सत्त्वशून्य – अचित् सत्त्व का तीसरा भेद सत्त्वशून्य है। काल को ही सत्त्वशून्य कहते हैं। सत्त्वशून्य समस्त प्रकृति तथा प्राकृत वस्तुओं के परिणाम का कारण है। वह नित्य है और ईश्वर की क्रीडा का साधन एवं शरीर भी है। कहने का अभिप्राय है कि जितने भी मिश्रसत्त्व के परिणाम होते हैं, वे किसी काल विशेष में ही होते हैं। यह काल ही कला, काष्ठा, क्षण, घटी, मुहूर्त्त, याम, दिवस, पक्ष आदि रूपों में परिणत होता है। काल को छोडकर अचित द्रव्य के जो शुद्धसत्त्व तथा मिश्रसत्त्व दो भेद हैं और वे ईश्वर तथा जीवों के भोग्य, भोग के साधन तथा भोग के स्थान स्वरूप हैं। इस तरह से अचित् तत्त्व का निरुपण विशिष्टाद्वैत दर्शन में किया गया है।

3. ब्रह्म या ईश्वर तत्त्व – ब्रह्म या ईश्वर तत्त्व तत्त्वत्रय का अन्तिम तथा सर्वप्रधान तत्त्व है। रामानुजाचार्य के अनुसार ब्रह्म सत्य है। वस्तुतः ब्रह्म, निष्फल, शान्त, निरवद्य और निरंजन है अर्थात ब्रह्म शब्द का तात्पर्य ही है। समस्त दोषों से रहित, समस्त कल्याणकारी गुणों का आगार पुरुषोत्तम। यही ब्रह्म जब माया से आच्छ्न्न हो जाता है, तब ईश्वर कहलाता है। जगत की सृष्टि, स्थिति और प्रलय का कारण यही ईश्वर है। वेदान्त में स्थूल, सूक्ष्म चिदचिद सभी परब्रह्म के शरीर है और सभी का कारण ब्रह्म है तथा जीव उसका कार्य है।

ईश्वर के निरुपण में श्रीमल्लोकाचार्य कहते हैं –"ईश्वरः अखिल हेय प्रत्यनीकानन्तज्ञानान्दैकस्वरूपः ज्ञानशक्त्यादि कल्याणगुणगणविभूषितः, सकलजगत्सर्गस्थितिसंहारकर्त्ता" अर्थात ईश्वर समस्त त्याज्य दोषों के प्रबल विरोधी हैं। यही कारण है कि उनमें कोई भी प्राकृत दोष नहीं है। वे अनन्त ज्ञानस्वरूप हैं। श्रुति ईश्वर को सर्वज्ञ एवं सर्ववेत्ता बताते हुए कहती है " यः सर्वज्ञः सर्ववित" अर्थात परमात्मा सभी वस्तुओं को स्वरूपतः जानने के कारण सर्वज्ञ कहे जाते हैं और सभी वस्तुओं को प्रकारतः जानने के कारण वे सर्ववेत्ता हैं। इस तरह अनन्त आनन्द स्वरूप हैं।

"आनन्दमयोऽभ्यासात" इस सूत्र में महर्षि बादरायण ईश्वर को आनन्दस्वरूप बताते हैं। श्रुति भी कहती है कि ब्रह्म आनन्दस्वरूप है। वे ही सम्पूर्ण जगत की सृष्टि, पालन और उसका संहार करते हैं।

Created by Universal Document Converter

भृगुवल्ली की श्रुति कहती है– " यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते, येन जातानि जीवन्ति" अर्थात जिनसे ये समस्त भूत उत्पन्न होते हैं, उत्पन्न हुए भूतों की जो रक्षा करते हैं, पालन काल में समस्त भूत जिन परब्रह्म को प्राप्त करके उनमें प्रवेश कर जाते हैं, वे ही ब्रह्म हैं। रामानुज इस जगत् का उपादानकारण तथा निमित्तकारण दोनों ही ब्रह्म को मानते हैं। संसृति की सृष्टि के पूर्व ब्रह्म का शरीर सूक्ष्म रूप में अवस्थित रहता है और अखिल ब्रह्माण्ड उस ब्रह्म में अवस्थित रहता है। पुनः सृष्टिकाल में वह सूक्ष्म और अव्यक्त रूप व्यक्त होकर स्थूल रूप धारण करता है। अतः इस सृष्टि का कारण ब्रह्म है। ब्रह्म अनन्त, आनन्दयुक्त, सर्वान्तर्यामी और चित्स्वरूप है।

निष्कर्ष – निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि मानव जीवन में इन तीनों तत्त्वों का ज्ञान अत्यन्त अपेक्षित है। ज्ञान की महत्ता का प्रतिपादन करती हुई श्रुति भी कहती है –" इह चेदवेदिदथ सत्यमस्ति नो चेदिहावेदीन महती विनष्टिः" अर्थात इस जीवन में यदि तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त किया, तब तो मानव जीवन प्राप्त करना सफल हो गया और यदि मानव जीवन प्राप्त करके भी जीवन को विषयों के भोगों में ही बिता दिया, तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त नहीं किया तो जीवन की सबसे बडी क्षति हो गयी। भोक्ता (जीवतत्त्व), भोग्य (माया तत्त्व)– दोनों को प्रेरित करने वाले ईश्वर तत्त्व के स्वरूप का मनन करके जीव परमात्मा की प्रीति का पात्र बन जाता है और उसके पश्चात उस ज्ञान के प्रभाव से ही वह मुक्ति प्राप्त कर लेता है। अतएव तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है तथा यही वैदिकों का भी सार्वभौम सिद्धान्त है।

संदर्भ –

1. प्रश्नो. 4/9
2. छा.उप.–8/12/4
3. कठोपनिषद्– 2/1/8
4. कठो.– 2/18
5. बृ.उ.– 6/3/7
6. श्रीभाष्य– 2.3.31
7. बृ.उ.3/8/9
8. श्वेता.1/10
9. छा.उ.3/12/1
10. कठो. 5/15
11. तत्त्वत्रय– 2/9
12. वि.पु. 1/2/21
13. श्रीभाष्य– 1.4.9
14. सु.उ. –2/2
15. तत्त्वत्रय–3/1
16. शा. मी. 1/1/13
17. तै.भृ.व. 1/1

ज्योत्सना

श्री लालबहादुरशास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ, नई दिल्ली–16

ansh-jyotsana@gmail-com

Mo- 9911536115

Created by Universal Document Converter

प्रवीण कुमार

नरेन्द्रमोदी शासनकाल में भारत–चीन संबंधों में उतार–चढ़ाव

सारांश : 2014 में नरेंद्र मोदी जब भारत के प्रधानमंत्री बने तो पूरा देश उनमें भारत के लिए कई संभावनाएं देख रहा था। चीन और पाकिस्तान के साथ भारत के संबंध को लेकर भी देश के लोगों को काफी उम्मीद थी। नरेंद्र मोदी ने शुरुआत में अपने सभी पड़ोसी देशों के साथ संबंध बेहतर करने की दिशा में काफी प्रयास भी किए। इसी कड़ी में सितम्बर, 2014 को चीन के राष्ट्रपति मोदी के निमंत्रण पर अहमदाबाद पहुँचे।

जिस तरह से मोदी ने उनका स्वागत किया, उससे लगा कि दोनों देशों के बीच संबंध सुधरेंगे। इस यात्रा के दौरान कैलाश मानसरोवर यात्रा के नए मार्ग और रेलवे में सहयोग समेत 12 समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए। इसके अलावा दोनों देशों ने क्षेत्रीय मुद्दों और चीन के औद्योगिक पार्क से संबंधित समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए। हालाँकि, उसी दौरान चीनी पीपुल्स लिबरेशन आर्मी 'पीएलए' के करीब 1000 जवान पहाड़ी से जम्मू–कष्मीर के चुमार क्षेत्र में घुस आए थे। भारत ने चीनी राष्ट्रपति के सामने यह मुद्दा उठाया, लेकिन अपनी तरफ से वार्ता में कोई खलल नहीं पड़ने दिया।

18 जून, 2017 को डोकलाम पर सीमा विवाद को लेकर एक बार फिर से दोनों देशों के बीच तनाव शुरू हुआ और यह लगभग 73 दिनों तक चला। ध्यातव्य है कि भारत, भूटान और चीन को मिलाने वाला बिन्दु को भारत में डोकलाम, भूटान में डोक ला और चीन में डोकलांक कहा जाता है। डोकलाम एक पठार है जो भूटान के हा घाटी, भारत के पूर्व सिक्किम जिला और चीन के यदोंग काउंटी के बीच में है।

डोकलाम विवाद (Doklam Issue)

डोकलाम का कुछ हिस्सा सिक्किम में भारतीय सीमा से सटा हुआ है, जहाँ चीन सड़क बनाना चाहता है। भारतीय सेना ने सड़क बनाए जाने का विरोध किया। भारत की चिंता यह है कि अगर यह सड़क बनी तो हमारे देश के उत्तर–पूर्वी राज्यों को देश से जोड़ने वाली 20 किलोमीटर चौड़ी कड़ी यानी 'मुर्गी की गर्दन' जैसे इस इलाके पर चीन की पहुँच बढ़ जाएगी। वहीं चीन ने अपनी सम्प्रभुता की बात दोहराते हुए कहा कि उन्होंने सड़क अपने इलाके में बनाई है। इसके साथ ही उन्होंने भारत भारतीय सेना पर अतिक्रमण का आरोप लगाया।

चीन का कहना था कि भारत 1962 में हुई हार को याद रखे। चीन ने भारत को चेतावनी भी दी कि चीन पहले भी अधिक शक्तिशाली था और अब भी है। जिसके बाद भारत ने कड़ी प्रतिक्रिया देते हुए कहा कि चीन समझे कि अब समय बदल गया है, यह 2017 है। इस विवाद का असर यह हुआ कि चीन ने भारत से कैलाश के लिए जाने वाले हिन्दू तीर्थयात्रियों को मानसरोवर यात्रा पर जाने से रोक दिया। हालाँकि, बाद में चीन ने हिमाचल प्रदेश के रास्ते 56 हिन्दू तीर्थयात्रियों को मानसरोवर यात्रा के लिए आगे जाने की अनुमति दे दी। डोकलाम पर भारत–चीन के बीच लगभग दो महीने तक काफी तनातनी होने के बाद अन्ततः विवाद समाप्त हुआ।

भारत और चीन के बीच आर्थिक संबंध (Economic Relations between India & China)

भारत और चीन के बीच अरबों डॉलर का व्यापार है। 2008 में चीन भारत का सबसे बड़ा बिजनेस पार्टनर बन गया था। 2014 में चीन ने भारत में 116 बिलियन डॉलर का निवेश किया जो 2017 में 160 बिलियन डॉलर हो गया। 2018–19 में भारत और चीन के बीच द्विपक्षीय व्यापार करीब 88 अरब डॉलर रहा। यह बात महत्त्वपूर्ण है कि पहली बार भारत चीन के साथ व्यापार घाटा 10 अरब डॉलर तक कम करने में सफल रहा।

चीन वर्तमान में भारतीय उत्पादों का तीसरा बड़ा निर्यात बाजार है। वहीं चीन से भारत सबसे ज्यादा आयात करता है और भारत चीन के लिए उभरता हुआ बाजार है। चीन से भारत मुख्यतः इलेक्ट्रिक उपकरण, मेकेनिकल सामान, कार्बनिक रसायनों आदि का आयात करता है। वहीं भारत से चीन मुख्य रूप से खजिज ईंधन और कपास आदि का निर्यात किया जाता है। भारत में चीनी टेलिकॉम कंपनियाँ 1999 से ही हैं और वे काफी पैसा कमा रही हैं। इनसे भारत को भी लाभ हुआ है। भारत में चीनी मोबाइल का मार्केट भी बहुत बड़ा है। चीन दिल्ली मैट्रो में भी लगा हुआ है। दिल्ली मेट्रो में एसयूजीसी शंघाई अर्बन ग्रुप कॉर्पोरेशन नाम की कंपनी काम कर रही है। भारतीय सोलर मार्केट चीनी उत्पाद पर निर्भर है। इसका दो बिलियन डॉलर का व्यापार है। भारत का थर्मल पावर भी चीनियों पर ही निर्भर है। पावर सेक्टर के 70 से 80 फीसदी उत्पाद चीन से आते हैं। दवाओं के लिए कच्चे माल का आयात भी भारत चीन से ही करता है। इस मामले में भी भारत पूरी तरह से चीन पर निर्भर है।

2018–19 में भारत का व्यापार घाटा करीब 52 अरब डॉलर रहा। पिछले कई वर्शों से चीन के साथ लगातार छलांगे लगाकर बढ़ता हुआ व्यापार घाटा भारत के लिए एक बड़ी चुनौती बन गया था।

27 मई, 2018 को भारत ने चीन के सॉटवेयर बाजार का लाभ उठाने के लिए वहाँ दूसरे सूचना प्रौद्योगिकी गलियारे की शुरूआत की। आईटी कंपनियों के संगठन नैसकॉम ने कहा कि चीन में दूसरे डिजिटल सहयोगपूर्ण सुयोग प्लाजा की स्थापना से चीन के बाजार में घरेलू आईटी कंपनियों की पहुँच बढ़ गयी।

संक्षिप्त कालक्रम

✤ 1950 के पहले हजारों वर्षों तक तिब्बत ने एक ऐसे क्षेत्र के रूप में काम किया जिसने भारत और चीन को भौगोलिक रूप से अलग और शान्त रखा। 20वीं सदी के मध्य तक भारत और चीन के बीच संबंध कम ही थे एवं कुछ व्यापारियों, तीर्थयात्रियों और विद्वानों

Created by Universal Document Converter

के आवागमन तक ही सीमित थे।

✤ भारत और चीन के मध्य व्यापक तौर पर बातचीत की शुरूआत भारत की स्वतंत्रता, 1947 और चीन की कम्युनिस्ट क्रांति,1949 के बाद हुई।

✤ 1 अप्रैल, 1950 को चीन और भारत ने राजनयिक संबंध स्थापित किए। केएम पानिकर को चीन में भारत का पहला राजदूत नियुक्त किया गया। भारत चीन के जनवादी गणराज्य के साथ संबंध स्थापित करने वाला पहला गैर साम्यवादी देश था। हिन्दी–चीनी भाई–भाई उस समय से एक आकर्षक कहानी बन गयी है और द्विपक्षीय आदान–प्रदान प्रारम्भ हुआ।

✤ अक्तूबर, 1950 तक चीन ने तिब्बत को लेकर इरादे जाहिर कर दिए। सीमा पार कर चीनी सेना ल्हासा की तरफ बढ़ी। 1951 में चमदो के गवर्नर को मजबूर किया गया कि वह तिब्बत पर चीन का आधिपत्य स्वीकार करें। चीन ने तिब्बत पर आक्रमण कर वहाँ कब्जा कर लिया, तब भारत और चीन आपस में सीमा साझा करने लगे और पड़ोसी देश बन गए।

✤ भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू एक स्वतंत्र तिब्बत के पक्ष में थे। उल्लेखनीय है कि भारत और तिब्बत के मध्य आध्यात्मिक संबंध चीन के लिए चिंता का विषय था।

✤ मई, 1954 में चीनी प्रधानमंत्री चाउ एनलाई ने भारत का दौरा किया। चीन और भारत ने संयुक्त वक्तव्य पर हस्ताक्षर किए और शांतिपूर्ण सहअस्तित्व, पंचशील के पाँच सिद्धांतों की संयुक्त रूप से वकालत की। उसी वर्ष भारतीय प्रधानमंत्री नेहरू ने चीन का दौरा किया। वह एक गैर साम्यवादी देश की सरकार के पहले प्रमुख थे, जिन्होंने पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना की स्थापना के बाद से चीन का दौरा किया।

✤ साल भर भी नहीं बीते थे कि चीन ने इन्हीं सिद्धांतों का उल्लंघन किया। अपने आधिकारिक मानचित्र में चीन ने भारत की उत्तरी सीमा के एक हिस्से को अपना बताना शुरू किया।

✤ नवम्बर, 1956 में चीन के तत्कालीन शासक चाउ एनलाई भारत आए।

✤ सितम्बर, 1957 में तत्कालीन उपराष्ट्रपति डॉ॰ सर्वपल्ली राधाकृष्णन चीन गए।

✤ इसी बीच संबंध बिगड़ने लगे। चीन ने भारत के कुछ हिस्सों पर अपना हक जताना शुरू कर दिया था। चाउ ने 23 जनवरी, 1959 को कहा कि लद्दाख और नेफा का करीब 40 हजार मील का क्षेत्र चीन का है।

✤ 3 अप्रैल, 1959 को तिब्बती लोगों के आध्यात्मिक और लौकि प्रमुख दलाई लामा कई अन्य लोगों के साथ ल्हासा से भाग निकले और भारत आ गए। भारत ने उन्हें शरण दी और चीन बिदक गया।

✤ इसके पश्चात् चीन ने भारत पर तिब्बत और पूरे हिमालयी क्षेत्र में विस्तारवाद और साम्राज्यवाद के प्रसार का आरोप लगा दिया। उसने सितंबर, 1959 में मैकमोहन लाइन को मानने से इनकार कर दिया। बीजिंग ने सिक्किम और भूटान के करीब 50 हजार वर्ग मील के इलाके पर दावा ठोक दिया था।

✤ 19 अप्रैल, 1960 को तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू और चाउ के बीच नई दिल्ली में मुलाकात हुई।

✤ फरवरी, 1961 में चीन ने सीमा विवाद पर चर्चा से मना कर दिया और भारतीय सीमा के पश्चिमी सेक्टर में घुस आया।

✤ नवम्बर, 1962 में चीनी सेना ने लद्दाख और तत्कालीन नॉर्थ ईस्ट फ्रंटियर एजेंसी, नेफा, में मैकमोहन रेखा के पार भारत पर आक्रमण कर दिया और भारत के बहुत बड़े भूभाग पर कब्जा कर लिया। चीन ने तीन सूत्रीय सीजफायर फॉर्मूला सुझाया जो भारत ने मान लिया। चीन के इस आक्रमण के कारण द्विपक्षीय संबंधों में एक गंभीर झटका लगा।

✤ मार्च, 1963 को चीन और पाकिस्तान में समझौता हुआ और पाक अधिकृत कश्मीर का लगभग 5080 वर्ग किलोमीटर हिस्सा चीन को दे दिया गया।

✤ 1965 में चीन ने भारत पर सिक्किम चीन सीमा पार करने का आरोप लगाया। नवम्बर में चीनी सैनिक दोबारा उत्तरी सिक्किम में घुसे। इसके बाद तनाव के चलते डिप्लोमेटिक चैनल बंद हो गया।

✤ 1974 में भारत ने अपना पहला शांतिपूर्ण परमाणु परीक्षण किया तो चीन ने उसका कड़ा विरोध किया।

✤ अप्रैल, 1975 में सिक्किम भारत का हिस्सा बना। चीन ने इसका भी विरोध किया।

✤ अप्रैल, 1976 में चीन और भारत ने पुनः राजदूत संबंधों को बहाल किया। जुलाई में केआर नारायणन को चीन में भारतीय राजदूत बनाया गया। द्विपक्षीय संबंधों में धीरे–धीरे सुधार हुआ।

✤ फरवरी, 1979 में तत्कालीन विदेश मंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने चीन की यात्रा की।

✤ 1988 में, भारतीय प्रधान मंत्री राजीव गांधी ने द्विपक्षीय संबंधों के सामान्यीकरण की प्रक्रिया शुरू करते हुए चीन का दौरा किया। दोनों पक्षों ने 'लुक फॉरवर्ड' के लिए सहमति व्यक्त की और सीमा के प्रश्न के पारस्परिक रूप से स्वीकार्य समाधान की मांग करते हुए अन्य क्षेत्रों में सक्रिय रूप से द्विपक्षीय संबंधों को विकसित किया।

✤ 1991 में, चीन के सर्वोच्च नेता ली पेंग ने भारत का दौरा किया। 31 साल बाद चीन का कोई नेता भारत आया था।

✤ 1992 में, भारतीय राष्ट्रपति आर वेंकटरमन ने चीन का दौरा किया। वह पहले राष्ट्रपति थे, जिन्होंने भारत गणराज्य की स्वतंत्रता के बाद से चीन का दौरा किया।

✤ सितम्बर, 1993 में तत्कालीन पीएम पीवी नरसिम्हा राव चीन गए।

✤ अगस्त, 1995 में दोनों देश ईस्टर्न सेक्टर में सुमदोरोंग चू घाटी से सेना पीछे हटाने को राजी हुए।

✤ नवंबर, 1996 में चीनी राष्ट्रपति जियांग जेमिन भारत आए।

✤ मई, 1998 में भारत के दूसरे परमाणु परीक्षण का भी चीन ने विरोध किया।

Created by Universal Document Converter

✤ अगस्त, 1998 में ही लद्दाख, कैलाश मानसरोवर रूट खोलने पर आधिकारिक रूप से बातचीत शुरू हुई।

✤ जब कारगिल युद्ध हुआ तो चीन ने किसी का साथ नहीं दिया। युद्ध खत्म होने पर चीन ने भारत से दलाई लामा की गतिविधियां रोकन को कहा ताकि द्विपक्षीय संबंध सुधरें।

✤ नवम्बर, 1999 में सीमा विवाद सुलझाने को भारत–चीन के बीच दिल्ली में बैठकें हुईं।

✤ जनवरी, 2000 में 17वें करमापा ला चीन से भागकर धर्मशाला पहुँचे और दलाई लामा से मिले। बीजिंग ने चेतावनी दी कि करमापा को शरण दी गई तो 'पंचशील' का उल्लंघन होगा। दलाई लामा ने भारत को चिट्ठी लिख करमापा को सुरक्षा माँगी।

✤ 1 अप्रैल, 2000 को भारत और चीन ने राजनयिक संबंधों की 50वीं वर्षगाँठ मनाई।

✤ जनवरी, 2002 में चीनी राष्ट्रपति झू रोंगजी भारत आए।

✤ 2003 में, भारतीय प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने चीन का दौरा किया। दोनों पक्षों ने चीन भारत संबंधों में सिद्धांतों और व्यापक सहयोग पर घोशणा पर हस्ताक्षर किए और भारत–चीन सीमा प्रश्न पर विशेष प्रतिनिधि बैठक तंत्र स्थापित करने पर सहमत हुए।

✤ अप्रैल, 2005 में तत्कालीन चीनी राष्ट्रपति वेन जियाबाओ बैंगलोर आए।

✤ 2006 में, नाथू ला दर्रा खोला गया जो कि 1962 के बाद से बन्द था।

✤ 2007 में, चीन ने अरुणाचल प्रदेश के मुख्यमंत्री को यह कहकर वीजा नहीं दिया था कि अपने देश में आने के लिए उन्हें वीजा की जरूरत नहीं है।

✤ 2009 में, जब तत्कालीन पीएम डॉ॰ मनमोहन सिंह अरुणाचल गए तो चीन ने इस पर भी आपत्ति जताई।

✤ जनवरी, 2009 को मनमोहन जी चीन पहुँचे। दोनों देशों के बीच व्यापार ने 50 बिलियन डॉलर का आँकड़ा पार किया।

✤ नवंबर, 2010 में चीन ने जम्मू–कश्मीर के लोगों के लिए स्टेपलड वीजा जारी करने शुरू किए।

✤ अप्रैल, 2013 में चीनी सैनिक सीमा पार पूर्वी लद्दाख में करीब 19 किलोमीटर घुस आए। भारतीय सेना ने उन्हें खदेड़ा।

✤ जून, 2014 में चीन के विदेश मंत्री वांग यी भारत आए और भारतीय समकक्ष सुषमा स्वराज से मिले। उसी महीने तत्कालीन उपराष्ट्रपति हामिद अंसारी भी पाँच दिन के दौरे पर गए थे। जुलाई, 2014 में भारतीय सेना के तत्कालीन चीफ बिक्रम सिंह तीन दिन के लिए बीजिंग दौरे पर गए थे। उसी महीने ब्राजील में हुई ब्रिक्स देशों की बैठक में पीएम मोदी और चीनी राष्ट्रपति शी जिनपिंग की पहली मुलाकात हुई। दोनों ने करीब 80 मिनट तक बातचीत की थी।

✤ सितंबर, 2014 में शी जिनपिंग भारत आए। नरेंद्र मोदी ने प्रोटोकॉल तोड़कर अहमदाबाद में उनका स्वागत किया था। चीन ने पाँ साल के भीतर भारत में 20 बिलियन डॉलर से ज्यादा के निवेष का वादा किया।

✤ फरवरी, 2015 में सुषमा ने चीन की यात्रा की और वहाँ पर शी जिनपिंग से मिली।

✤ मई, 2015 में प्रधानमंत्री मोदी का पहला चीन दौरा हुआ। अक्तूबर में जिनपिंग और मोदी की मुलाकात गोवा में ब्रिक्स देशों की बैठक में हुई।

✤ जून, 2017 में भारत को शंघाई कोऑपरेशन ऑर्गनाइजेशन का पूर्ण सदस्य बनाया गया। मोदी ने जिनपिंग से मुलाकात की और इसके लिए उनका धन्यवाद किया।

✤ 2018–19 में, राष्ट्रपति शी जिनपिंग ने वुहान, चीन और महाबलीपुरम, भारत में भारतीय प्रधान मंत्री नरेंद्र मोदी के साथ एक अनौपचारिक बैठक की।

निष्कर्ष : जवाहर नेहरू यूनिवर्सिटी के चीनी अध्ययन केंद्र में प्रोफेसर श्रीकांत कोंडापल्ली का मानना है कि भारत–चीन के बीच रिष्ते ठीक होना बहुत मुष्किल लग रहा है। सैनिकों की मौत होने से दोनों के संबंधों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ेगा। विष्वास बहाली के प्रयास भी कमजोर हुए हैं।

वे कहते हैं, "चीन के खिलाफ बनी एक राष्ट्रीय धारण का भी कारोबार पर असर पड़ेगा। चीनी सामानों का बहिष्कार करने की अपील की जा रहीं है। ऐसे में संबंधों को सामान्य बना पाना आसान नहीं होता। हालाँकि, कूटनीति और कारोबार हमेशा चलते रहते हैं, लेकिन बाहरी तौर पर गर्मजोशी नहीं रहती। कारोबारी निर्भरता बढ़ने से जो लोगों में संपर्क बढ़ा था और दूसरी कम हुई थी, उसे वापस पाने में समय लगेगा।"

विशेषज्ञ मानते हैं कि भले ही दोनों देशों के बीच रिष्ते कितने भी बेहतर दिखें, लेकिन एक आंतरिक दूरी और प्रतियोगिता बनी रहेगी। दोनों देशों की अपनी महत्त्वाकांक्षाएँ हैं। इसलिए भारत एशिया में चीन के साथ संतुलन बनाने के लिए पहले से ही प्रयास करता है।

संदर्भ

1. Hindustan Times, 19 September, 2014
2. Times of India, 21 September, 2014
3. प्रतियोगिता दर्पण, अक्तूबर, 2017
4. वही
5. hi.M.wikipedia.org
6. Economic Times, 28 May, 2018
7. गुलाब चन्द्र ललित, भारत और वर्तमान वैश्विक परिदृष्य, पृ॰ 90
8. वही
9. नवभारत टाइम्स, 2 अप्रैल, 2000
10. गुलाब चन्द ललित, भारत और वर्तमान वैश्विक परिदृश्य, पृ॰ 152
11. bbc.com

Parveen Kumar
Research Scholar
Dept.of Defence & Strategic Studies
M.D.U.Rohtak

Created by Universal Document Converter

आर्थिक विकास एवं सांस्कृतिक भू–दृश्यावली का भौगोलिक अध्ययन शाहजहाँपुर जनपद के विशेष संदर्भ में –

डॉ0 जिलेदार, डॉ0 विपेन्द्र कुमार अरूण

सारांश : आर्थिक विकास एवं सांस्कृतिक भू– दृश्यावली में मानवीय विकास, अधिवास का विकास, कृषि विकास, पशुपालन विकास परिवहन सुविधाओं का विकास, संचार सुविधाओं का विकास, औद्योगिक विकास एवं पूँजी व्यवस्था का विकास को शामिल कर अध्ययन किया गया हैं। आर्थिक विकास अथवा वृद्धि से उसे प्रक्रिया का बोध होता हैं। जिसके द्वारा किसी देश अथवा क्षेत्र के निवासी उपलब्ध साधनों का प्रयोग प्रति व्यक्ति वस्तुओं तथा सेवाओं के उत्पादन में उत्तरोत्तर वृद्धि के लिए करते हैं। विकास का अभिप्राय केवल आर्थिक प्रगति ही नहीं हैं, अपितु इसमें सामाजिक, सांस्कृतिक, संस्थागत एवं आर्थिक परिवर्तन भी सम्मिलित होते हैं। शाहजहाँपुर जनपद में तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या के परिणाम स्वरूप प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि हुई हैं। मानवीय प्रयास एवं सरकार का विकास सम्बन्धी योजनाओं के प्रारम्भ होने से आर्थिक विकास का स्तर उच्च स्तर से बढ़ता रहा है। किसी भी क्षेत्र के आर्थिक विकास में मानव का स्थान सर्वोत्तम हैं। मानव ही अपने ज्ञान एवं तकनीकी के माध्यम से किसी भी क्षेत्र के आर्थिक विकास की रूपरेखा तय करता हैं आज के युग में मानवीय पूँजी में विनियोग आर्थिक विकास की एक प्रमुख शर्त की आवश्यकता होती हैं। जनपद शाहजहाँपुर मानवीय संसाधनों की दृष्टि से धनी हैं। यहाँ पर निवास करने वाली कार्य शील जनसंख्या ने अपने श्रम की अधिकांश कार्य शील जनसंख्या ने अपने श्रम एवं तकनीकी के आधार पर विकास के स्तर को उच्च किया हैं।

आर्थिक विकास अथवा वृद्धि से उस प्रक्रिया का बोध होता हैं, जिसके द्वारा किसी देश अथवा क्षेत्र के निवासी उपलब्ध साधनों का प्रयोग प्रति व्यक्ति वस्तुओं तथा सेवाओं के उत्पादन में उत्तरोत्तर वृद्धि के लिए करते हैं। विकास केवल मनुष्य की भौतिक आवश्यकता से नहीं, अपितु इसमें सामाजिक, सांस्कृतिक, संस्थागत, एवं आर्थिक परिवर्तन भी सम्मिलित होने हैं। आर्थिक विकास एक बहुमुखी प्रक्रिया हैं। इसमें केवल मौद्रिक आय की वृद्धि ही सम्मिलित नहीं हैं, अपितु वास्तविक आदतों शिक्षा, जनस्वास्थ्य, अधिक आराम तथा उन सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों की वृद्धि भी सम्मिलित है जो एक पूर्ण तथा सुखी जीवन का निर्माण करती हैं।

प्रस्तावना –

किसी क्षेत्र के आर्थिक विकास में सांस्कृतिक भू–दृश्य की भूमिका होती हैं। मानव द्वारा निर्मित सांस्कृतिक दृश्य भूमि में अधिवास प्रमुख हैं। मानव ने अपने ज्ञान एवं तकनीकी के माध्यम से अधिवासों के प्रतिरूप में क्रान्तिकारी परिवर्तन किया हैं। वर्तमान में अधिकांश मकान पक्की ईंट के कंकरीट से निर्मित हैं तथा आधुनिक तकनीक द्वारा सुसज्जित तरीके से बनाये गये हैं। कृषि ग्रामीण अर्थव्यवस्था की केन्द्र बिन्दु हैं। आर्थिक जीवन का आधार, रोजगार का प्रमुख स्रोत तथा मुद्रा अर्जन का प्रमुख माध्यम हैं। शाहजहाँपुर एक कृषि प्रधान क्षेत्र हैं यहाँ की 70 फीसदी से अधिक आबादी कृषि कार्य पर निर्भर हैं ।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त ग्रामीण विकास की ओर ध्यान दिया गया तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत आधार प्रदान करने हेतु कृषि विकास पर विशेष ध्यान दिया गया। एवं प्रदेश सरकार द्वारा मानवीय विकास को प्रोत्साहित किये जाने से आर्थिक विकास में अधिक परिवर्तन दिखलाई पड़ता हैं। कृषि प्रधान क्षेत्र होने के कारण मानव की प्रति व्यक्ति आय निरन्तर बढ़ी हैं, जिसके लिए मानवीय प्रयास एवं सरकारी प्रोतसाहन सराहनीय हैं प्रति व्यक्ति आय में बढ़ोत्तरी होने से मानव के पारिवारिक जीवन में बदलाव आया हैं तथा ग्रामों एवं नगरों में निवास करने वाली जनसंख्या का सामाजिक – आर्थिक विकास तीव्र गति से हुआ हैं ।

जिला सामाजिक – आर्थिक विकास समीक्षा विवरण पुस्तिका(2011) –

किसी भी क्षेत्र के आर्थिक विकास में मानव का स्थान सर्वोत्तम हैं। मानव ही अपने ज्ञान एवं तकनीकी के माध्यम से किसी क्षेत्र के आर्थिक विकास की रूपरेखा तय करता हैं। मानव ने ही प्राकृतिक दृश्य भूमि का प्रयोग करके या उसमें रूपान्तरण करके प्राकृतिक दृश्य भूमि पर अपनी कृतियों की तथा अपने निवास की छाप लगा दी हैं और मानव की कृतियों सहित जो भू–दृश्य बनता हैं उसका नाम सांस्कृतिक भू–दृश्यावली हैं। अर्थात् प्राकृतिक क्षेत्र में मानव अपनी बस्ती स्थापित करता हैं, और वहाँ सांस्कृतिक दृश्य भूमि का निर्माण हो जाता हैं, वहाँ गाँव या घर बस जाते हैं।

आने–जाने के मार्ग बन जाते हैं, और भूमि, मिट्टी, जलप्रवाह, खनिज, वनस्पति, जीव–जन्तु आदि प्राकृतिक संसाधनों के प्रयोग पर मानव की छाप लग जाती हैं। बहुत सी प्राकृतिक दृश्यभूमियाँ ऐसे होती हैं, जहाँ पर मानव बिना कोई बस्ती बसाये भी सांस्कृतिक दृश्य भूमि का निमार्ण कर देता है, उदाहरणार्थ–प्राकृतिक वनों में जाकर मनुष्य वृक्षों को काट डालता है और उन कटे हुए वृक्षों की दृश्यावली ही सांस्कृतिक दृश्यभूमि हो जाती हैं।

शाहजहाँपुर जनपद में भी मानव ने अपने ज्ञान के माध्यम से प्राकृतिक दृश्यभूमि का उपयोग कर सांस्कृतिक दृश्यभूमि का निर्माण किया है। अध्ययन क्षेत्र में आर्थिक विकास एवं सांस्कृतिक दृश्यभूमि का विवरण निम्न प्रकार हैं।

मानव का विकास :–

मानव संसाधन किसी देश के आर्थिक विकास के लिए होना अनिवार्य हैं। आर्थिक विकास मानवीय प्रयत्नों का ही परिणाम हैं। आर्थिक विकास कोई यांत्रिक प्रक्रिया नहीं है, वरन् यह एक मानवीय उपक्रम है, जिसकी प्रगति उन लोगों की कुशलता गुणों, दृष्टि कोणों

Created by Universal Document Converter

एवं अभिरूचियों पर निर्भर करती हैं। अतः आज के युग में मानव पूँजी में विनियोग आर्थिक विकास की एक प्रमुख शर्त एवं महत्वपूर्ण आवश्यकता हैं। जब तक किसी क्षेत्र में उपलब्ध श्रम शक्ति का पूर्णरूपेण विकास नहीं किया जायेगा, जब तक आर्थिक विकास का लक्ष्य अधूरा रहेगा। क्योकि सबसे मूल्यावान पूँजी वह हैं, जो मानव मात्र में विनियोजित की जाएं। मानव के उद्भव काल के समय पर्यावरण अत्यन्त जटिल था। उसके पास बौद्धिक कौशल तथा साधन का अभाव था। वह प्रकृति एवं उसकी घटनाओं के समक्ष निः सहाय था। फल स्वरूप उसकी आयु भी सीमित थी। स्पष्टतया यह वह काल था। जब प्राकृतिक पर्यावरण की जटिलता थी और मनुष्यों का बौद्धिक विकास नहीं हो पाया था। मानव अपनी आवश्यकता की पूर्ति सीमित क्षेत्र से करता था। जब मानव ने बौद्धिक एवं प्राविद्धिक विकास किया तब उसकी संस्कृति में परिवर्तन प्रारम्भ हो गया। वास्तव में जनसंख्या के विकास का मूल कारण मानव संस्कृतियों का विकास हैं। क्लाक्र के अनुसार जनसंख्या विकास कुल के 90 प्रतिशत समय में मानव की संख्या कम थी तथा वृद्धि भी मन्द गति से हुई। विगत 10 प्रतिशत काल में जनसंख्या की इतनी तीव्र वृद्धि हुई कि विकास की गति तीव्र होने के साथ–साथ विस्फोटक स्थिति उत्पन्न हो गई ।

शाहजहाँपुर जनपद में मानव ने उत्तरोत्तर वृद्धि करते हुए विकास के स्तर को भी उच्च किया हैं। वर्ष 1951में कुल जनसंख्या 1004435 व्यक्ति हो गई, जिसमें 854035 व्यक्ति ग्रामीण एवं 150400 व्यक्ति नगरीय थें । वर्ष 2011 में सकल जनसंख्या 2942465 व्यक्ति है, जिसमें 2343866 व्यक्ति ग्रामीण एवं 698220 व्यक्ति नगरीय हैं। अध्ययन क्षेत्र में वर्ष 1901 से वर्ष 2011 तक जनसंख्या में तीव्रतर वृद्धि हुई हैं। इस प्रकार तीव्र गति से बढ़ते मानवीय संसाधन ने जनपद के विकास को नया आयाम दिया हैं। अध्ययन क्षेत्र में क्षेत्रीय स्तर पर सर्वाधिक जनसंख्या 610887 व्यक्ति विकासखण्ड भावल खेड़ा में निवास करती हैं, जिसमें 324814 पुरूष एवं 66437 स्त्रियाँ सम्मिलित हैं। जबकि इसके विपरीत सबसे कम जनसंख्या 140999 व्यक्ति मदनापुर विकासखण्ड में निवास करती हैं, जिसमें 74562 पुरूष एवं 66437 स्त्रियाँ सम्मिलित हैं। किसी क्षेत्र के सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए जनसंख्या के घनत्व का अध्ययन अत्यावश्यक हैं। शाहजहाँपुर जनपद के आर्थिक विकास में जनघनत्व ने प्राकृतिक संसाधन को उपलब्धता के आधार पर सामाजिक – आर्थिक विकास की सीमा निर्धारित की हैं। जनपद के जिन क्षेत्रों में ऊपजाऊ भूमि, समतल धरात, जल उपलब्धता का उच्च स्तर एवं मानव बसाव हेतु सम जलवायु उपलब्ध थी, वहां पर मानव की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि होती गई। वर्ष 1901 में 218 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर हो गए। जनपद के ग्रामीण क्षेत्र में 516 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर एवं नगरीय क्षेत्र में 19454 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर निवास करते हैं। किसी भी क्षेत्र के भौगोलिक अध्ययन में लिंग अनुपात का अध्ययन अपना विशेष महत्व रखता हैं।

शाहजहाँपुर जनपद में भी शिक्षा ने आर्थिक विकास के स्तर को निर्धारित किया हैं। स्वतन्त्रता से पूर्व जनपद में शैक्षिक संस्थाओं की सुविधा केवल नगरीय क्षेत्र में ही स्थित थी, कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में भी शिक्षा के केन्द्र स्थापित थे, जहाँ पर हाईस्कूल स्तर की शिक्षा प्रदान की जाती थी। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् सरकार का ध्यान शिक्षा की ओर केन्द्रित हुआ, इसके पश्चात् धीरे–धीरे विद्यालयों की संख्या में बढ़ोत्तरी हुई। वर्ष 1951 में शाहजहाँपुर जनपद में सकल साक्षरता 18.07 प्रतिशत एवं स्त्रियों की साक्षरता 3.13 प्रतिशत थी । देश के अन्य क्षेत्रो के आर्थिक विकास के स्तर को देखकर अध्ययन क्षेत्र के मानव ने भी शिक्षा ग्रहण के लिए पैर दौड़ना प्रारम्भ कर लिया। वर्ष 2011 में साक्षरता का प्रतिशत 60.18 हैं, जिसमें पुरूषों की साक्षरता 68.70 प्रतिशत एवं स्त्रियाँ की साक्षरता का प्रतिशत 46.39 हैं । साक्षरता के बढ़ते प्रतिशत के परिणामस्वरूप मानक ने विकास के स्तर को भी बढ़ाया हैं । कृषि प्रधान क्षेत्र होने के कारण अध्ययन क्षेत्र की अधिकांश जनसंख्या की अर्थव्यवस्था कृषि पर ही निर्भर करती हैं । वर्श 2011 में सकल कार्यशील जनसंख्या 932409 है, जिसमें 52.18 प्रतिशत कृशक , 12.06 प्रतिशत कृषि श्रमिक एवं 35. 76 प्रतिशत अन्य व्यवसायों में सलंग्न हैं । इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र की अधिकांश कार्यशील जनसंख्या कृषि क्रियाकलापों पर ही निर्भर हैं। इसके अतिरिक्त जिन परिवारों के पास कृषि भूमि का अभाव है, वे कुटीर उद्योगों की स्थापना कर अपना व्यवसाय चला रहें, जिसमें अन्य कर्मकर को भी रोजगार के अवसर प्राप्त हुए हैं।

अधिवासों का विकास :–

किसी क्षेत्र के आर्थिक विकास में सांस्कृतिक भूदृश्य की भूमिका प्रमुख होती हैं। सांस्कृतिक भूदृश्य के अन्तर्गत सर्वप्रमुख तत्व मानव है, मानव ने ही अपने बौद्धिक विकास के द्वारा ही प्राकृतिक दृश्यभूमि का प्रयोग कर सांस्कृतिक दृश्यभूमि का निर्माण किया हैं। मानव ने इसी काल में अपनी आवश्यकता से अधिक वस्तुओं का भी संकलन करना प्रारम्भ कर दिया था। धीरे–धीरे आवासों के स्वरूपों में परिवर्तन होने लगा। पुरवा, ग्राम, कस्बा तथा नगर की स्थापना उत्तम भौगोलिक पर्यावरण में हो गई थी।

शाहजहाँपुर जनपद एक समतल मैदानी भू–भाग हैं। प्रारम्भ में यहाँ पर मानव ने प्राकृतिक दृश्य भूमि का प्रयोग कर अधिवासों का निर्माण किया हैं। मानव ने कृषि कार्य एवं पशुचारण के साथ मानव अधिवासों के निवास हेतु आश्रय का चयन किया था। कृषि कार्य हेतु अनुकूल जलवायु, समतल धरातल एवं पर्याप्त जल उपलब्धता के आधार पर भूमि का चयन किया था। इस प्रकार कृषि कार्य को उन्नत अवस्था में करते हुए अस्थाई आवास के आधार पर स्थाई अधिवासों का निर्माण किया प्रारम्भ में मानव ने मिट्टी से निर्मित कच्चे घरों, घांस फूंस द्वारा छाया कर आवासों का निर्माण किया था। स्वतन्त्रता से पूर्व शाहजहाँपुर जनपद में अधिकांश आवास कच्चे एवं दूर –दूर स्थित थें तथा उनमें निवास करने वाली जनसंख्या भी सीमित अवस्था में थी । जनपद नगरीय क्षेत्र में अधिवासों के प्रतिरूप सघन एवं पक्की

Created by Universal Document Converter

ईंटो द्वारा निर्मित थे, इनमें आने – जाने मार्ग चौड़े एवं पक्की कंकरीट से निर्मित थे ।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् अधिवासों के निर्माण में भी वृद्धि हुई। मानव ने अपने ज्ञान एवं तकनीकी के माध्यम से अधिवासों के प्रतिरूप में क्रान्तिकारी परिवर्तन किया हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में घास, फूँस एवं कच्ची मिट्टी से निर्मित मकानों सफाया कर दिया गया हैं, वर्तमान में अधिकांश अधिवास मकान पक्की ईंट के कंकरीट से निर्मित हैं , शाहजहाँपुर नगर में विभिन्न सहकारी एवं गैर – सरकारी संगठनों द्वारा विभिन्न प्रकार की कॉलोनियों का निर्माण किया गया हैं। अध्ययन क्षेत्र में जनसंख्या में जैसे –जैसे तीव्र गति से वृद्धि हुई है, वैसे ही मानव ने अपने बौद्धिक विकास द्वारा अधिवासों का विकास किया हैं।

कृषि विकास :–

कृषि मानव का एक प्राचीनतम उद्यम हैं। परन्तु इसकी प्रतिधियाँ एवं प्रणलियाँ समय – समय पर बदलती रही हैं। कृषि जीविकोपार्जन की प्रक्रिया में आखेट, पशुपालन एवं वन संसाधनों के एकत्रीकरण की अवस्था से लेकर आज विशिष्ट कृषि जो उच्च तकनीकी पर आधारित हैं। कृषि से न खाद्य सामग्री वस्त्र तथा गृह निर्माण के साधन मात्र को ही प्राप्ति होती हैं, बल्कि उद्योगों के लिए कच्चा माल एवं पशुओ के लिए चारा भी मिलता हैं। इसके अन्तर्गत मानव की उन सम्पूर्ण प्रक्रियाओं को सम्मिलित किया जाता हैं, जिसकी सहायता से खाद्य एवं कच्चे माल की प्राप्ति के लिए मिट्टी का उपयोग होता है। इसमें भूमि की जुलाई से लेकर कृत्रिम साधनों से सिंचाई उर्वरकों की आपूर्ति, मृदा संरक्षण, हानिकर तत्वों से पौधें की रक्षा इत्यादि विस्तृत कार्यक्रमो को समाहित किया जाता हैं। कृषि ग्रामीण अर्थव्यवस्था की केन्द्र बिन्दु है, आर्थिक जीवन का आधार, रोजगार का प्रमुख स्त्रोत तथा मुद्रा अर्जन का माध्यम होने के कारण कृषि को विकास की आधार शिला कहा जाएँ तो कोई अतिशियोक्ति नहीं होगी। कृषि विकास में वित्त की भूमिका को दृष्टिगत रखते हुए सरकार ने किसानों को उचित ब्याज दरों पर सही समय पर ऋण उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए संगठित साख व्यवस्था को प्राथमिकता प्रदान की हैं।

शाहजहाँपुर जनपद एक कृषि प्रधान क्षेत्र हैं। यहाँ की 70 प्रतिशत अधिक जनसंख्या कृषि पर आधारित हैं। ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषि मुख्य साधन थी। ग्रामीण जनसंख्या अपने भरण पोषण हेतु कृषि कार्य पर ही निर्भर थीं। वर्ष 1941 में सकल बोया गया क्षेत्रफल 2,94,263 हेक्टेयर था जिसमें 50.68 प्रतिशत रबी की फसल, 47.32 प्रतिशत खरीफ की फसल एवं 2.00 प्रतिशत जायद की फसल के अन्तर्गत सम्मिलित था। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् ग्रामीण विकास की ओर ध्यान दिया गया तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने के लिए कृषि विकास पर विशेष ध्यान दिया गया था। राष्ट्र की भांति जनपद शाहजहाँपुर में भी कृषि विकास पर विशेष जोर दिया गया था। मानव जनसंख्या में वृद्धि के साथ – साथ सांस्कृतिक एवं तकनीकी स्तरों में वृद्धि के परिणामस्वरूप कृषि योग्य बेकार भूमि में सुधार और ऊसर तथा कृषि अयोग्य भूमि में तकनीकी प्रयोग के कारण कृषि भूमि में परिर्वतन किया गया। वर्ष 2001–2002 में सकल बोया गया क्षेत्रफल 563104 हेक्टेयर था, जिसमें 282170 (50.11 प्रतिशत) हेक्टेयर रबी की फसल, 273173 (48.51 प्रतिशत) हेक्टेयर खरीफ की फसल एवं 7761 (1.38 प्रतिशत) हेक्टेयर जायद की फसल के अन्तर्गत सम्मिलित था। निरन्तर कृषि क्षेत्र में वृद्धि होना इस तथ्य का परिचायक है, कि ग्रामीण जनसंख्या ने अपनी आय में बढोत्तरी करने के लिए कृषि को

तालिका संख्या . 01

जनपद शाहजहाँपुर में कृषि क्षेत्र का विकास (2001.2002.2010.2011)

वर्ष	रबी की फसल (हेक्टेयर / प्रतिशत)	खरीफ की फसल (हेक्टेयर / प्रतिशत)	जायद की फसल (हेक्टेयर / प्रतिशत)	स्कल बोया गया क्षेत्रफल (हेक्टेयर / प्रतिशत)
2001–02	282170, (50.11)	273173, (48.51)	7761, (1.38)	563104, (100.00)
2002–03	281683, (49.57)	277665, (48.87)	8865, (1.56)	368213, (10.00)
2003–04	280668, (49.19)	280027, (49.08)	9843, (1.73)	570538, (100.00)
2004–05	284174, (48.41)	288908, (48.84)	10055, (1.75)	575137, (100.00)
2005–06	273566, (49.33)	269053, (48.53)	11966, (2.15)	554585, (100.00)
2006–07	307303, (98.80)	287294 (47.49)	10315, (1.71)	604912, (100.00)
2007–08	376150, (51.61)	286065, (46.70)	10343, (1.69)	612558, (100.00)
2008–09	316945, (51.75)	285308, (46.59)	10444, (1.66)	612397, (100.00)
2009–10	316935 (51.75)	285305 (46.58)	10217 (1.67)	612357, (100.00)
20010–11	314984, (52.38)	276174, (45.93)	10171 (1.69)	601329 (100.00)

Created by Universal Document Converter

अपने व्यवसाय के रूप में अपनाया है। कृषि विकास होने के परिणामस्वरुप अध्ययन क्षेत्र में आर्थिक विकास का स्तर भी ऊँचा हुआ हैं।

जनपद शाहजहाँपुर में कृषि क्षेत्र में विगत वर्षो में हुई वृद्धि को निम्न तालिका में दर्शाया गया हैं ।

स्त्रोत –

1. उत्तर प्रदेश कृषि आंकड़े निदेशक कृषि सांख्यिकीय उत्तर प्रदेश लखनऊ–2005
2. जिला सांख्यिकीय पत्रिका जनपद शाहजहाँपुर 2005 ,2007 ,2011

सिंचाई का विकास :–

मानव समुदाय ने जब से कृषि कार्य प्रारम्भ किया हैं सम्भवतः तभी से कृषि क्षेत्रो में सिंचाई व्यवस्था को भी किसी न किसी रूप में अपनाने का प्रयास किया हैं ।

जनपद शाहजहाँपुर के कुछ ग्रामों में आज भी इस प्रकार की ढेकुली देखी जा सकती हैं। परन्तु ढेकली और बम कुओ द्वारा एक या दो वर्श तक ही कार्य किया जा सकता था , क्योंकि वर्शा ऋतु में ये प्रायः नश्ट हो जाते थें। अध्ययन क्षेत्र में सम्पन्न किसानों ने अथक प्रयास करके लखौरी ईटों की सहायता से कुछ पक्के कुओं का भी निर्माण कर लिया था। सिंचाई के साधनों में सबसे विकसित एवं सस्ता साधन नहरें थी। ब्रिटिश उपनिवेशकाल में जनपद शाहजहाँपुर में नहरों का निर्माण एवं विकास होने लगा था। जनपद में सबसे प्रथम नहर का निर्माण 1930 में किया गया था। जिनकी सकल लम्बाई 178 किलोमीटर थी, तथा इनके द्वारा 8765 हेक्टेयर भूमि सीचीं जाती थी। वर्ष 1945 तक आते – जाते सिंचाई के स्वरुप में व्यापक परिवर्तन दिखलाई पड़ने लगे। सिंचित क्षेत्र , सिंचाई तकनीकी, सिंचाई के साधनों में पर्याप्त अन्तर आ गया। कुओं का स्वरुप बदलने लगा। ढेकुली , चरसे , बम आदि कम होने लगे, उनके स्थान पर पक्के कूपों का निर्माण होने लगा।

फसल उत्पादन :–

किसी भी क्षेत्र की कृषि उत्पादकता उस क्षेत्र विशेश की कृषि सक्रियता ,कृषि गहनता एवं कृषि कुशलता पर निर्भर करती है यदि इनमें कमी आती है, तो उत्पादन कम होने लगता हैं। क्षेत्र के विकास के मापने के लिए उस क्षेत्र में कृषकों उत्पन्न की जाने वाली फसलों के प्रति हेक्टेयर औसत उत्पादकता से लगाया जा सकता हैं। फसलों की औसत उपज क्षेत्र विशेश में व्यवहृत कृषि पद्धति, सिंचाई साधनों की उपलब्धता एवं उनका स्वरूप, मिटिट्यों का भौतिक – रासायनिक गुण कृषकों का ज्ञान स्तर, कृषि कार्य में व्यवहृत तकनीकी आदि भौतिक, सामाजिक तथा आर्थिक कारकों पर निर्भर करती है, जिनमें परिवर्तन होने पर औसत उपज भी परिवर्तित हो जाती है। शाहजहाँपुर जनपद की कृषि अर्थव्यस्था चूँकि भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग हैं। स्वतन्त्रता से पूर्व जनपद में कृषि उत्पादकता बहुत कम थी, कृषि कार्य केवल खाद्यान्न आपूर्ति हेतु ही किया जाता था। कृषि में केवल खाद्यान्न फसलें ही उगाई जाती थीं अधिकांश फसलें वर्षा पर ही आधारित थी। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पष्चात् कृषि क्षेत्र में बढोत्तरी, सिंचाई के साधनों में वृद्धि होने के परिणामस्वरूप कृषि उत्पादकता में वृद्धि हुई। वर्ष 1951–52 में कृषि उत्पादकता 19139676 मी0 टन थी जिसमें औसत उपज 60.05 कुन्तल प्रति हेक्टेयर थी । मानव संख्या में दिनों – दिन वृद्धि होने के परिणाम स्वरूप कृषि उत्पादकता एवं उपज में भी वृद्धि हुई। जो वर्ष 2010–2011 में सकल कृषि उत्पादक 38069830 कुन्तल है, जिसमें औसत उपज 108.70 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है।

जनपद शाहजहाँपुर के कृषि उत्पादन एवं औसत उपज के विकास को निम्न तालिका – में दर्शाया गया हैं ।

तालिका संख्या –02

जनपद शाहजहाँपुर में कृषि उत्पादन एवं औसत उपज का विकास (2001.02.2010.11)

वर्ष	कृषि उत्पादन (कु0 में)	औसत उपज (कु0 प्रति हेक्टेयर में)
2001–02	36721495	103.35
2002–03	37072364	104.19
2003–04	37151185	107.25
2004–05	37800235	108.93
2005–06	39278891	113.15
2006–07	36901613	106.13
2007–08	36878574	105.38
2008–09	36542381	104.29
2009–2010	37521405	107.11
2010–2011	38069830	108.70

स्त्रोत –

1. त्तर प्रदेश कृषि आंकड़े निदेशक कृषि सांख्यिकीय उत्तर प्रदेश लखनऊ , 2005
2. जिला सांख्यिकीय पत्रिका जनपद शाहजहाँपुर 2005 , 2007, 2011

पशुपालन का विकास :–

किसी क्षेत्र में कृषि विकास के साथ – साथ आर्थिक विकास में पशुपालन का विशेष महत्व है। कृषि कार्य में कार्यरत जनसंख्या का एक भाग पशुपालन कर अपनी आय में बढोत्तरी करता हैं। कृषि भूमि के अभाव में पशुधन जीविकोपार्जन का मुख्य साधन हैं इस प्रकार जहाँ पर पशु पालन की गुणवक्ता एवं संख्या जनसंख्या के सामाजिक – आर्थिक स्तर को निर्धारित करती हैं, वहीं जनसंख्या को सुदृढ़ आर्थिक आधार भी प्रदान करती हैं। दुग्ध व्यवसाय हेतु पशुधन मुख्य आधारभूत साधन हैं, जो किसी क्षेत्र विशेश में दुग्ध उपलब्धता, दुग्ध उत्पादो का स्वरूप व उनकी मात्रा तथा दुग्ध में सलंग्न व्यक्तियों की संख्या एवं उनके जीवन स्तर को निर्धारित करता

Created by Universal Document Converter

हैं। पशुपालन कृषि का एक अभिन्न अंग है , यह व्यवसाय एक दूसरे के सहयोग से ही सफल रहता है, जिससे मानव अधिकतम लाभ प्राप्त करता हैं।

शाहजहाँपुर जनपद में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् पशुधन की संख्या में निरन्तर वृद्धि हुई हैं। वर्ष 1972 की पशुगणना वर्श के अनुसार सकल पशुधन की संख्या 814293 थी, जिसमें महिशवंशीय पशुधन 275558 गौंवशीय पशुधन 387777 एवं अज्ञातवंशीय पशुधन 150958 सम्मिलित थे। इस समयावधि में पशुधन की संख्या में कमी का कारण पशुओं के संक्रामण रोग गलाघोंटू एवं खुरपा रोग जैसे प्रमुख थे। अध्ययन क्षेत्र की जनसंख्या में दिनोंदिन वृद्धि करना प्रारम्भ कर दिया। मानव संख्या में वृद्धि होने के कारण कृषि क्षेत्र संकुचित होने के कारण ग्रामीण क्षेत्र में जनसंख्या ने भरण – पोषण हेतु पशुधन के लिए अधिक महत्व दिया था।

पशुधन की संख्या में कमी का प्रमुख कारण कृषि कार्य में प्रयुक्त मशीनीकरण एवं ग्रामीण क्षेत्र में पशुओं के उचित रखरखाव जैसी समस्यायें हैं। वर्ष 2011 में सकल पशुधन की संख्या 866199 हो गई है, जिसमें महिशवंशीय पशुधन की संख्या 316802, गौवंशीय पशुधन की संख्या 283846 एवं अज्ञात वंशीय पशुधन की संख्या 265551 सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्र के कृषिकों ने काम में आने वाले दुधारू पशुओं को ही पालना प्रारम्भ कर दिया हैं, वर्तमान में चारे की कमी के कारण अधिकांश पशुपालन पशुओं का क्रय – विक्रय करते रहते हैं, जिससे वह अतिरिक्त आय प्राप्त कर आर्थिक स्तर के सन्तुलन को बनाये रखते हैं।

जनपद शाहजहाँपुर में पशुधन के विकास को निम्न तालिका – में दर्शाया गया हैं –

तालिका संख्या – 03

जनपद शाहजहाँपुर में पशुधन के विकास (1972–'2011)

वर्ष	सकल पशुधन	पशुधन के वर्ग		
		महिशवंशीय	गौंवशीय	अज्ञातवंशीय
1972	814293	275558	387777	150958
1978	741117	278873	332203	130041
1982	918614	324947	375433	218234
1988	1071216	373053	353295	344899
1993	1095352	376679	334419	384254
1997	997093	399919	309290	287884
2003	846947	315190	344535	287222
2010	866199	316802	283846	265551

स्त्रोत :–

1. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर ऑफ शाहजहाँपुर 1981
2. उत्तर प्रदेश कृषि आंकड़े लखनऊ 1993
3. जिला सांख्यिकीय पत्रिका जनपद शाहजहाँपुर 2005 ,2011
4. जिला अर्थ एवं संख्या प्रभाग द्वारा प्राप्त सूचना पर आधारित।

परिवहन सुविधाओं का विकास :–

आधुनिक युग में मानव के समस्त आर्थिक क्रियाकलापों तथा कृषि, उद्योग, व्यापार आदि के विकास में परिवहन के साधनों की प्रभावी भूमिका रही हैं। प्राचीन काल में घोड़ा, टट्टू, बैलगाड़ी, नाव और स्वयं मानव परिवहन के साधन थे। परन्तु वैज्ञानिक प्रगति अनुसंधान और बड़ी आवश्यकताओं के परिणामस्वरूप आज वायुयान, जलयान, रेल, आटोमोबाइल्स इत्यादि परिवहन के मुख्य साधन बन गए हैं। आर्थिक विकास के स्तर में विकास प्रक्रियायें एक अति महत्वपूर्ण कारक परिवहन हैं।

ब्रूंश के अनुशार परिवहन के साधन धरातल के भौतिक स्वरूप मे परिवर्तन घटते करते हैं। साथ ही साथ जनसंख्या वितरण तथा विकास प्रक्रिया को भी प्रभावित करते हैं। परिवहन का विकास मानव को सूक्ष्म केन्द्र से निकटवर्ती क्षेत्रों तक सम्बन्धित कर दिया। ज्यों – ज्यों परिवहन का विकास होता गया, मानव का क्षेत्र विकसित होता गया। परिवहन के विकास के प्रत्येक चरण में नवीन प्रविधियों का आविष्कार होता रहा हैं। परिवहन के साधनों में उत्कृष्टता आती रही तथा मानव संस्कृति का स्वरूप निरन्तर बदलता गया एवं वर्तमान विकसित स्वरूप को प्राप्त कर लिया। परिवहन तन्त्र में मार्ग, वाहन तथा चालक शक्ति तीनों का महत्व होता हैं। प्रागैतिहासिक काल से वर्तमान तक इन तीनों में निरन्तर प्रविधियों का आविष्कार हुआ तथा इनका स्वरूप भी परिवर्तित हुआ। पगदण्डी, शकटपथ, कच्चा मार्ग, पक्का मार्ग, रेलमार्ग, रज्जुमार्ग आदि पथ के स्वरूप, मानव, पशु तथा कोयला, पेट्रोल, जल विद्युत आदि शक्ति के स्वरूप तथा पहिया रहित गाड़ी, दो पहिए की गाड़ी, चार पहिए की गाड़ी, लकड़ी का गाड़ी, लोहे की गाड़ी, आदि वाहन के स्वरूप मानव संस्कुति तथा प्रविधि के साथ विकसित हुए हैं।

जनपद शाहजहाँपुर में सर्वप्रथम बदायूँ – जलालाबाद – कांठ –सण्डीला– लखनऊ सड़क मार्ग का निर्माण किया गया था। उस समय जनपद शाहजहाँपुर लखनऊ – दिल्ली राष्ट्रीय राजमार्ग का मुख्य केन्द्र बिन्दु था। अध्ययन क्षेत्र में राष्ट्रीय – राजमार्ग की लम्बाई 69 किलोमीटर है, जिसका निर्माण शेरशाहसूरी ने कराया था। वर्ष 1901 तक ईस्ट इण्डिया कम्पनी और रोहेला सरदारों के समय और मुख्य स्थानों को कच्चे मार्गों से जोड़ दिया गया। उस दौरान जमींदारों एवं जिला परिशदों द्वारा सड़कों का निर्माण एवं रख रखाव किया जाता था। स्वतन्त्रता प्राप्ति (1947) तक अध्ययन क्षेत्र में सकल पक्की सड़कों की लम्बाई मात्र 207 किमी0 थी, जिसमें 165 किमी0 लोकनिर्माण विभाग और शेष 42 किमी0 डिस्ट्रक्ट बोर्ड द्वारा तैयार की गई थी। वर्ष 1947 अर्थात् आजादी प्राप्ति के पश्चात् ग्रामीण क्षेत्र में आर्थिक विकास का दृष्टिगत रखते हुए परिवहन सुविधाओं का भी विकास किया गया।

शाहजहाँपुर जनपद में सड़क मार्गो के साथ – साथ रेलमार्गो भी आर्थिक विकास के स्तर को ऊँचा करने में सहायक सिद्ध हुए हैं। शाहजहाँपुर जनपद में प्रथम रेलमार्ग का निर्माण 1884 में लखनऊ –

Created by Universal Document Converter

दिल्ली के मध्य स्थापित किया गया था, जबकि दूसरा रेलमार्ग वर्ष 1911 में स्थापित किया गया था। वर्ष 1925 से पूर्व सभी रेलमार्ग अवध – रूहेलखण्ड रेलवे द्वारा संचालित थे, जो वर्ष 1925 – 1951 के मध्य ईस्ट इण्डिया रेलवे कम्पनी के अधीन रहे। 1 मई 1952 को सभी रेलमार्गो उत्तर रेलवे के संचालन में आ गए थे। जनपद शाहजहाँपुर में दो प्रकार के रेलमार्गो का विकास हुआ है, जिसमें बड़े रेलवे लाइन एवं छोटी रेलवे लाइन सम्मिलित हैं। अध्ययन क्षेत्र में बड़ी रेलवे लाइन की लम्बाई 75 किमी0 है, जो उत्तर रेलवे के अधीन है, यह रेलवे की मुख्य लाइन हैं। पूरब में शाहजहाँपुर से हरदोई, लखनऊ, गोरखपुर, पटना होती हुई कलकत्ता एवं गोहाटी तक जाती है, जबकि पश्चिम में बरेली, मुरादाबाद होती हुई दिल्ली सहित अनेक दूरदराज क्षेत्रों को जोड़ती है। इसके अतिरिक्त एक ब्रांच लाइन है, जो रोजा होती हुई सीतापुर होकर लखनऊ को पहुँचती हैं।

इसके अतिरिक्त छोटी रेलवे लाइन भी शाहजहाँपुर होती हुई गुजरती है, जो पूर्वोत्तर रेलवे के अधीन है, जिसका मुख्यालय जनपद के समीपवर्ती महानगर बरेली हैं। यह रेलवे मार्ग टनकपुर से कासगंज को जोड़ता है। जनपद में रेलमार्गो पर कुल 25 स्टेशन है, जिसमें 19 रेलवे स्टेशन ग्रामीण क्षेत्र में एवं 09 रेलवे स्टेशन नगरीय क्षेत्र में स्थित हैं। रेलमार्ग के विस्तार की सम्भावना कम है, किन्तु फिर भी यह रेलमार्ग जनपद में परिवहन के विकास में अपनी अग्रणी भूमिका निभा रहे हैं। परिवहन विकास के परिणामस्वरूप क्षेत्रीय स्तर पर आर्थिक विकास भी तीव्र गति से हुआ हैं।

संचार सुविधाओं का विकास :–

आर्थिक विकास के स्तर में विकास प्रक्रिया का एक अति महत्वपूर्ण कारक संचार है, प्रत्येक क्षेत्र के विकास में संचार व्यवस्था एक अति आवश्यक तत्व हैं। संचार के साधन धरातल के भौतिक स्वरूप में परिवर्तन घटित करते हैं। प्रारम्भ में मानव एक स्थान से दूसरे स्थान पर घुमक्कड़ जीवन के दौरान सूचनाओं को एकत्रित करता था। ज्यों ज्यों मानव सभ्यता का विकास हुआ, संचार का क्षेत्र विकसित हुआ। वास्तव में संचार क्रान्ति का वर्तमान स्वरूप मानव संघर्शो का ही योगदान हैं। संचार साधनों में डाकघर, तारघर, पी0 सी0 ओ0, टेलीफोन, टी0 वी0, रेडियों, इन्टरनेट प्रमुख हैं, जिनका विकास मानव संख्या में वृद्धि के परिणाम स्वरूप हुआ है। संचार सुविधाओं के विकास की वजह से गांवो में रोजगार के तमाम साधन उपलब्ध हो गए हैं। संचार क्रान्ति के इस युग में जहाँ हर व्यक्ति ऑनलाइन है वहीं लोगों को ऑनलाइन कराने के एवज में सैकड़ों युवाओं को रोजगार मिल रहा हैं।

जनपद शाहजहाँपुर में भी राष्ट्र की भांति संचार सुविधाओं का विकास हुआ हैं। संचार संविधाओं के विकास के परिणाम स्वरूप ग्रामीण क्षेत्र में आर्थिक विकास हुआ हैं। आज डाकघर एवं तारघर का नाममात्र को ही रह गया हैं। संचार सविधाओं के विस्तार के साथ ही शहर से लेकर गाँव तक पी0 सी0 ओ0 कारोबार ने बहुत तेजी से विकास किया हैं।

औद्योगिक विकास :–

मानव अतीत से जब अपनी आवश्यकता की पूर्ति घरेलू उद्योगों से करना प्रारम्भ किया, तब उसी संस्कृति में परिवर्तन प्रारम्भ हुआ। ज्यों – ज्यों उद्योगों का विकास एवं प्रसार होता गया त्यों – त्यों मानव की संस्कृति का विकास होता गया।

जनपद शाहजहाँपुर एक कृषि प्रधान क्षेत्र है, यहाँ पर कृषि आधारित उद्योगों का विकास मुख्य रूप से हुआ हैं। स्वतन्त्रता से पूर्व यहाँ गन्ना आधारित उद्योगों की स्थापना हुई थी। गन्ना उद्योग का जन्म 1905 में रोजा (शाहजहाँपुर) में चीनी मिल्स की स्थापना से हुआ था। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्र में गुड़, खाण्ड व राव का उत्पादन किया जाता था। वर्ष 1910 तक लकड़ी के कोल्हू से रस निकाला जाता था। परन्तु इसके पश्चात् लकड़ी व लोहे के मिश्रित आधुनिक कोल्हू का प्रचलन बढ़ा।

वस्तुतः जनपद शाहजहाँपुर में सर्वागीण औद्योगिक विकास के लिए समुचित रूप से 1980 के दशक से प्रयास किया गया तथा अवस्थापना संबंधी संविधाओं का विस्तार हुआ। परिवहन एवं संचार सुविधाओं के विकास के परिणाम स्वरूप अध्ययन क्षेत्र में उद्योगो की स्थापना को नवीन गति मिली। जनपद शाहजहाँपुर देश की सभी प्रमुख नगरों के जुड़ जाने के उपरान्त अन्य क्षेत्रों के निवेशकों का आना प्रारम्भ हुआ । इसके साथ ही साथ क्षेत्रीय विकास को दृश्टिगत रखते हुए सरकार ने विभिन्न उद्योगों की स्थापना की । निवेश एवं उत्पादन के पैमाने के आधार पर क्षेत्र के उद्योगों को 3 प्रमुख वर्गों में विभाजित किया गया हैं

1. वृहद एवं मध्यम स्तर के उद्योग ,
2. लघु स्तर के उद्योग,
3. कुटीर स्तर के उद्योग ।

पुँजी व्यवस्था :–

किसी क्षेत्र विशेष के आर्थिक विकास को ऊँचा करने में पूँजी महत्वपूर्ण आधार है, क्योंकि जिस प्रकार मानव शरीर में रक्त संचार जीवन का आधार है, ठीक उसी प्रकार आर्थिक क्रियाशीलता के लिए पूंजी निर्माण की अनुकूल दशायें होना अत्यन्त आवश्यक हैं। जनपद शाहजहाँपुर एक विकासशील क्षेत्र है, जहाँ पर पूंजी निर्माण की दशायें सीमित हैं, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्र इससे क्षेत्र इससे अधिक प्रभावित है जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव विकास पर परिलक्षित होता हैं।

जनपद शाहजहाँपुर में वर्ष 1980 के पश्चात् बैकों को शाखाओं में विस्तार के साथ – साथ क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, जिला सहकारी बैंक, सहकारी कृषि, एवं भूमि विकास बैंक की स्थापनायें हुईं इन बैकों ने ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि विकास के साथ – साथ अन्य व्यवसाय को प्रात्साहित करने के लिए क्षेत्रीय व्यक्तियों को ऋण की सुविधायें आसान किश्तों पर उपलब्ध कराई गई, जिसके परिणामस्वरूप ग्रामीण क्षेत्र में कृषि कार्य में विकास की गति प्रारम्भ हुई तथा साथ

Created by Universal Document Converter

ही साथ क्षेत्रीय व्यक्तियों ने अन्य व्यवसाय को अपना का अपनी प्रति व्यक्ति आय में बढ़ोत्तरी की। मानव संख्या में वृद्धि होने के कारण कृषि भूमि से अधिक उपज प्राप्त करने तथा अन्य प्रकार की आवश्कताओं कर पूर्ति हेतु पूँजी की आवश्यकता हुई। अध्ययन क्षेत्र, में आर्थिक विकास की गति वर्ष 1990 के पश्चात् देखने को मिली हैं।

राष्ट्रीय कृत बैकों की संख्या 92 हो गई, जिसके 1056232 हजार रूपये ऋण प्रदान किया गया। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की संख्या 35 हो गई, जिनके द्वारा 45017 हजार रूपये ऋण प्रदान किया गया। जिला सहकारी बैंक को शाखायें 18 थी, जिनके द्वारा 278053 हजार रूपये ऋण प्रदत्त किया गया। सहकारी कृषि एवं भूमि विकास बैकों की संख्या 06 थी, जिनके द्वारा 175844 हजार रूपये ऋण प्रदान किया गया था।

जनपद शाहजहाँपुर में मानव संख्या में वृद्धि होने के परिणाम स्वरूप कृषि क्रिया कलापों के साथ ही साथ अन्य व्यवसाय को करने के लिए पूंजी की आवश्यकता भी बढ़ती गई हैं। अध्ययन क्षेत्र में कार्यरत बैकों ने अपने व्यवसाय में वृद्धि करने के साथ ही साथ ऋण उपलब्धता में भी वृद्धि की, जिससे क्षेत्रीय व्यक्ति विकास के स्तर को ऊँचा कर सकें। वर्ष 2000–2001 में राष्ट्रीयकृत बैकों की शाखायें

तालिका संख्या –04

जनपद शाहजहाँपुर में बैकिंग व्यवस्था का विकास (1990–91–2000–01)

क 0 संख्या	राष्ट्रीयकृत	बैंक	क्षेत्रीय ग्रामीण	बैंक	जिला सहकारी	बैंक	सहकारी कृषिएवं	भूमि विकास बैंक
	संख्या	प्रदत्त ऋण	संख्या	प्रदत्त ऋण	संख्या	प्रदत्त ऋण	संख्या	प्रदत्त ऋण
1990–91	92	1056232	35	45017	18	278053	6	175844
1991–92	99	1069846	35	54208	18	279208	6	210827
1992–93	104	1148164	35	62608	18	289368	8	245833
1993–94	104	1237736	35	77024	18	332313	8	284793
1994–95	107	1274291	35	78125	18	405786	8	324879
1999–2000	107	129114	35	79723	18	413141	8	426510
2000–01	109	1315123	35	82134	18	425314	9	53404

109 हो गई, जिनके द्वारा 1315123 हजार रूपये ऋण वितरित किया गया। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की संख्या यथावत रही, किन्तु ऋण उपलब्धता में वृद्धि हुई, जो

स्त्रोत :–

1. डिस्ट्रिक्ट गजेटियर ऑफ शाहजहाँपुर 1981
2. उत्तर प्रदेश सांख्कीय पत्रिका लखनऊ 1991 –1995
3. जिला अर्थ एवं संख्या प्रभाग द्वारा सूचना पर आधारित ।

सन्दर्भ

1. कौशिक एस0 डी0 : मानव भूगोल के सरल सिद्धान्त 2005 रस्तौगी पब्लिकेशन्स मेरठ पृष्ठ – 77
2. मधुजैन : आर्थिक विकास में मानव पूंजी योजना मासिक पत्रिका जून 2010 पृष्ठ –35
3. प्रसाद गायत्री : सांस्कृतिक भूगोल शारदा पुस्तक भवन इलाहबाद, 2008 पृष्ठ –18
4. क्लाक्र : दि कल्चरल लैण्ड स्केप कैलिफोर्निया
5. तिवारी आर0सी0 : कृषि भूगोल प्रयाग पुस्तक भवन इलहाबाद 2007, सिंह एवं बी0एन0 : पृष्ठ –7
6. मोदी अनीता : भारत में कृषि चुनौतियों एवं समस्यायें योजना मसिक पत्रिका जनवरी 2001 पृश्ठ –44
7. मसीह एफ0 : संसाधन भूगोल तुलसी प्रकाशन शास्त्री सदन गिलबर्ट जत्तीबाड़ा मेरठ पृश्ठ – 338
8. डॉ0 वीर बहादुर : पशुपालन एवं दुग्ध विज्ञान 2003 (माध्यमिक शिक्षा सिंहबोर्ड राजस्थान के अधिकारान्तर्गत विष्वविद्यालय, उदयपुर द्वारा प्रकाशित) आलोक प्रकाशन चौड़ा रास्ता जयपुर पृश्ठ 1–2
9. प्रसाद गायत्री : सांस्कृतिक भूगोल शारदा पुस्तक भवन 2008 पृष्ठ – 118–119
10. जतिन कुमार : संचार सुविधाओं से ग्रामीण युवाओं को मिला रोजगार कुरूक्षेत्र मासिक पत्रिका जनवरी –2012 पृश्ठ–10–11

डॉ0 जिलेदार
एम0ए0, बी0एड0, पी0एच0डी0,
असिस्टेंट प्रोफेसर भूगोल विभाग
ईश्वरी प्रसाद रामकली
खालसा डिग्री कालेज,
जनपद – रामपुर , उ0 प्र0

डॉ0 विपेन्द्र कुमार अरूण
एम0ए0,
बी0एड0,पी0एच0डी0,
प्रवक्ता भूगोल विभाग,
मिलक, महाविद्यालय
विरासिन देवी, निगोही,
शाहजहाँपुर, उ0 प्र0

पत्राचार पता : –
डॉ0 जिलेदार s/o स्व0 श्री सूबेदार
ग्राम –दीपपुर , पो0 – खुदागंज
जनपद – शाहजहाँपुर ,242305
ईमेल – रपसमकंतेचद/हउंपसण्बवउण्पद
मो0 नं0 – 9198729024 7398844786

Created by Universal Document Converter

निष्कर्श :

हिन्दी कहानी साहित्य में सांस्कृतिक युगबोध

डॉ० प्रवीण कुमार वर्मा

सारांश : साहित्य समाज का दर्पण है। सामाजिक परिस्थितियों पर पैनी निगाह साहित्यकार की होती है। वैसे तो समाज में रहने वाला प्रत्येक प्राणी परिस्थितियों का बोध करता है। लेकिन साहित्यकार की पैनी दृष्टि प्रत्येक परिस्थिति से उत्पन होने वाली समस्याओं को समाज के समक्ष प्रस्तुत करते हुए समाज को सचेत एवं जागरूक करते हुए समाधान की ओर अग्रसर होने का प्रयास करती है। वास्तव में साहित्य वह साधन है जो भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त होकर अपने सौंदर्य आकर्षण आदि से आम आदमी को प्रभावित करके आनन्दित करते हुए जनसाधारण का हित करता है।

संस्कृति शब्द की व्युत्पत्ति सम उपसर्ग के साथ संस्कृत की 'कृ' धातु लगाने से हुई है। संस्कृत का सजृन संस्कार शब्द से माना जाता है। जिसके आधार पर संस्कृति शब्द का अर्थ सुधारने वाली या परिष्कार करने वाली होगा। अतः परिष्कृत विचारों से प्रेरित नियमों की जीवन्त परम्परा को ही संस्कृति कहा जाता है। संस्कृति में किसी देश के संस्कार, धर्म, मान्यताएं, कलाएं आदि सभी पक्ष समाहित हो जाते हैं। संस्कृति के संदर्भ में वासुदेव शरण अग्रवाल का कथन – '' मनुष्य ने देश और काल में विश्व के रंग मंच पर जो सोचा है, क्रमशः, वहीं मानव की संस्कृति है। संस्कृति सम्पूर्ण जीवन को परिभाषित परिष्कृत करने वाली जीवन व्यापी आचार पद्धति है।''

संस्कृति का रूप एक बहती हुई नदी की धारा के समान है जिसमें मनुष्य के समस्त विचार, विश्वास, क्रियाकलाप एवं अभिवृत्तियों की ओर संकेत किया जाता है। रामधारी सिंह दिनकर का संस्कृति के सम्बन्ध में कथन – ''संस्कृति जिन्दगी का एक तरीका है और यह तरीका सदियों जमा होकर उस समाज में छाया रहता है। जिसमें हम जन्म लेते हैं इसलिए जिस समाज में हम पैदा हुए हैं अथवा जिस समाज में मिलकर जी रहे हैं। उसकी संस्कृति हमारी संस्कृति है। य़द्यपि हम अपने जीवन में जो संस्कार जमा करते हैं वह भी हमारी संस्कृति का ही अंग बन जाते हैं और बनने के बाद हम अन्य वस्तुओं के साथ अपनी संस्कृति की विरासत भी अपनी संतानों के लिए छोड़ जाते हैं। इसलिए संस्कृति वह चीज मानी जाती है। जो हमारे सारे जीवन को थोपे हुए हैं तथा जिसकी रचना और विकास में अनेक सदियों के अनुभवों का हाथ है। यही नहीं बल्कि संस्कृति हमारा पीछा जन्म – जन्मान्तर तक करती है।''[2]

मानव जीवन के संस्कारों का वह रूप संस्कृति है। जिसमें मनुष्य के क्रियाकलापों, विश्वासों एवं समस्त विचारों का उल्लेख होता है। अनेकता में एकता, समन्वय भावना, प्राचीनता–नवीनता, लौकिकता एवं पारलौकिकता विचारों का सुन्दर समन्वय भारतीय संस्कृति की पहचान है। धर्म श्रेष्ठ स्थान बड़ों के प्रति सम्मान, छोटों के प्रति स्नेह, प्रहीत हेतु अपने सुखों का त्याग करना भारतीय संस्कृति की विशिष्ट उपलब्धि है। संस्कृति देश–विदेश की उपज होती है। उसे देश के मौलिक वातावरण और उसमें पलित, पोषित एवं परिवर्धित विचारों से उसका सम्बन्ध होता है। मानव जीवन को सद्मार्ग पर चलने के लिए संस्कृति प्रेरित करती है, जीवन स्तर को उन्नत बनाती है, मनुष्य के आचार–विचार, व्यवहार, जीवन पद्धति, लक्ष्य एवं आदर्शों का निर्माण करती है। इसके अनेक पक्ष हैं संस्कृति का समावेश साहित्यकार में भी होता है। वह अपने कोमल भाव साहित्य में संस्कृति का समावेश कर उसे सरस बनाता है। डॉ० देवराज के अनुसार – '' वास्तव में देखा जाये तो साहित्य का आधार पाकर संस्कृति की ऐतिहासिक परम्परा नष्ट होने से बच जाती है। मानव जाति के इतिहास में होने वाली सांस्कृतिक प्रगति मुख्यतः प्रतिकात्मक लेखों और ग्रंथों के इतिहास में होने वाली संस्कृति प्रगति मुख्य तथा प्रतिकात्मकता लेखा–और ग्रंथों के रूप में सुरक्षित रहती है।''[3]

साहित्यकार का व्यक्तित्व अपने समाज या देश की संस्कृति के तत्वों से निर्मित होता हैं और उसके कृतित्व में वह साकार रूप में दिखाई देते हैं वह विभिन्न भाव भंगिमाओं के माध्यम से अपने साहित्य में उद्देश्य पूर्ति करता है। सांस्कृतिक रूढ़ियों, परम्पराओं और दोषपूर्ण व्यवस्थाओं को मिटाकर उनके स्थान पर प्रगतिशील –मानवीय मूल्यों की स्थापना उद्देश्य से वह साहित्य का सृजन करता है। जिस साहित्य में सांस्कृतिक चेतना की अभिव्यक्ति नहीं होती। उसे साहित्याभ्यास मात्र समझा जाता है। हमारा साहित्य हमारी संस्कृति से अनुप्राणित है।

विशेष क्षेत्र विशिष्ठ लोप जन मानस का जन सम्बन्ध लोकसंस्कृति से होता है। जैसे–बृजमण्डल की बृज संस्कृति राधा–कृष्ण की रसमयी लोकलीलाओं से अनुप्राणित है। पंजाबी संस्कृति पर सिख गुरूओं की अमृतमयी वाणी का विशेष प्रभाव है। लोक साहित्य के रूप में लोक मानस लोक सांस्कृति अभिव्यक्त होती है। डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी के मतानुसार – ''लोक साहित्य के निर्माण के पीछे एक सामूहिक लोक मानस की कल्पना अनेक विद्वानों ने की है। उनकी विचार धाराओं के अनुसार लोक गीतों तथा लोक कथाओं आदि की रचना समस्त लोक एक साथ करता है।''[4]

संस्कृति, साहित्य एवं साहित्यकार के संदर्भ में विचार करने के उपरान्त अब हम प्रथम दशक के कहानी साहित्य में किस किस सांस्कृति युगबोध का प्रभाव हमारी पीढ़ी पर पड़ा था। प्रथम दशक में परिस्थितियों अनुरूप सामाजिक वातावरण की क्या स्थिति रही है? इस विषय निम्न बिन्दुओं के माध्यम से विचार–विमर्श करेंगे –

1. **धर्म के नाम पर भ्रष्ट आचरण** – वर्तमान में मजहब एवं धर्म के नाम पर अपने धर्म को श्रेष्ठ स्थापित करना, धार्मिक उन्माद में अपनी दुष्प्रवृत्तियों को उच्च एवं सत्य सिद्ध करना, झगड़ा करना–राष्ट्र

Created by Universal Document Converter

के विकास की सबसे बड़ी बाधा है। आज देश मुल्ला–मौलवियों, साध ु–सन्तों, महन्तों, पूजारियों एवं मठाधीशों स्वयं को अल्लाह एवं भगवान मानकर धर्म की आड़ घोर अनैतिक कार्यो को करने का ठेका ले लिया है। इनका मुख्य उद्देश्य – व्यावसायिकता एवं स्वार्थपूर्ति ही होता है। अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु ये श्रद्धालुओं को पाखण्ड, चमत्कार एवं ढोंग द्वारा ठगने का कार्य करते हैं। इनके चुंगल में शिक्षित विद्वान, उच्च अधिकारी एवं राजनेता तक नहीं बच पाते क्योंकि भारतीय संस्कार एवं संस्कृति की जड़ें इनके मानस में विद्यमान रहती है। अतीत में साधु–संत गांव या शहर से दूर कर तपस्यारत रहते थे लेकिन आधुनिक युग में इनके रहन सहन, खान–पान में बदलाव आया। ये सुख सुविधाओं से परिपूर्ण जीवन जीने के अभ्यसत हो चुके हैं।

भारत के विभिन्न धार्मिक स्थलों में पर हम पण्डित पुजारियों की लूट, व्याभिचार, श्रद्धालुओं पर बलातरूप से धन संग्रह एवं मानसिक प्रताड़ना को मथुरा, काशी, द्वारिका, अयोध्या आदि स्थानों पर प्रत्यक्ष देख सकते हैं। ममता कालिया ने अपनी कहानी 'लड़के' में इसी स्थिति के प्रति अपने विद्रोह को व्यक्त किया है। कहानी में अर्जुन नामक पात्र का कथन – ''शाम तक यह सौ रूपये कमा लेगा। हम से तो यही अच्छा है'' दो जमात पढ़ा ना हो, पर अच्छे–अच्छे पढ़े–लिखों का शिकार करता है।[5]

पंखुरी सिन्हा ने ''तीर्थ यात्रा, अर्थ शास्त्र और ईश्वर'' नामक कहानी में धर्म–अधर्म के बीच के अर्थ को स्पष्ट करते हुए। धर्महीनता और धर्म के व्यवसायाधिकरण को प्रकाशित किया है। 'कोई भी दिन' कहानी पण्डितों के तुच्छ आचरण और व्यवहार को व्यक्त करती है – 'पण्डित होकर अपनी पत्नी को मारते हो जो आदमी ईश्वर की पूजा में दूसरों की सहायता करता है। उसका तो परम सात्विक आचरण होना चाहिए। इस तरह की हिंसक प्रवृत्ति पण्डित होने के चरित्र के प्रतिकूल है।'[6]

लेखक के कहानीसंग्रह 'किसाए कोहनूर' के अध्ययन के पश्चात् पाप–पुण्य, विश्वास–अंधविश्वास, के माध्यम का फर्क महसूस किया जाता है। साल एवं निश्छल मन वाले व्यक्ति धर्म के वास्तविक अर्थ को न समझकर पाखण्डि साधु–संतों, पंडो के शिकार हो जाते हैं ऐसी स्थिति में ही धर्म की अवधारणा सम्प्रदायकगत हो जाती है। अरविन्द कुमार सिंह ने 'विष पाठ' कहानी में महन्तों की नैतिक मूल्य हीनता एवं भ्रष्ट आचरण को प्रस्तुत करते हुए अग्रवाल धर्मशाला के महन्त ने ब्राह्मणी विधवा स्त्री को फुसलाकर उसके साथ अनैतिक दुष्कर्म किया – '' विधवा ब्राह्मणी पति की मृत्यु के बाद जेठ की छलकपट और निर्दयता से तरसत थी। वह भटकती हुई विन्ध्याचल की शरण में आई थी। तभी बाबा विश्वनाथ शास्त्री भगवान के रूप में मिले लेकिन बाबा बाजारू निकला वह जिस्म बेचता है।'[7]

हनुमत राव नीरव ने ''अधरानन्द की गंगी '' कहानी में आश्रम, मठों में व्याप्त व्याभिचार एवं अनैतिक दुष्कर्म का पर्दाफाश किया – ''हम ब्रह्म से एकाकार हो चुके हैं। तुम हममे समाकर हमारे साथ एकीकृत हो जाओं और ब्रह्म पाओं अधरानन्द ने ब्रह्म प्राप्ति का सूत्र समझते हुए कहा''[8]

परितोष चक्रवर्ती ''अंधेरा समुन्द्र'' कहानी क्रमकाण्डी पौणा पण्डितों द्वारा कर्मकाण्ड एवं मृत्यु सम्बन्धी संस्कारों के नाम आर्थिक एवं मानसिक शोषण को व्यक्त करती है। कहानी पात्र नरेन्द्र कहता है – ''कैसी भयावह स्थिति के भंवर में फंसा गया हूँ..... एक ओर अभाव का अंधकार .... दूसरी स्वर्गीय पिता समाज, परिवार और संस्कारों से विमुक्त होने की विवहाता।''[9]

धन लोलुपता हेतु विमुख संस्कार :– नई आर्थिक नीति के कारण भौगोलिकता, निजिकरण एवं उदारीकरण से देश का आर्थिक विकास चर्म की ओर उन्मुख तो हुआ है। लेकिन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति ने अपने आदर्श, आचरण, नैतिकता, मूल्य विभिन्न उत्सवों पर निभाई जाने वाली रसमों का धूमिल कर दिया है। मैत्रीय पुष्पा की कहानी ''अपना–अपना आकाश'' की विधवा वृद्ध अम्मा अपने संचित श्रम व त्याग से अपनी संतानों को योग्य बनाकर श्रेष्ठ पदों पर आसिन करने में सहयोग करती है। शहरों से चकाचौंध से प्रभावित होकर बेटे अपनी गांव जड़ों एवं मां के त्याग, समर्पण, आशीर्वाद को भूलकर शहरी युवतियों से विवाह करते हैं जिसमें गांव में मां को मात्र औपचारिकताएं पूरी करने के लिए तथा संकीर्ण सी रस्मों को निभाने के लिए ही सूचित करते हैं। बेटों के कृत्यों से दुखी माँ कहती है – ''अब वह किसी को क्या बताती कि वे बुला ली, यही क्या कम था। वैसे उस समारोह वे तीनों मेल ही कहां खा रहे थे। गाँव – पूरा में वे भले मुखिनी बनी रही किन्तु उनकी कोख जाये पुत्र के विवाह में वे लखमी माँ और बिन्दो को समेटे वह पीछे कुर्सियों पर लुकी–छुपी अजनबी सी बैठी रही। समधी के पूछने पर छोटा उन्हें बुला ले गया तो वह सहमी सिकुड़ती रही आगे।''[10] 'सपनों के धरातल पर' कहानी में लेखक ने समलैंगिकता, लिव इन रिलेनशिप स्वम्बर पर्था आदि समस्या पर विचार किया है। प्रो० महोदय पुरानी संस्कृति प्रतिक होकर लिव इन रिलेनशिप को देश की संस्कृति के लिए एक घातक मानते हैं तो दूसरी ओर छात्र–छात्राएं इसको अपनाने में अपनी शान समझते हैं – ''लिव इन रिलेनशीप अच्छी बात है मगर लड़की–लड़की के साथ रहे, लड़का–लड़के के साथ रहे तो ओर भी बेहतर है। इससे सम्बन्धों में कोईनैतिक गिरावट नहीं आएगी। कहीं सपनों के धरातल पर अपना अस्तित्व ही न मिट जाये..... लिव इन रिलेनशीप पश्चिम सभ्यता है। वहां सैक्स फ्री होता है। हमारे देश की संस्कृति ऐसा करने की इजाजत नहीं देती।''[11]

संयुक्त परिवारों का विघटन वर्तमान की सबसे बड़ी त्रासदी है। पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति से प्रेरित होकर नई पीढ़ी एकल परिवार को महत्ता देकर सुख बटोर रही है। पुरानी पीढ़ी पुराने संस्कारों को लेकर संयुक्त परिवार की नींव को जी–जान से चाहकर बचा पाने के प्रयास में रत है। सीमा ओझा 'सन्नाटा शहर का' कहानी में नई पीढ़ी से संयुक्त परिवार विघटन न होने के लिए चिन्तित है – 'बेटा, इस घोसलें के तिनके को एक–एक करके बटोरा है, जोड़ा है,

Created by Universal Document Converter

समेटा है, संवारा है। यहाँ की आत्मीयता से हवा की सुगन्ध आती है। यहाँ सब अपने हैं, सो छोड़ा नहीं जाता। यह घोंसला हमारी रचना है। इस रचना में हमारा भ्रम है। इसे हमने शारीरिक, मानसिक, आर्थिक विरोधों से लड़कर बनाया है। इसका अंश–अंश हमारी भावना की माला में पिरोया हुआ है। इससे पृथक होकर जीना कठिन नहीं नहीं, असम्भव है हमारे लिए।''[12]

स्पष्ट है कि कहानीकारों ने परम्परागत नैतिक मूल्यों, आचार–विचारों में आए परिवर्तनों को सूक्ष्मता से व्यकत करने का प्रयास किया है।

पाश्चात्य संस्कृति के प्रति मोह – पश्चिम में बसे यूरोपीय देश उनकी सभ्यता एवं संस्कृति पाश्चात्य संस्कृति के नाम से जानी जानी है। इसके मूलाधार ईसाई धर्म, भौतिकवाद, उपभोक्तावादी दृष्टिकोण, पाश्चात्य शिक्षा, समानता और व्यावसायिकता है। इस संदर्भ में अविनाश महाजन का कथन – ''पाश्चात्य संस्कृति के अंधाकरण की प्रवृत्ति एवं दिशाहीन विवेक के कारण परम्परागत नैतिक मूल्यों में बिखराव की स्थिति उत्पन्न हुई। पाश्चात्य चिन्तन के प्रभाव से परम्परागत नैतिक मूल्य विघटन को बल मिला है।''[13] पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति से युवा वर्ग सबसे अधिक प्रभावित हुआ है। विदेशी वस्तुओं के प्रति तीव्र मोह, नशीले पदार्थो का सेवन, परम्परागत नैतिक मूल्यों के प्रति उपेक्षा एवं स्वच्छन्द भौतिक संस्कृति के निर्माण की ललक युवा वर्ग में उत्पन्न होने लगी है। पाश्चात्य संस्कृति के – ''नारी को स्वतन्त्रता देकर स्वावलम्बी तो बनाया लेकिन वह व्यक्तिवादी हो गई है, परिणाम–स्वरूप परिवार टूटने लगे..... विवाह पूर्व और विवाहोत्तर सम्बन्ध में यौन स्वच्छन्दता और उन्मुक्तता को बढ़ावा मिलने से सामाजिक मर्यादा और नैतिकता की अवहेलना होने लगी है।''[14] आर्थिक और शैक्षिक उन्नति ने मनुष्य के जीवन स्तर में परिवर्तन कर दिया है। आज उसके पास जीवन की सभी आवश्यक वस्तुएं उपलब्ध है। कहानी 'सुभद्रा' में लेखक श्रवण कुमार ने परिवार के आर्थिक तथा रहन–सहन में आए परिवर्तन पर अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किए है – ''कहां पहले छोटी से छोटी चीज के लिए तरसना और कहां अब हर चीज की इराफत। जैसा चाहो, वैसा खाओ, जैसा चाहो वैसा पहनो – बढ़िया से बढ़िया साड़ी, बढ़िया से बढ़िया सूट।..... कहां पहले गर्मी की तपिश से झुलसते हुए एक ही पंखें से गुजारा करना और कहां अब कूलर या ए.सी. की ठण्डक में सराबोर रहना। कहां पहले बस के पैसे बचाने के लिए कभी–कभी पैदल ही चल पड़ना, कहां अब दो कदम चलने से बचने के लिए भी कार का सहारा लेना।''[15]

पाश्चात्य सभ्यता एवं सस्कृति ने भारतीय रहन–सहन, विचारों को तो प्रभावित किवया ही है साथ ही साथ खान–पान को भी प्रभावित किया है। मैत्रीय पुष्पा ने 'अपना–अपना आकाश' कहानी में इसी समस्या को व्यक्त किया है। वृद्धा अम्मा ग्रामीण सभ्यता में पली–बढ़ी, वहीं पर अपने तीनों बेटों का शिक्षित किया, बच्चे शहरों में उच्च पदों पर पहुंचे। घर में जो बनता माँ को भी वहीं दिया जाता। एक दिन बड़े लड़के की बहू ने हुक्म सुना दिया था –''अम्मा जी, आज तो बच्चे चायनीज खाने की जिद्द कर रहे उसी में से आधा आपको भी दे देगे, खा लेना।''[16]

बाजारवाद एवं व्यक्तिवाद : उदारीकरण से विकसित इस भौतिक चकाचौंध ने जहां जड़ एवं पारम्परिक मूल्यों को खण्डित किया है वहीं कुछ नए नैतिक मूल्यों की सृजना भी की है। वर्तमान युवा पीढ़ी पुरातन पीढ़ी के प्रति सम्मानीय एवं सकारात्मक भाव न रखकर पारिवारिक परम्पराओं के प्रति आदरभाव को महत्व नहीं देती। युवा पीढ़ी अपना अच्छा–बुरा स्वयं तप करने लगी है, जड़ नियमों का इन्होंने खुलकर विरोध किया है। मनोज कुमार पाण्डेय की कहानी ' चन्दू भाई नाटक करते हैं' में चन्दू कतहा है – 'मेरे नाटक करने खानदान की नाक कटती है और जब लोगों को आलतू–फालतू परेशान करते हो तब? जब घूस से जेब भरते तो तब? जब थाने में पिछले साल एक लड़की की इज्जत लूटी गई थी तब तो आप की नाक और भी लम्बी हो गई थी न।''19

वर्तमान संक्रमित व्यवस्था ने पारिवारिक संवेदनाओं को सोख लिया है। वर्तमान युवा पीढ़ी स्वार्थी, व्यक्तिवादिता पूर्ण मानसिकता से ग्रस्त है। उमा शंकर चौधरी की कहानी 'अयोध्या बाबू सनक गए है' में अयोध्या बाबू से उनका पुत्र विभ्यांशु कहता है – 'आज 31 अक्तूबर है और माँ की सेवानिवृत्ति 30 मार्च को है, अगर 20 मार्च के बाद उनका निधन होता है तो हमारे हाि मात्र उनकी पेंशन आएगी लेकिन यदि इससे पहले उनका निधन होता है तब एक मेरी नौकरी. .... हमें व्यवहारिक स्तर पर आकर चोना होगा। आखिर क्यों हम अपना हाथ में आया अवसर गवाएं।''[18] वास्तव में भौतिकता के इस युग में परिवार टूटने से बचाने के लिए हमें नए नैतिक मूल्यों को पहचानते हुए भौतिकता एवं रिश्ते में तालमेल बैठाने की आवश्यकता है।

आधुनिकता की चकाचौंध ने ईश्वरी सत्ता से भी युवाओं को दूर कर दिया है। परमपिता परमेश्वर के प्रति समर्पण, त्याग की निश्चल भावना रखने की आस्तिकता कहा जाता है। प्राचीन काल से ही विभिन्न धर्म, पुराणों, ग्रन्थों में ईश्वर की सत्ता एवं महिमा को स्वीकार किया गया हैं अमिताभ विरचित 'दुख के पुल से' कहानी संग्रह की कहानी 'बाड़ के उस ओर की हरियाली' में धार्मिक मूल्यों में आई गिरावट के फलस्वरूप प्रस्फरित आक्रोश को व्यक्त करते हुए कहता है – 'विज्ञान का युग है यह। ईश्वर–वीश्वर कुछ नहीं होता। धर्म जनता की अफीम है। मन्दिर–मस्जिद एजेन्सिया है। पाखण्ड और मुल्ला पण्डित उसके एजेन्ट।''[19] अमिताभ की अन्य कहानी 'भटकी हुई आवाज' में भी भगवान के प्रति अनास्थावादी प्रवृत्ति को आलोक शर्मा के शब्दों में व्यक्त किया है – डू टू श्योर सर? मीराबाई किसी मूर्ति से प्रेम करती ? कोई पत्थरों से क्या प्रेम करेगा सर? जरूर गिरधर गोपाल कोई हाडमांस का जीवन होगा। पत्थर से प्रेम करने पर घर वाले क्यों नाराज होंगे, समाज क्यों टोकेगा?''[20]

यदि आधुनिक या पुरानी पीढ़ी का कोई नास्तिक व्यक्ति

Created by Universal Document Converter

ईश्वरीय सत्ता को नकारता है तो किसी भी विपक्ष के समय वह ईश्वरीय सत्ता की ओर अग्रसर होता है।

विज्ञापनों का संस्कृति पर प्रभाव : भूमण्डलोकरण का लाभ उठाकर अवसरवाद, आस्तावाद, विलोसोन्मादवाद और भुक्खडता को बढ़ावा दे रही है। भूमण्डलीयकरण ने भारत में उन्मुक्त जीवन शैली को बढ़ावा दिया है। भारतीय लोगों का सामाजिक जीवन मर्यादाओं और नैतिकता के बन्धन से नियन्त्रित रहता था पर आजकल सभी लोग स्वच्छन्द एवं उनमुक्त जीवन जीने के इच्छुक है। जिम्मेवारियों से विमुखता, अवैध सम्बन्धों को बढ़ावा तथा एश्वर्यपूर्ण जीवन जीने की इच्छा सब पाश्चात्य सभ्यता की देन है। बिना विवाह किए साथ (लिव इन रिलेशनशीप) पाश्चात्य सभ्यता का भारतीय सभ्यता पर पड़ने वाला दुष्प्रभाव है।

निष्कर्ष : उपर्युक्त विवेचन के आलोक में हम निष्कर्षतः कह सकते है कि आधुनिक समाज में भारतीय सांस्कृतिक मूल्य का पाश्चात्य सभ्यता एवं संस्कृति के प्रभाव स्वरूप निरन्तर कुण्ठाराघात हो रहा है। संस्कृतिक विरासत के रूप में धर्म, तीज–त्यौहार, नैतिकता का कर्त्तव्य भी असुरक्षित एवं धुंधला दिखाई पड़ रहा है। समाज में पनपती फहड़ता एवं अर्धनग्नता, पर संस्कृति अथवा पाश्चात्य संस्कृति में मोह में निज संस्कृति की मूल्य विघटनशीलता, जीवन में बढ़ते जंकफूड के प्रयोगों ने रहन–सहन, वेशभूषा, खान–पान आदि सभा का प्रभावित किया है।

संदर्भ :–

1. डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल, साहित्य और संस्कृति, विश्वविद्यालय प्रकाशन, प्र.सं. 1971, पृ. 3
2. रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, राजपाल एण्ड संस, 1968 पृ. 653
3. डॉ. देवराज, संस्कृति का दार्शनिक विवेचन पृ. 208
4. धीरेन्द्र वर्मा, हिन्दी साहित्य कोश, ज्ञानमण्डल लिमिटेड बनारस, सं. पृ. 690
5. ममता कालिया, दस प्रतिनिधि कहानियाँ, पृ. 43
6. पंखुरी सिन्हा, किस्सा पर कोहनूर (कहानी संकलन) पृ. 75
7. अरविन्द कुमार सिंह, उसका सच, पृ. 39
8. डॉ. मुक्ता, कथा यात्रा, पृ. 228
9. परितोष चक्रवर्ती, अंधेरा समुन्द्र, पृ. 116
10. मैत्रीय पुष्पा, दस प्रतिनिधि कहानियाँ पृ. 14
11. सीमा ओझा, सन्नाटा, बाहर का, आजकल पत्रिका, अक्तूबर 2010, पृ. 41
13. अविनाश महाजन, उषा प्रियवंदा की कहानियों में टूटते जीवन का यथार्थ चित्रण, पृ. 69
14. सं. सेतन दूबे, अनिल, इक्कीसवी सदी की इक्कीस कहानियां, पृ. 131
15. वही, पृ. 131
16. मैत्रीय पुष्पा, चिन्हार, पृ. 9
17. मनोज कुमार पाण्डेय, शहतूत, पृ. 23
18. उमा शंकर चौधरी, अयोध्या बाबू सनक गए है, पृ. 51
19. वेद प्रकाश अमिताभ, दुख के पुल से, पृ. 6
20. वही, पृ. 35

डॉ० प्रवीण कुमार वर्मा
सह प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म महाविद्यालय,
पलवल, (हरियाणा)
9910905120

Created by Universal Document Converter

चीन की "स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स" की रणनीति और भारत की सुरक्षा परिचय

डॉ० राजेन्द्र सिंह सिवाच, डॉ० सुगन्धा

सारांश : सन्तजू द्वारा लिखित पुस्तक 'The Art of War' में वर्णित युद्ध अवधारणाओं पर केन्द्रित चीन की रणनीतिक–संस्कृति एवं अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था के गतिमान प्रतिमानों को दृष्टिगत रखकर चीन द्वारा निर्धारित सामरिक व आर्थिक नीतियों के फलस्वरूप वह लगातार मजबूत व प्रभावी राष्ट्र का दर्जा प्राप्त करता जा रहा है।[1] उसकी निरंतर बढ़ रही क्षमता के लिए निम्नलिखित तत्त्व जिम्मेदार हैं–

1. शासन का स्थायित्व और उसका अस्तित्व
2. घरेलू स्थायित्व को सुरक्षित करने की आवश्यकता
3. प्रादेशिक अखंडता को सुरक्षित रखने का निर्णायक महत्त्व

उक्त तथ्यों के आलाके में चीनी समाज, साम्यवादी पार्टी व सेना ने संयुक्त रूप से निरंतर प्रयासों के द्वारा धीरे–धीरे अपने देश को 21वीं सदी में विश्व की महाशक्ति के रूप में स्थापित कर दिया है। वास्तव में, शीतयुद्ध काल में प्रभुत्व स्थापना हेतु अमेरिका व सोवियत संघ के मध्य सामरिक–आर्थिक प्रतिद्वंदिता के वैश्विक परिणामों को देखते हुए चीन ने भी यह अनुभव किया कि राष्ट्रीय शक्ति के निर्माण, प्रभुत्व विस्तार व आर्थिक हितों की सुरक्षा में समुद्रों की निर्णायक भूमिका है।[2] बीसवीं सदी के अंत और 21वीं सदी के भू–राजनैतिक बदलावों का ही परिणाम था चीन ने दूरस्थ समुद्रों तक अपनी शक्ति विस्तृत करके जहाँ एक ओर अपने आर्थिक हितों की सुरक्षा हेतु कदम उठाए, वहीं हिन्द महासागरीय क्षेत्र में स्थित विभिन्न राष्ट्रों में अपने नौसैनिक आधार बनाकर विश्व शक्ति संरचना में अपनी भूमिका को प्रभावशाली बनाने के किसी भी अवसर को हाथ से नहीं जाने दिया आर्थिक विकास के समानांतर सैन्य सामर्थ्य को अद्यतन करने हेतु चीनी नेतृत्व के प्रयास चीन की वैश्विक सामुद्रिक संचरण मार्गों की सुरक्षा के समानातंर अपने वैश्विक रणनीतिक हितों के सुरक्षार्थ अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों की स्थापना कर सके।[3] चीन के रक्षा चिंतकों ने 15वीं सदी के प्रमुख नाविक व अन्वेषक झेंग की शांतिप्रिय परंपराओं पर गंभीर मनन तो किया ही साथ ही 21वीं शताब्दी के नवीन शीतयुद्ध के परिदृश्य में चीनी ड्रैगन अमेरिका के साथ संभावित प्रतिद्वंदिता संबंधी राबर्ट काप्लान की विचारधारा की वास्तविकताओं को ध्यान में रखकर अपनी परंपराओं, सिद्धांतों, संगठन व प्रशिक्षण आदि तत्त्वों की पृष्ठभूमि में सामुद्रिक शक्ति के विकास को प्राथमिकता दी।[4]

12 जुलाई, 2017 को चीन ने अपना 'पहला मिलिट्रीय बेस' बनाने के लिए अपना एक युद्धपोत अफ्रीका के देश जिबूती के लिए रवाना किया था चीन के इस कदम से पता चलता है कि चीन भारत के पड़ोसी देशों में 'मिलिट्री बेस' बनाकर समुद्र के रास्ते भारत को घेरने की याजे ना बना रहा है। चीन के इन्हीं विभिन्न 'मिलिट्री बेसों को 'स्ट्रिंग आफॅ पर्ल्स प्रोजेक्ट' का नाम दिया गया है।

स्ट्रिंग ऑफ पर्ल्स क्या है?

'स्ट्रिंग आफॅ पर्ल्स' की बात का जिक्र 2005 में पेंटागन ने 'एशिया में ऊर्जा का भविष्य' नाम की एक खुफिया रिपोर्ट में किया थोंपेंटागन की इस रिपार्टे में चीन द्वारा समुद्र में तैयार किए जा रहे 'स्ट्रिंग आफॅ पर्ल्स' का विस्तृत विवरण दिया गया था ये समुद्र में पाए जाने वाले मोती नहीं बल्कि दक्षिण चीन सागर से लेकर मलक्का संधि, बंगाल की खाड़ी और अरब की खाड़ी तक (यानि पूरे हिंद महासागर में) सामरिक ठिकाने (बंदरगाह, हवाई पट्टी, निगरानी तंत्र इत्यादि) तैयार करना था हांलाकि रिपोर्ट में कहा गया था कि चीन ये ठिकाने अपने ऊर्जा–स्रोत और तेल से भरे जहाजों के समुद्र में आवागमन की सुरक्षा के लिए तैयार कर रहा है, लेकिन पूरी सच्चाई यह है कि जरूरत पड़ने पर इन सामरिक–ठिकानों को सैन्य जरूरतों के लिए भी इस्तेमाल कर सकता है।[5]

इन खाड़ियों के अलावा 'स्ट्रिंग आफॅ पर्ल्स' प्रोजेक्ट के अंतर्गत पाकिस्तान में ग्वादर और कराची बंदरगाह में मिलिट्री बेस, श्री लंका में कोलंबो और नए पोर्ट हम्बनटोटा में सैन्य सुविधाओं के साथ–साथ बांग्लादेश के चटगांव में कंटेनर सुविधा बेस और म्यांमार में यांगून बंदरगाह पर सैन्य अड्डे की स्थापना को भी गिना जाता है।

आइये अब प्रोजेक्ट के मोतियों को एक–एक कर जानते हैं–

1. पाकिस्तान–चीन ने पाकिस्तान के ग्वादर बंदरगाह पर चीन–पाकिस्तान आर्थिक कॉरिडोर (CPEC) समझौते के अंतर्गत एक सैन्य अड्डा बनाया है। इस अड्डे के माध्यम से चीन भारत को पश्चिमी मोर्चे पर घेरने की कोशिश कर रहा है।[6]
2. श्रीलंका–चीन ने श्रीलंका के इम्बनटोटा बंदरगाह से हिंद महासागर में अपनी नौसैनिक गतिविधियों के संचालन की योजना बनाई है। उल्लेखनीय है कि हम्बनटोटा बंदरगाह को विकसित करने के लिए श्रीलंका ने सबसे पहले भारत से ही आग्रह किया था, लेकिन इससे पहले कि भारत तैयार होता, चीन ने श्रीलंका को जरूरी मदद करने की पेशकश कर डाली और अपनी चाल में कामयाब भी हो गया इस बंदरगाह पर हाल ही में चीन की पनडुब्बियों को देखा गया है। साफ है कि भले ही चीन ये कहा कि वो दूसरे देशों में बंदरगाह पूरी तरह से व्यापारिक दृष्टिकोण से तैयार कर रहा है, लेकिन श्रीलंका में उसकी पनडुब्बियों की मौजूदगी ने साफ कर दिया है कि व्यापारिक–बंदरगाहों को जरूरत पड़ने पर सैन्य–बंदरगाहों में भी बदला जा सकता है।
3. बांग्लादेश–चीन ने भारत के एक दूसरे पड़ोसी देश बांग्लादेश के चटगांव बंदरगाह पर अपने लिए एक कंटेनर–पोर्ट तैयार किया है। हाल ही में बांग्लादेश ने अपनी सुरक्षा के लिए चीन से दो पनडुब्बियों खरीदने की घोषणा की है। साथ ही चीन बांग्लादेश से राजनयिक

Created by Universal Document Converter

संबंध मजबूत करने की लगातार कोशिश कर रहा है और उसको हर तरह की वित्तीय मदद दे रहा है।

4. म्यांमार–चीन, भारत के खिलाफ युद्ध छेड़ने के लिए और भारत के पड़ोसी देशों की जमीन भारत के खिलाफ इस्तेमाल करने के लिए म्यांमार के साथ सैन्य और आर्थिक संबंधों में वृद्धि कर रहा है। चीन म्यांमार के एक बंदरगाह यांगून पर भी सैन्य अड्डा बना रहा है।

5. जिबूती–चीन ने अफ्रीकी देश जिबूती में अपना पहला विदेशी नौसैनिक अड्डा स्थापित करने के लिए अपना युद्धपाते जुलाई, 2017 में भेजा है। केवल 8 लाख की जनसंख्या वाला जिबूती भारत के दाहिने हाथ पर अरब सागर के किनारे स्थित है। इस जगह पर नौसैनिक अड्डा बनाने के बाद चीन की स्थिति अरब सागर में भी मजबूत हो जाएगी।

हालाँकि चीन की निर्माण गतिविधियाँ इस जगह पर फरवरी, 2016 से ही चल रही है। चीन अपने नौसैनिक अड्डे हिन्द महासागर में स्थित मालदीव और शेसेल्स में भी स्थापित कर रहा है। फ्रांस, अमेरिका और जापान जैसे देशों ने पहले से ही अपने नौसैनिक अड्डे जिबूती में बना रखे हैं। जिबूती के लेमनियर (अफ्रीका में संयुक्त राज्य अमेरिका का एकमात्र स्थायी बेस) में अमेरिका का नौसैनिक अड्डा चीन के नए अड्डे से कछु किलोमीटर दूर है। ज्ञातव्य है कि चीन, जिबूती बेस के लिए किराए के रूप में 20 मिलियन डॉलर प्रतिवर्ष का भुगतान कर रहा है। सारांश के रूप में यह कहा जा सकता है कि चीन पूरे दक्षिण एशिया में अपना वर्चस्व कायम करना चाहता है और इस वर्चस्व को यदि कोई चुनौती दे सकता है तो वह भारत ही है। यही कारण है कि चीन भारत को चारों ओर से घरे ने के लिए 'स्ट्रिंग आफॅ पर्ल्स' प्रोजेक्ट का सहारा ले रहा है। अब यह आने वाला वक्त ही बताएगा कि चीन अपने मंसूबों में कितना कामयाब होता है।[7]

उभरते समीकरण–एशिया में ही नहीं, बल्कि विश्व में भारत और चीन को 21वीं सदी की उभरती हुई वैश्विक आर्थिक एवं सामरिक शक्ति के रूप में देखा जा रहा है। वस्तुतः चीन इस सच्चाई से वाकिफ है कि एशिया में उसकी ताकत का मुकाबला करने की शक्ति केवल भारत में ही है। इसलिए वह पाकिस्तान के मजबूत सामरिक एवं नाभिकीय गठजोड़ के साथ भारत के पड़ोसी देशों एवं हिन्द महासागर में अपना प्रभाव बढ़ा रहा है जो नये किस्म के भू–राजनीतिक और भू–सामरिक समीकरणों को पैदा कर रहा है। वस्तुतः चीन की ताकत उसकी अर्थव्यवस्था है जिसे गति देने वाली ऊर्जा आपूर्ति का मार्ग हिन्द महासागर से होकर गुजरता है और यह क्षेत्र स्वाभाविक रूप से भारतीय नौसेना का प्रभाव क्षेत्र माना जाता है।

यही वजह है कि चीन अपने ऊर्जा आपूर्ति मार्ग की सुरक्षा सुनिश्चित करने के बहाने हिन्द महासागर के तटवर्ती देशों में अपना प्रभाव बढ़ाने का स्त्रातेजिक प्रयास कर रहा है और अपनी मोतियों की माला (String of Pearls) के तहत भारत को चारों ओर से घरे ने की रणनीति को अंजाम दे रहा है। पाकिस्तान और म्यांमार चीन के दो महत्त्वपूर्ण ठिकाने हैं। पाकिस्तान के बलूचिस्तान प्रांत में अरब सागर के तट पर स्थित ग्वादर बंदरगाह के विकास में चीन ने आर्थिक और तकनीकी भागीदारी की है। चीन ग्वादर को सड़क, रेल एवं पाइपलाइन के माध्यम से अपने पश्चिमी प्रांत शिनजियांग से जोड़कर ऊर्जा आपूर्ति का वैकल्पिक मार्ग तैयार कर रहा है ताकि युद्ध के समय यदि भारत हिन्द महासागर में उसका मार्ग बाधित करता है तो भी ग्वादर के माध्यम से ऊर्जा आपूर्ति होती रहे। वस्तुतः भारत को चिंता ग्वादर की भू–सामरिकी अवस्थिति है। यह बंदरगाह हार्मुज से 400 किलोमीटर की दूरी पर है जो वैश्विक तेल आपूर्ति का महत्त्वपूर्ण चैनल है। भारत का 70 प्रतिशत आयातित तेल समुद्र के रास्ते हार्मुज जलडमरूमध्य से होकर गुजर कर आता है। फलतः ग्वादर में चीन की उपस्थिति भारतीय तेल टैंकरों के साथ नौसेना के लिए भी खतरे का कारण बन सकती है।

वस्तुतः भविष्य में अपने जहाजों की सुरक्षा देने के बहाने चीन अपने परंपरागत मित्र पाकिस्तान में मिसाइल एवं पनडुब्बियाँ तैनात कर सकता है।[8]

म्यांमार के संदर्भ में चीन का हित–चीन म्यांमार को हिंद महासागर में प्रवेश द्वार के रूप में देखता है। वहाँ की सैन्य सरकार को भारी मात्रा में आर्थिक मदद और हथियारों की आपूर्ति करके अपनी पैठ बनायी है। यह सैन्य तंत्र जुन्टा के सहयोग का ही परिणाम है कि चीनी कंपनियाँ म्यांमार के तेल एवं गैस भण्डारों के दाहे न में आगे है। म्यांमार में बड़े पैमाने पर बंदरगाहों, हवाई अड्डों के पुनरूद्धार, रेल, सड़क एवं गैस पाइपलाइन परियाजे ना में चीनी कंपनियों का दबदबा है। म्यांमार के मामले में चीनी कंपनियों के दोहरे स्वार्थ है। एक तो अपने येनान प्रांत को सड़क, रेल एवं इरावदी नदी के जरिए म्यांमार से जोड़कर सस्ते चीनी समान को नया बाजार उपलब्ध कराना तथा दूसरा ड्रैगन की पहुँच सीधे हिन्द महासागर तक पहुँचानोंम्यांमार में चीन के आर्थिक, सामरिक हस्तक्षपे भारत के लिए चिंता का विषय है।

वस्तुतः सितवे आरै ग्रेट कोको आइलैण्ड में चीन की गुप्त सैन्य तकनीकी भागीदारी है जो भारतीय सुरक्षा हेतु गंभीर चुनौती पैदा करती है, क्योंकि अण्डेमान एवं निकोबार द्वीप समूह से कोको द्वीप की दूरी महज 50 किलोमीटर है। पोर्ट ब्लेयर में भारत के त्रिस्तरीय थल, जल, नभ सैन्य ठिकाने तथा चाँदीपुर स्थित मिसाइल परीक्षण रेंज की गतिविधियों पर आसानी से नजर रखी जा सकती है। म्यांमार भारत का पड़ोसी ही नहीं, बल्कि दक्षिण पूर्वी एशिया का प्रवेश द्वार भी है। इसलिए चीन के साथ उसका सामरिक गठजाडे हिन्द महासागर में शक्ति समीकरण को उथल–पुथल करने में सक्षम है। चीन की रणनीति केवल पाकिस्तान और म्यांमार तक सिमट जाने तक ही नहीं है, बल्कि हिन्द महासागर के तटवर्ती देशों श्रीलंका, मालद्वीव, बाग्लादेश में भी अपनी जड़े फैला रहा है। इन देशों को सैन्य व आर्थिक मदद के अलावा बुनियादी ढाँचे के विकास में भारी निवेश उसकी दूरगामी नीति का हिस्सा है। दरअसल श्रीलंका के हम्बनटोटा बंदरगाह तथा बांग्लादेश के चटगाँव तथा म्यांमार के मराओ में चीन

Created by Universal Document Converter

की दिलचस्पी महज व्यावसायिक उद्देश्यों तक सीमित नहीं है। श्रीलंका के हम्बनटोटा बंदरगाह के विकास में चीन ने भारी निवेश किया है। (पहले यहाँ विकास की मांग भारत से की गयी थी) साथ ही श्रीलंका के तमिल टाइगर्स का सफाया करने में आर्थिक एवं सैन्य सहायता उपलब्ध करायी। आज श्रीलंका कम्यूनिस्ट चीन के इशारों पर नाच रहा है और इसके बदले में वह भारी मात्रा में चीनी निवेश, सस्ता ऋण और सैन्य साजो सामान प्राप्त कर रहा है। श्रीलंका को सहायता देने में चीन ने जापान को पीछे छोड़ दिया है। भारत की चिंता हम्बनटोटा जैसे संवेदनशील क्षेत्रों पर चीन की उपस्थिति है। दरअसल श्रीलंका के दक्षिण छोर पर स्थित हम्बनटोटा हिन्द महासागर के महत्त्वपूर्ण क्षेत्र से गुजरने वाले महत्त्वपूर्ण सामुद्रिक मार्ग से महज 6 नॉटिकल मील की दूरी पर है। वर्तमान में भारत–चीन सीमा पर तनाव एवं भारत की सुरक्षा वर्तमान में दोनों राष्ट्रों के मध्य सीमा पर बहुत अधिक तनाव देखने को मिल रहा है।

निष्कर्ष : सन् 2017 में भारत–चीन के बीच डोकलाम विवाद काफी बढ़ गया था सन् 2020 में लद्दाख में भारत और चीन के बीच गलवान घाटी में तनाव संघर्ष में तब्दील हो गया चीन के सैनिकों के साथ संघर्ष में 20 भारतीय सैनिक शहीद हो गए और चीन के 43 सैनिक मारे गए। इसके पश्चात् चीन ने गलवा घाटी पर अपना दावा प्रस्तुत कर इस विवाद को और अधिक बढ़ा दिया हालाँकि दोनों राष्ट्र के बीच मेजर जनरल स्तर की बातचीन जारी है।[9]

संदर्भ

1. V.P. Malik & Jorg Schultz (ed.), the Rise of China: Perspectives from Asia and Europes, Pentagon press, 2008, p. 38.
2. Ibid, p. 156.
3. StrategicAnalysis Vol. 29(2),April-June, 2005, p. 295.
4. Rober D. Kaplan, 'How we would fight China-TheAtlantic monthly, June. 2005.
5. राजेन्द्र सिवाच, सतीश कुमार, हिन्द महासागर एवं भारत की सामुद्रिक सुरक्षा, पेज 206
6. Satish kumar, National Security, p. 8
7. Ibid, p. 156.
8. राजेन्द्र सिवाच, सतीश कुमार, हिन्द महासागर एवं भारत की सामुद्रिक सुरक्षा, पेज 206 9.। NI, 21 June, 2020

Dr. Sugandha
"SSN jain, Subodh college,
Jaipur (Raj.)

Prof. Rajender Singh Siwach
"Deptt. Of DSS,
MDU, Rohtak

Created by Universal Document Converter

आधुनिकता बोध : एककण्ठ विषपायी–प्रबन्धकाव्य के संदर्भ में

25

डॉ० प्रवीण कुमार वर्मा

सारांश : छायावादोन्तर काल में नई कविता का उद्भव हुआ और इसी साथ नाट्यकाव्य का भी। नई विधाओं में नाट्यकाव्य का अपना विशेष महत्व है। नाट्यकाव्यों की स्वातन्त्रयोन्तर युग में एक श्रृंखला सी बन गई है। इसी श्रृंखला अनेक नाट्यकृतियां सामने आती है – अंधायुग, क्षम की रात, अग्निलिक, महाप्रस्थान, एककंठ, विषपायी इन रचनाओं में 'अंधायुग' एवं 'एककंठ विषपायी' को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

इन प्रबन्धकाव्यों में कथानक को अध्यात्मक रूप में रखते हुए रंगमंचीय तत्वों का विशेष ध्यान रखा जाता है। इन कृतियों में नाट्कीयता एवं काव्यात्मका का अपूर्ण सा मिश्रण मिलता है।

आधुनिकता सत्त गतिशील भाव बोद्ध है। परिवर्तन बोध की वह स्थिति है जिसका उद्भव एवं विकास यांत्रिक एवं वैज्ञानिक विकास क्रम के वर्तमान बिन्दू पर आकर हुआ है। पुरातन का त्याग था पुरातन में संशोधन या जीवन मूल्यों में पुर्नमूल्यांकन की पद्धति से नए–नए रूपों के विकास तथा नवीनता के प्रति आकर्षण आधुनिकता के सहज अंग है। इन स्वातन्त्रयोत्तर प्रबन्ध काव्यों में आधुनिकता बोध का विस्फोट स्पष्ट दृष्टिगत होता है।

प्रस्तुत रचना में युद्ध के विनाशकारी परिणामों की पृष्ठभूमि पर ही नवनिर्माण का शीलान्यास किया गया है। समसामयिक जीवन की इन्हीं विस्मयताओं और जटिलताओं के प्रति विकसित बौद्धिक दृष्टि ही आधुनिक संवेदना और आधुनिक युगबोध की आधार भूमि है। समस्या की निरन्तरता से परिपूर्ण समसामयिक यथार्थ ने नए कवि को इतना जकड़ लिया है कि वह उससे हटकर अन्य कुछ ऐसा सोच नहीं सकता। वर्तमान अर्थव्यवस्था और अर्थ केन्द्रित सामाजिक गठन में संघर्ष और उससे उत्पन्न गलानी, विक्षोभ, असंतोष, ईर्ष्या और विवाद का ना होना अवश्यम्भावी है। यही इस व्यवस्था की नीति है। इसी के लिए आज का मानव अभिक्षप्त है – 'ऐसी सभ्यता में जो आधुनिक भावबोद्ध, वह है अनाशा और दुखभावना का, गलानी और विरक्ति का अगति का।''[1] आधुनिक भाव बोद्ध ही आधुनिकता का आधार है वैज्ञानिक वस्तुन्मुखी दृष्टि को जीवन, साहित्य और कला पर लागू करने से जो परिणाम निकलते हैं वे ही आधुनिक युग बोध ा और आधुनिकता के नियामक तत्व है। आधुनिकता अतीत से सम्बन्ध ा, वर्तमान से प्रतिबद्ध और भविष्य के प्रति उन्मुख होती है। रामस्वरूप चतुर्वेदी के अनुसार – 'नवीन परिस्थितियों के संदर्भ में अपने आपका संस्कार करना ही आधुनिकता है।'[2]

एककंठ विषपायी नाट्क काव्य की उद्देश्यात्मक व्यंजनाएं कई रूपों, स्तरों पर उदघाटित होती है। यह परम्परा एवं आधुनिकता के संघर्ष कथानक है। यह अनास्था एवं आस्था के द्वंद्वों की कथा है। इसमें प्रजातंत्र के नाम पर शासन पद्धति में शासक और शासित के अन्तराल को चित्रित किया गया है। इसमें कल्याण राज्य द्वारा युद्ध के समय संजस्त प्रजा की रक्षा में दर्शाकर शासकों की कायरता को भारतीय संदर्भ में चीनी आक्रमणों से जोड़ा गया है। किसी भी रचना का महत्व समसामयिक होने के साथ–साथ तभी शास्वत हो सकता है। यदि उसमें चित्रित समस्या यथा सम्भव उदात्र, सार्वकालिक, सार्वभौमिक हो। समस्या का ऐसा रूप तभी प्रदान किया जा सकता है। यदि उसे इतिहास एवं संस्कृति के आलोक में समाधान की दृष्टि से देखा जाए। संस्कृति एवं परम्परा में प्रयोग किसी भी आधुनिकता को भविष्यगामी बनाता है। जिसमें कवि, नाटकार दुष्यन्त कुमार ने परम्परा और आधुनिकता के संदर्भ को सनातन समाधान की दृष्टि से प्रस्तुत किया है।

'एककंठ विषपायी' की कथावस्तु का आधार पौराणिक है। यह नाट्यकाव्य विविध पुराणों में उपलब्ध 'दक्ष यक्ष विध्वंश' के प्रसंग पर आधारित है। पुराणों में उपलब्ध 'दस कथा' का विकास उपर निर्दष्टि ऋग्वेद प्रसुंग से हुआ है। 'यह कथा महाभारत के अतिरिक्त भागवत पुराण, विष्णु पुराण, दूर्म पुराण, स्कन्धपुराण, ब्रज पुराण, हरिवंश पुराण, शिव पुराण आदि अनेक ग्रंथों में मिलती है। दक्षा प्रजापति का जन्म स्वायंमुव मन्तन्तर में ब्रह्माजी के दक्षिण अंगूठे ब्रह्म जी के बाये अंगूठे से उनकी पत्नी उत्पन्न हुई थी।''[3] 'स्वांयभुव मनु की कला प्रसूति भी इनकी पत्नी थी, जिसमें दक्ष की सोलह कन्याएं हुई। दक्ष ने सोलह कन्याओं में से तेरह कन्याएं भार्या रूप में दी। स्वाह नाम कन्या अग्नि को, स्वधा अग्निध्वातो को तथा सती नामक सोलहवी कन्या शंका को दी गई।''[4]

एक कण्ठ विषपायी नाटक काव्य का कथानक पौराणिक आधार पर दक्ष के यज्ञ आयोजन तथा शंकर द्वारा उसके विध्वंश की पीठिका पर खड़ा है। सती एवं शिव प्रेम विवाह कर लेते हैं जिसे दक्ष स्वीकार नहीं करते। वे प्रतिशोध की भावना वशीभूत होकर यज्ञ का आयोजन करते हैं जिसमें शिव को अपमानित करने के लिए उसे आमन्त्रित नहीं करते। तुमको बतलाए देता हूँ – 'सारे भद्रलोक से उसे बहिष्कृत करके छोडूंगा मैं उन दोनों ने केवल मेरी बाह्य प्रतिष्ठा खण्डित की है। उनकी आत्म प्रतिष्ठ का भ्रम तोडूंगा मैं।'

अपने अपमान का बदला लेने के लिए शिव के सैनिक यज्ञ का विध्वंश कर डालते हैं। कवि ने इस पौराणिकता में आधुनिक तथा उद्देश्य की दृष्टि से अपनी कल्पना के आधार पर अनेकों परिवर्तन भी कर दिये हैं। देव लोक पर आक्रमण सर्वहित के रूप में जनसामान्य की अनास्था का चित्रण सभी की लाश से शंकर के चिपके रहने में मृत परम्परा से लगाव तथा उन लोगों की ओर संकेत जो पुरानी समस्याओं एवं रूढ़ियों का सिंचन एवं पोषण करते रहते हैं। सती के भाव से शिव का लगाव इस तथ्य को दर्शाता है कि वर्तमान में भी अनेकों व्यक्ति परम्परा रूपी लाश को समेटे हुए हैं तथा वे नए तथ्यों का साक्षात्कार करने में संकोच करते हैं। ब्रह्मा का इंद्र की सेनाओं को युद्ध के लिए आदेश न देने में प्रजातंत्र की कमजोरी तथा अन्त में विष्णु द्वारा प्रणाम बाण छोड़कर शंकर युद्ध विमुक्त करने का प्रयास आदि सभी घटनाएं कल्पनापूर्ण लेकिन सौद्देश्यपूर्ण है।

उक्त नाट्यकाव्य में दक्ष का परम्परा पोषक रूप सती और शंकर के विवाह संदर्भ में दिखाई पड़ता है। सती और शंकर दोनों प्रेम

Created by Universal Document Converter

विवाह करते हैं और पारस्पारिक दृष्टिकोण से दक्ष उसे मानहानि समझता है। आधुनिक युग में यदि कोई युवा एवं युवती प्रेम विवाह कर लेते हैं तो उनके परम्परा निर्वाह करने वाले परिवार निश्चित ही इसकी प्रतिक्रिया होती है एवं परिवार उनसे अपने सम्बन्धों का विच्छेद कर लेता है। विवाहसम्बन्धी परम्परा के पालन और स्वतः विवाह की नव्यता के विरोध में यह विध्वंश उत्पन्न होता है।

प्रस्तुत रचना में युद्ध के विनाशकारी परिणामों की पृष्ठभूमि पर ही नवनिर्माण का शिलान्यास किया गया है। समसामयिक जीवन की इन्हीं विषमयताओं और जटिलताओं के प्रतिविकसित बौद्धिक दृष्टि ही आधुनिक संवेदना और आधुनिक युग बोध की आधार भूमि हैं। समस्याओं की निरन्तरता से परिपूर्ण समसामयिक यथार्थ में नए गति में जकड़ लिया है। कि वह उससे हटकर अन्य कुछ सोच नहीं सकता। वर्तमान अर्थव्यवस्था और अथ केन्द्रित .....संघर्ष और उससे उत्पन्न गलानी, विक्षोभ, असंतोष ईर्ष्या और विवाद का होना अवहयस्भावी है। यही इस व्यवस्था की नीयति है। इसी के लिए आज मानव अभिशक्त है – 'ऐसी सभ्यता में जो आधुनिका भावबोध है वह अनाया ओर दुख भावना का , गलानि और विरक्त का अगति का।5 आधुनिक भाव बोध ा ही आधुनिकाता का आधार है। वैज्ञानिक वस्तुन्मुखी दृष्टि को जीवन साहित्य और कला पर लागू करने से जो परिणाम निकलते हैं वे ही आध ुनिक भाव बोध और आधुनिकता के नियामक तत्व है। आधुनिक अतीत से सम्बन्ध वर्तमान से प्रतिबद्ध और भविष्य के प्रति उन्मुख होती है। रामस्वरूप चतुर्वेदी के अनुसार – 'नवीन परिस्थितियों के संदर्भ में अपने आपका संस्कार करना ही आधुनिकता है।'[6]

परम्परा और अनास्था का उग्रतम रूप शंकर में दिखाई पड़ता है। वह सती की हत्या के पीछे भूलोक और देवलोक संयुक्त षड़यंत्र का होना मानता है। इसी लिए वह भूलोक को नष्ट कर देवलोक पर भी आक्रमण करता है। इस बीच विक्षप्ति बना वह सती के अधसुलझे दुर्गंध भरे शव को उठाए विचरण करता दिखाई पड़ता है। वरूण और कुबेर की प्रार्थना का उस विपरीत प्रभाव पड़ता हैं शंकर शर्त रखते हैं कि यदि संध्या तक सती की चेतना न लौटी तो वह प्रल्यकारी हो जायेगा। उसके गण देवलोक के उत्तरीभाग को नष्ट कर देते हैं। देवलोक के राष्ट्राध्यक्ष ब्रह्म अपनी सेनाओं को शंकर का सामना करने की अनुमति नहीं देते। यहां नाटककार ने चीनी आक्रमण के दौरान युद्ध की अनुमति न मिल पाने के कारण तत्कालीन भारतीय सेना की स्थिति को सांकेतिक किया है। लूट हुई प्रजा शासन को कोसती हुई। संगठित होती है। वह अधिकारियों को कायर कहती है और उनके आश्वासन के अधीन लूट जाने की दुहाई देते हुए शासन छोड़ने के लिए बाध्य करती है।

विष्णु यहां विवेक के प्रतीक के रूप में सामने आते हैं वे स्पष्ट कहते हैं कि मृत परम्परा से जुड़ी व्यक्ति या तो आस्थवादी हो जाता है। जैसे कि सर्वहत अाि हिंसक हो उठता है। जैसे कि शंकर वे बताते है कि युद्धोपरांत काल में संस्कृति के मूल्य विघटित हो जाते हैं और तब ऐसी विकृतियों जन्म हुआ ही करता है। इस स्थिति पर काबू पाने के लिए परम्परा के विष का पीया जाना आवश्यक है। इस विषपान में उठाई गई पीड़ा ही भावी सृजन की पृष्ठभूमि बनेगी। नाटककार ने यह स्थापित करने का प्रयास किया है कि शक्ति और सक्रियता के बिना देश की सुरक्षा का कार्य सम्भव नहीं है। यदि युद्ध चिंतन प्रस्तुत कर्त्तव्य कर्म के रूप में वहन किया जाये अर्थात् उसक उद्देश्य व्यापक राष्ट्रीय सुरक्षा और कल्याण हो तो वह भी उन विशिष्ट परिस्थितियों ण..... सत्य का रूप ग्रहण करता है। इन्द्र, वरूण आदि नेताओं की भर्त्सना इसलिए की गई हैं क्यों कि वे राजनीतिक सत्ता और प्रतिष्ठा अर्जित करने निहित स्वार्थ की पूर्ति के लिए युद्ध को उत्करण जनता को उसमें उलझाए रखना चाहते हैं। विष्णु को एक ऐसे चिंतक सशक्त और कर्मठ नेता के रूप में प्रतिष्ठ किया गया है। जो लोक मंगल की रचनात्मक प्रेरणा से अनुप्राणित होकर राष्ट्रीय समस्या का समाधान प्रस्तुत करता है। वे अनेक फलकों वाले बाण के द्वारा शिव के कंधे पर लदे सती के शव को खण्ड–खण्ड करके शिव मोहान्धता को भंग करते हैं, वही मोहान्धाता जीवन संदर्भो से जुड़ सार्थक और रचनाकार बन कर तीर्थो का रूप ग्रहण करती है। विष्णु का बाण शिव के चरणों में प्रणाम और चुनौती का वैकल्पिक अर्थ कहता है और शिव की प्रतिहिंसा प्रणाम में निहित श्रद्धाभावना से शांति और तृप्ति ग्रहण करती है और युद्ध टल जाता है कवि के उद्देश्य आभास होता है कि श्रद्धा और प्रेम से भी युद्ध टाला जा सकता है। किन्तु श्रद्धा और प्रेम दर्शाने वालों में युद्ध की चुनौती देने की शक्ति भी होनी चाहिए। बिना शक्ति कोरे सिद्धांत वाद और अहिंसा, प्रेम, शांति, मैत्री आदि का कोई अर्थ नहीं कवि ने विशिष्ट परिस्थितियों युद्ध को स्वीकार किया है। ब्रह्मा ने सर्वहत को अपने परिस्थिति संदर्भो से कहा हुआ और वर्तमान के लिए भार स्वरूप कहा है जो उचित ही है।

निष्कर्ष : उपर्युक्त विवेचन के आलोक में हम कह सकते हैं कि 'एककंठ विषपायी' आधुनिक चेतना का काव्य है। वर्तमान शासन प्रणाली की जनता के विमुख कार्यवाली व पारम्पारिक धर्मतंत्र की वैज्ञानिक दृष्टि का विरोध किस प्रकार आधुनिक मनुष्य के मन में अनास्था पैदा कर रहे हैं यदि हमने सत्य का स्वागत करना चाहते हैं तो हमें शंकर की भांति संक्रांति विष को पीना होगा। इस विष का पान पिये बिना नया युग, नई पीढ़ी एवं नए मूल्य अंकुरित नहीं हो सकते। रचना कार ने पौराणिकता में आधुनिकता का प्रयोग करते हुए एक विराट दर्शानिक सत्य को इस घटना के माध्यम से प्रस्तुत किया है।

संदर्भ :–

1. गजानन माधव मुक्ति, नई कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबन्ध पृ. 183
2. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिन्दी नव लेखन, पृ. 13
3. श्री हरिवंश पुराण हरिवंश पर्व, अ. श्लोक 52
4. श्री मदभागवत पुराण स्कन्ध अध्याय –1
5. गजानन माधव मुक्ति बोध नई कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबन्ध,पृ.183
6. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिन्दी नव लेखन, पृ. 13

डॉ० प्रवीण कुमार वर्मा

सह प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,

गोस्वामी गणेशदत्त सनातन धर्म महाविद्यालय, पलवल, हरियाणा

9910905120

Created by Universal Document Converter

Dr. Umender Malik

EFFECT OF THINK-PAIR-SHARE STRATEGY ON ACADEMIC ACHIEVEMENT IN ACCOUNTANCY STUDENTS AT SENIOR SECONDARY LEVEL

ABSTRACT

The present study is to know the effect of Think-Pair-Share strategy on academic achievement in Accountancy students at senior secondary level by using pre-test-post-test control group quasi experimental design. Three tools namely performance test of Intelligence by Ahuja (2012), SocioEconomic Status by Kalia and Sahu (2012) and Achievement test of Accountancy developed by the investigator were used for the collection of data. A random sample of 80 students of class 11th was taken for this study. The students of control group were taught by traditional method and experimental group were taught by Think-Pair-Share strategy. The findings of the study indicated that the students of the experimental group showed better performance in Accountancy as compared to the students of the control group.

Keywords- Think - Pair - Share strategy, Academic Achievement, Accountancy, Senior Secondary School Students

Introduction

The effect of cooperative learning on social science achievement (Kosar ,2003). In this experiment of two weeks, cooperative learning resulted in higher achievement as compared to routine method of teaching social science. Urban students had higher academic achievement than rural students (Nuthana ,2007). Think-Pair-Share strategy is first developed by Prof. Frank Lyman in 1981. Think-Pair-Share strategy helps to make the students more active in the teaching-learning process by discussing with their classmates. This is very innovative strategy in teaching learning process. The think-pair-share strategy is a strategy designed to provide students to think a given topic by enabling them to formulate individual ideas and share these ideas with another student. "The collaborative learning with Think-Pair-Share technique was found that this system aids the students in order to promote active learning in computer based learning environment" (Tint and Nyunt, 2015)." The Influence of Think-Pair-Share on Improving Students' Oral Communication Skills in EFL Classrooms" (Raba, 2017).

Objectives of the study

✦ To compare the Pre-test mean achievement scores of control and experimental group.

✦ To compare the Post-test mean achievement scores of control and experimental group.

✦ To compare the mean gain achievement scores of control and experimental group.

Hypotheses of the study

✦ There is no significant difference in the Pre-test achievement scores of control and experimental group.

✦ There is no significant difference in the Post-test achievement scores of control and experimental group.

✦ There is no significant difference in the mean gain achievement scores of control and experimental group.

Methods

In the design, pre-test post-test control group, quasi experimental design was employed. A random sample of 80 students studying 11th class was selected. Two groups i.e. the control group and the experimental group was formed after matching the intelligence and socio-economic status of students.

Tools

A. Standardised Tools

✦ Group Test of Intelligence by Ahuja (2012)

✦Socio-Economic Status Scale by Kalia and Sahu (2012)

B. Self developed Tools

✦ Achievement Test on Accountancy (developed and standardized by the investigator).

✦ Think-Pair-Share strategy package for class 11th students

Experimental Procedure

The experiment comprised of two main stages:(1) Selection of the sample (2)Conducting the experiment. 80 students were selected i.e. 40 for control group and 40 for experimental group. The experiment was conducted in three stages as given in Table-1

Table 1
Phases of the Study

Stages	Group	
	Experimental Group	**Control Group**
1.Pre-testing	Measurement of Student's 1. Intelligence 2. SES 3. Achievement in Accountancy	Measurement of Student's 1. Intelligence 2. SES 3. Achievement in Accountancy
2.Treatment	Teaching Accountancy through Think-Pair-Share strategy	Teaching Accountancy through Conventional method
3.Post-testing	Measurement of Student's Achievement in Accountancy	Measurement of Student's Achievement in Accountancy

Created by Universal Document Converter

Mean, Standard deviation, t-test were used to analyse the data.

Results : The pre and post-test scores of experimental group and control group were obtained through an Achievement test and were analyzed and described by using descriptive and inferential statistics.

The data were analyzed for the total Achievement scores for both the groups.

Table 2

't'-value for difference in the pre-test mean achievement scores of experimental group and control group

	Group	N	Mean	S.D.	S.EM	't' value	Level of significance
Pre-test	Control Group(A1)	40	20.18	4.28	0.68	0.869	Not Significant
	Experimental Group(A2)	40	21.02	4.36	0.69		

Table 2 reveals the t-value of 0.869 for the difference in pre-test mean achievement scores of experimental and control group before the experiment is not significant at 0.01 and 0.05 levels of significance. Figure-1, it is found that pre-test mean achievement scores of experimental group(21.02) and control group (20.18) does not differ significantly. Thus null hypothesis HO1i.e.

"There is no significant difference of the pre-test mean achievement scores of control and experimental group" is retained.

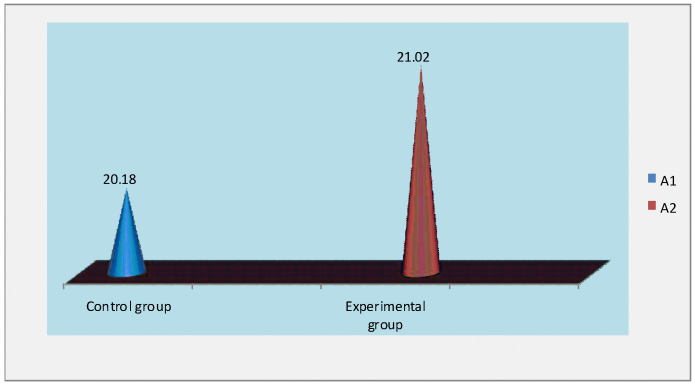

Fig. 1 Pre-test mean achievement scores of experimental group and control group

H02:There is no significant difference of the pre-test mean achievement scores of control and experimental group.

Table 3

t-value for difference in the post-test mean achievement scores of experimental and control group

	Group	N	Mean	S.D.	S.EM	't' value	Level of significance
Posttest	Control Group(A1)	40	33.80	3.60	0.57	5.790	Significant at 0.01 level
	Experimental Group(A2)	40	39.26	4.75	0.75		

Table 3 reveals the t-value of 5.790 for the difference in post-test mean achievement scores of experimental and control group is significant at 0.01 and 0.05 levels of significance. It shows that there is significant difference between the post-test mean achievement scores of experimental group and control group of 11th class students in accountancy. When results are compared in the context of the post-test mean achievement scores. Figure-2, it is found that post-test mean achievement scores in accountancy of Think-Pair-Share strategy package teaching group (39.26) is higher than traditional method teaching group (33.80).Thus null hypothesis H02 i.e."There is no significant difference of post-test mean achievement scores of control and experimental group" is rejected. The present result is in tune with the results of Bamiro (2015)who observed the effects of guided discovery and Think- Pair-Share strategies on secondary school students' achievement. It may therefore conclude that Think-Pair-Share strategy package helps in enhancing the achievement of the students in accountancy in comparison to the traditional teaching method.

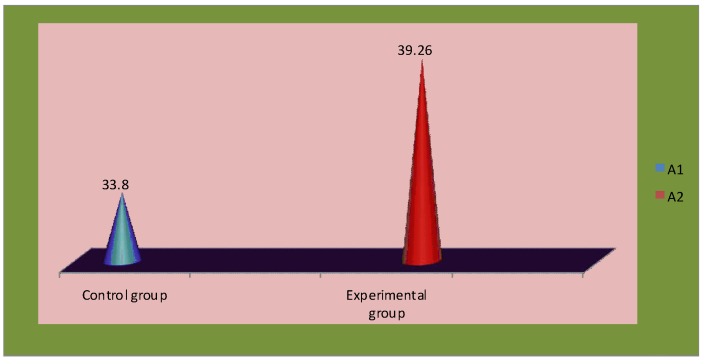

Fig. 2 Post-test mean achievement scores of experimental and control group

Created by Universal Document Converter

H03:There is no significant difference between the mean gain achievement scores of control and experimental group

Table 4

t- value for difference in the mean gain achievement scores of control group and experimental group

	Group	N	Mean	S.D.	S.EM	't' value	Level of significance
Mean gain	Control Group(A1)	40	12.62	5.66	0.89	4.25	Significant at 0.01 level
	Experimental Group(A2)	40	18.24	6.16	0.97		

Table 4 reveals the t-value of 4.22 for the difference in post-test mean gain achievement scores of experimental and control group is significant at 0.01 and 0.05 levels of significance. It shows that there is significant difference between the post-test mean gain achievement scores of experimental group and control group of 11th class students in accountancy. When results are compared in the context of the post-test mean gain achievement scores.Figure-3, it is found that post-test mean gain achievement scores in accountancy of Think-Pair-Share strategy package teaching group (18.24) is higher than traditional method teaching group (12.62).Thus null hypothesis H03 i.e. "There is no significant difference of post-test mean gain achievement scores of control and experimental group" is rejected. It may therefore conclude that Think-Pair-Share strategy package helps in enhancing the achievement of the students in accountancy in comparison to the traditional teaching method.

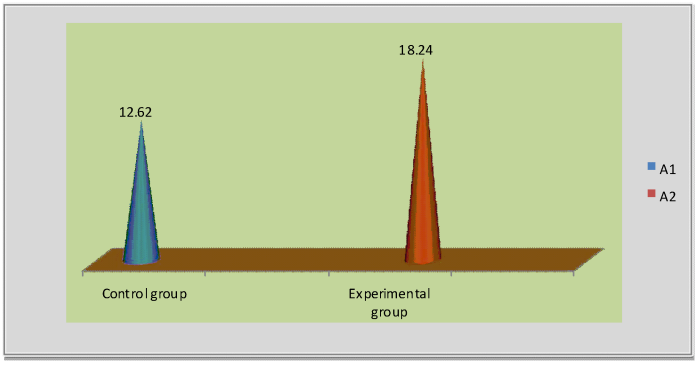

Fig.3 Mean gain achievement scores of control group and experimental group

Discussion of the Results : The findings of the study revealed that students of Experimental group and Control group did not differ significantly on their pre-test scores. A significantly difference was found between post-test scores of Experimental group and control group. Experimental group was found to have higher scores on achievement as compared to the students in Control group. Significant difference was found between Mean gain scores of the Control group and Experimental group. The Experimental group showed higher gain score as compared to their counter parts.

Conclusion

The present study has generated some interested findings concerning the benefits of using ThinkPair-Share strategy as compared to the traditional method of teaching. The results indicated that Think-Pair-Share strategy significantly improved student's performance in the achievement test.

There was significant difference in student's achievement when the students who were taught through Think-Pair-Share strategy were compared to those taught using traditional methods.

Think-Pair-Share strategy seemed to be very effective in enhancing student's conceptual understanding. The reason for this achievement was mostly attributed to the special features of Think-Pair-Share strategy. It can, therefore that Think-Pair-Share strategy is effective for teaching of Accountancy. The study provides potential inputs for teacher education. As Think-Pair-Share strategy is more effective than traditional approach teachers should use the Think-Pair-Share strategy based instructions for Accountancy subject so that students actively in learning rather than passively.

References

1. Ahuja (2012).Manual Group test of Intelligence Scale. National Psychological Corporation: Agra.
2. Bamiro,A,O. (2015). Effects of guided discovery and think-pair-share strategies on secondary school students' achievement in chemistry. SAGE Publishing, 1-7.
3. Kalia and Sahu (2012). Manual Socio Economic Status Scale. National Psychological Corporation: Agra.
4. Kosar, R. (2003). An experimental study on effects of cooperative learning on social studies achievement among 7th class students. Unpublished M.A. dissertation.PAF College of Education for women, Rawalpindi.
5. Nuthana P. C (2007).Gender Analysis of Academic Achievement among High School Students. Thesis Submitted in University of Agricultural Science, Dharwad.
6. Raba, A. A. A. (2017).The Influence of Think-Pair-Share (TPS) on Improving Students' Oral Communication Skills in EFL Classrooms. Scientific Research Publishing, 8, 12-23.
7. Tint, S.S. & Nyuut. E. E. (2015).Collaborative learning with Think-pair-share Technique.
8. Computer Applications: An International Journal (CAIJ),2(1), 1-11.

Dr umender malik

Assistant professor, Department of education,
Maharashi dayanand university, Rohtak

Created by Universal Document Converter

'The Thousand Faces of Night' and 'Fugitive Histories' by Githa Hariharan as an Echo of Social Justice

Dr. Mamta Singhal, AjayKumar Sharma

Abstract : Githa Hariharan, born in 1954, is one of those versatile writers whose novels have received appreciation by critics like Michael Ondaarje and J.M. Coetzee. Githa Hariharan is not only a novelist but also a philosopher, a scholar and a well known literary personality among the literary artists of Indian writing in English.

Githa Hariharan has written novels, short stories, essays, newspaper articles and columns. She has to her credits famous novels namely 'The Thousand Faces of Night', 1992,'The Ghosts of Vasu Master' 1994 'When Dreams Travel' 1999, 'In Times of Siege', 2003, 'Fugitive Histories', 2009 and 'I have Become the Tide',2019.

Hariharan's novel 'The Thousand Faces of Night', as the title suggests, describes about different aspects of female psychology. The characters of this novel denote different aspects of our modern society. The name of the characters are mythological such as Sita, Devi, Mayamma, Mahesh and Gopal etc. but they do not act according to their mythological names. Hariharan describes how women are exploited and suppressed in our traditional patriarchal society. The gruesome atrocities done by the mother-in-law on Mayamma denote the clash that entails hierarchical power, superstitions and the fanaticism to prove allegiance to patriarchal conventions. Lack of formal education and exposure to awaken the 'self' further increase, the mother-in-law's beliefs regarding the patriarchal norms. Her orthodox ideology can be noticed when she forbids any space to next generation women. Reducing Mayamma to a mere 'Body', she puts this child bride of twelve under all types of sufferings and torments her by smearing chilly paste on her barrenness. She says – "A woman without a child, say the sages, goes to hell"[1]

The traditional mindset of this woman is amply exposed in the sudden concern and mildening of attitude towards Mayamma when the latter is pregnant. It seems just like Kishori Devi in 'Difficult Daughters' whose ideas change towards Virmati when she is in family way. Without any remorse, Mayamma's mother-in-law puts ordeals on the poor bride and justifies her stand since the young bride is not able to provide male child to the family. Under the influence of traditional patriarchal system she ill treats her-daughter-in-law Mayamma and considers her inauspicious till the end of her life. One is astonished to notice the bitterness and hatred reaching it's culmination when Mayamma questions her lot after her child dies during her labour. Hearing this Mayamma's mother-in-law beats her like an animal and blames her that she has killed her grandson. She further blames Mayamma for her son's disappearance from home and considers the daughter-in-law's bad Karmas and stars responsible for it. According to her Mayamma is also responsible for the breakout of deadly diarrhoea which caused death of many people including her mother-in-law. She called Mayamma – "You ill starred slut, you have brought all this upon my house hold. Her last words, the blessings of a mother-in-law"[2].

According to Krishnan Das and Deepchand Patra –

"Female voices have wielded the writer's pen to present forth literature which not only highlights women's Plight in society, but have also enriched the field with brilliant narratives, styles, techniques and themes, enchanting generations of readings and immortalizing their own agenda in penning their works"[3]

Thus through the character of Mayamma, Hariharan has described about the mental agony and physical atrocities which are being faced by women in traditional patriarchal society. This narration impels readers to change their attitude towards females.

Devi's mother Sita is a passionate Veena player. It was for Sita the melody of life. She had "a vague, dreamy look"[4] in her eyes when she was married at the ripe age of twenty. Through her lessons of music, Sita acquires deep knowledge of real life and dedication becomes an essential part of her character. She not only proves herself a seasoned Veena player but also a proud wife and daughter-in-law. When on a minor incident her father-in-law bursts out, "Put the Veena away. Are you a wife, a daughter-in-law" disturbs her to the extent that without complaining, she reaches for the strings of the beloved Veena and pulls them out of the wooden base. She replies, "Yes, I am a wife, a daughter-in-law"[5]. She never touches her Veena again and becomes a daughter-in-law whom even the neighboures praise highly.

Premila Paul says –

"Sita's decision to discard the Veena is an act of both a vengeance and a denial. It is as much self denial as denial for the family. . . . . takes full advantage of them and surreptitiously exercises control and authority over the lives of others that she could live through them"[6]

Sita, is not like Mayamma who suffers in patriarchal society. But she moulds her talents and becomes a towering personality in her home after marriage. Thus, with the character of Sita, Hariharan tries to change traditional social setup which denies social rights to women due to gender discrimination.

Devi is modern woman of the present time. She takes education in best college of India. Her parents send her to America for higher education. Devi's upbringing under an authoritarian mother is articulated with regular visits to her grandmother who is a fabulous story teller. In the company of her grandmother Devi understands what is good and bad and

Created by Universal Document Converter

concludes about the matters since her childhood, she is not satisfied with the answers provided by others and her questions are unending. According to Usha Bande, "Questioning is an integral part of growth; but it is also the first step to resistance. Together they are seen as an insult to authority. . . . . .
. . . . pose threat to dominant ideology"[7].

All the efforts of Sita, mother of Devi to mould Devi into a disciplined and graceful woman fail when Devi experiences life and freedom with Dan, an African co-student in America. Devi feels an entirely different world in America, as far as the family relationships are concerned. She says-, "In New Jersey, I had wondered at the easy relationships my friends had with their mother. They chatted about boyfriends, they quarreled they kissed. . . . . and said casually, 'I love you, Mom!' I remember my deep embarrassment, as if I had seen an embrace between lovers"[8]. Devi remembers that the only time her mother touched her when she was laid half conscious in fever.

Devi marries Mahesh - a man of her mother's choice but at this time she recalls the story of love marriage about Damayanti and Nala, the king of Nishadas. Her grand mother told Devi that on the day of Swayambara the Sun was shining more brightly, it seemed that the sun was getting it's light from the beautiful face of Damayanti. There were many kings in the swayambara, they were dressed so elegantly that the eye did not know where to look. Damayanti came into hall in a royal manner with her maid servants and her face was shining like damsel, a secret glow of promise between her and king Nala around her face and she was having garland of sweet smelling flowers in her hands. When Devi tried to know about the secret, her grandmother answered, "Everything about a bride is a secret"[9] Damayanti was moving slowly in hall towards the row of her would be bridegrooms. The songs were sung in appreciation of king by their servants one by one but Damyanti listened with one ear since her heart was faithful for Nala, the king of Nishads –

"The honeyed words of Nala's courier – the wild swan who had won her heart for him, sang in her ear as she sought out her destiny"[10] .

Devi's 'Swayambara' is a ceremony of her would be grooms and their parents judging her. It is not a prince, as it was in the story of her grandmother, towards whom Devi takes steps but Mahesh, is a manager in a multinational company of detergents and tooth paste. There is no similarity in her marriage with Mahesh and the childhood stories of her grand mother.

Joseph Campbell describes about the importance of myths. "Read myths.They teach you that you can turn inward, and you begin to get the messages of the symbols. Read other people myth, not those of your religion in terms of facts – but you read the others. You begin to get the message. Myth helps you to put your mind in touch with this experience of being alive. Myth tells you what experience is"[11].

After marriage with Mahesh Devi lives in a big house as a house wife. Her husband Mahesh remains most of the time out of the house due to business tour. There is Devi's father-in-law Baba and maid servant Mayamma for the company of Devi, she has good bond with both of them. Baba also tells her stories just like her grand mother. The main theme of his stories most of the time is an exacting touchstone for a woman, a wife.

After hearing the stories from grand mother, father-in-law and Mayamma's real ordeals Devi plans to desert her husband Mahesh and tries to seek her social rights in the company of Pandit Gopal Sharma but after some time she does not feel emotional security even in the company of Gopal. At last, She decides to return in company of her mother, Sita.

According to Dr. Padmini and S.K. Sudha – "In 'The Thousand Faces of Night' Githa Hariharan sensitively portrays the condition of Indian women caught between tradition and modernity. She diligently captures their split consciousness as a result of which we find through a set of representative characters, both their submissiveness and their struggle for individuality"[12] .

Devi seems to be Hariharan's manifestation of equality in modern society. If she does not feel emotional and social security in the company of her husband or her lover, she leaves them and reunites with her mother Sita to start life again. Thus, Hariharan advocates more social liberty for women through her novel, 'The Thousand Faces of Nights'.
In "Fugitive histories' Githa Hariharan presents life story of Mala, Sara and Yasmin to the back drop of a public scene. She handles the story with tenderness. She describes about the political and social problems of India. She develops rich and complex characters with compassion. Characters with whom we may not always agree, but who can be understood. This combination of the personal and the political make her work interesting.

'Fugitive histories' exposes the legacy of prejudice that sometimes insidiously, sometimes perceptibly, continues to affect desperate lives in present day India. Githa Hariharan portrays the web of human connections that binds as much as it divides'[13]. Thus, Hariharan wants to describe through this novel that all human beings are same irrespective of their caste, colour and religion.

The novel runs on two parallel levels. Mala's psychological journey in her house in New Delhi runs parallel to that of Sara's physical journey from Mumbai to Ahmadabad and New Delhi. Everyone is a refugee trying to seek an escape from the world they are living in. Hariharan does not describe about age old history incidents in the novel but to the recent past 2002 Gujarat riots. Gujrat the birth place of Mahatma Gandhi started burning. It is a black letter day in the modern history of India. The people become fanatics in 'Fugitive Histories'. India claims to be a secular country but 2002 Gujrat riots is put to shame because of communal disharmony.

Thus, Hariharan wants to say that human beings depend on each other to lead their life in a proper manner and

Created by Universal Document Converter

to gain justice in society it is essential to think about others' rights to live and lead life according to their wish.

Asad's diaries, his notes are very precious for Mala. For her they are 'artistic diaries' they are detailed drawing, poems, rough drafts etc. most of the pictures are portraits of people. They are "Memories of things past but also dreams of what may yet come to pass. Some of them speak …… of hope. Hope, That's what the drawing has in abundance, the drawing of the two lovers. The lovers who love each other and also the life they plan to live."[14].

Though the comments are made in the context of the drawings of Asad but they speak about the lives of all the people portrayed in the novel. Every character lives with a hope to begin a new life in a world to fill with compassion and love.

Mala recalls the chain story she told Samar and Sara at meal time when they were children. It is an ant's story, no one told Mala stories when she was growing up. But her children are lucky to hear to her story of ant. This story has a link with the main story of Mala, Sara, Samar and others.

"That's how the ant not only shows what she can do, but also makes them all part of a living chain, so they change from creatures indifferent to other people's stories creatures changed by other people's stories. That is the way Samar and Sara also saw it once, a game in which everyone is linked. What happens to one also happens, in some way to the other ……. Beginning without Asad"[15].

Asad, being an artist and a sensitive person, having seen the communal violence of Gujarat, breaks down completely and falls seriously ill with some heart problem. In order to support family, Mala starts the job of a school teacher in Delhi and settles there with her family. Mala does her best for recovery of Asad but his health continues to deteriorate with no improvement at all. After Asad's death Mala, brings up Sara and Samar in a good way and inculcates in them the traits of ideal citizen. Sara, working in Bombay for an NGO, wants to write a script of a documentary film, based on Gujarat carnage. It would be directed by her roommate Nina, a budding documentary film director. Sara's brother Samar visits to her in Bombay. He is well educated and planning to a lucrative job as a software engineer in America. He offers Sara some financial help so that she can complete script writing of her documentary Nina advises Sara to visit Ahmedabad, actual place of carnage, in order to make her story close to life because only writing on the basis of reports and news would not make their script real.

Sara and Nina visit to house of a muslim family where Yasmin a teenage girl, living with her parents, welcomes them. She is studying in a local high school, near her rehabilitation camp. Yasmin's mother asks her to take both guests to Firoza Khala so that they can be introduced to more people of this locality. Yasmin has lost her only brother Akbar in Godhra riots. Everytime whenever her parents visit police station, they return empty handed without any news of their only son, Akbar who has been the captain of his college team. Her mother sews skirts and blouses day and night to run family. Now, Yasmin realizes that she is the only surviving hope of her family, as there is nobody to take care of her parents.

S.K. Ghosh says –

"There are several factors involved in Hindu-Muslim riots at a particular place and time and their subsequent spread to other places. Causes of conflict undoubtedly have local variations but they are always a mixture of historical, religious, social, economic and political factors responsible for the animosity which often explodes into violence. ……. Communal writings and speeches and spreading of false and exaggerated rumours and irresponsible press reports incite communal violence. An important development that has taken place is the lumpenisation of politics"[16]. In this way, Hariharan wants to question social system of our country because innocent people are killed in communal riots.

A woman called Zainab describes about the prejudices the Muslim children have to face. She tells Sara about her son Nasir's incident that her son left the school. They wished him to study in English medium school so he could be an engineer but the principal insulted him on the name of religion –

"Aren't you from Pakistan? ----- he kept calling my son Nasir a terrorist till the child could not bear it any more"[17].

Hence, after reading the story of Zainab, readers feel sympathy for her because her son has left the school due to religious identity.

Before leaving, Sara makes a visit to the Sabarmati Ashram, sits by the side of Sabarmati River, to recall "Ishwar Allaha Tere Nam Sab Ko Sanmati De Bhagwan"[18].

Thus, Githa Hariharan has drawn her characters from social settings. Githa Hariharan has closely observed all ups and downs in Indian society. She has witnessed that the struggle made by Indian society is manifold. One has to understand the social system to make a pathway for bringing total change in the society.

She has rightly said –

"I have never liked identifying too closely with any one character in her novels. All of them have something of me, and all of them are different as well. Writers are just greedy to live more than one life experience more than what their own lives give them"[19].

Thus, Githa Hariharan in 'The Thousand Faces of Night' and 'Fugitive Histories' shows social injustice met by women and minority communities and elaborates it through different perspectives. Here the writer represents the social reality in a unique way. The reader is bound to think twice and meditate upon those problems of social injustice and try their level best to bring amelioration conducive to social justice.

WORKS CITED

1. Hariharan, Githa, 'The Thousand Faces of Night', New Delhi, Penguin Books, 1992, P.81.
2. 'The Thousand Faces of Night', New Delhi, Penguin

Created by Universal Document Converter

Books, 1992, P.120.
3. Das, Krishan and Deepchand, Patra Studies in Women Writers in English, New Delhi: Commonwealth Publishers, 2012, 278, Print.1
4. Hariharan, Githa, 'The Thousand Faces of Night', New Delhi, Penguin Books,1992, P.27.
5. 'The Thousand Faces of Night', New Delhi, Penguin Books, 1992, P.80.
6. Jagpal, Anju, 'Female Identity', New Delhi: Prestige Books, 2012, P.123.
7. Jagpal, Anju, 'Female Identity', New Delhi: Prestige Books, 2012, P.164.
8. Hariharan, Githa, 'The Thousand Faces of Night', New Delhi, Penguin Books,1992, P.13.
9. 'The Thousand Faces of Night', New Delhi, Penguin Books,1992, P.19.
10. 'The Thousand Faces of Night', New Delhi, Penguin Books,1992, P.19.
11. Compbell, Joseph, 'The Power of Myth', United States: Doubleday, 1988, P.181.
12. Padmini, P and S.K. Sudha, 'Identity of cultural crisis of Protagonists in Githa Hariharan 'The Thousand faces of Night' and Bharti Mukherjee's wife Gopichand and P. Nagasusela eds. A spectrum of Indian fiction in English, Jaipur, Aadi Publication,2011,P.126.
13. Hariharan, Githa, 'Fugitive Histories', New Delhi, Penguin Books, 2009,P.13.
14. 'Fugitive Histories', New Delhi, Penguin Books, 2009,P.14.
15. 'Fugitive Histories', New Delhi, Penguin Books, 2009,P.8.
16. Ghosh, S.K. 'Communal Riots in India: Meet the Challenge Untiedly', New Delhi: Ashish Publishing House,1987,P.27-28.
17. Hariharan, Githa, 'Fugitive Histories', New Delhi, Penguin Books, 2009,P.156.
18. 'Fugitive Histories', New Delhi, Penguin Books, 2009,P.175.
19. http://www.complete review.com/review/ hariharan.web30-7-12

SELECTED BIBLIOGRAPHY

Primary Sources

1. Hariharan, Githa, 'The Thousand Faces of Night', New Delhi: Penguin Books, 1992.
2. Hariharan, Githa, 'Fugitive Histories', New Delhi; Penguin Books, 2009.

Secondary Sources

1. Das, Krishan and Deepchand, Patra 'studies in women writers in English', New Delhi: Commonwealth Publishers, 2012.
2. Jagpal, Anju, 'Female Identity', New Delhi: Prestige Books, 2012.
3. Compbell, Joseph, 'The Power of Myth', United States: Doubleday, 1988.
4. Padmini, P and S.K. Sudha, 'Identity of cultural crisis of Protagonists in Githa Hariharan 'The Thousand faces of Night' and Bharti Mukherjee's 'wife' GopiChand and P. Nagasusela eds. A spectrum of Indian fiction in English, Jaipur, Aadi Publication,2011.
5. Ghosh, S.K. 'Communal Riots in India: Meet the challenge Untiedly', New Delhi: Ashish Publishing House,1987.
6. Journals, Magazines, Newspapers and Internet
7. www.google.com

Dr. Mamta Singhal
Assoc.Prof. & HOD(Eng)
J.V.Jain (P.G.) College
Saharanpur-247001

Ajay Kumar Sharma
Research Scholar

Created by Universal Document Converter

A Comparative Study Of General And OBC Category B.Ed. Teacher- Trainees To Adjustment

Dr. Ramkishor

Abstract : A teacher plays an important role with the students as a guide, friend and helper of the student. A teacher may belong to any caste or religion but some section of larger society did not appreciate the policy of reservation for the reason that the social mobility on the crutches of reservation was likely to produce substandard and inefficient teacher. From research point of view, it may be quiet interesting and useful to study this phenomenon of caste system in relation to some Adjustment factors. Teacher's education is considered to be the significant education imparted by teachers training departments. A teacher's failure is need to be understood because it amounts to wastage of resources.

KEYWORDS: Comparative study of general and OBC category B.Ed. teachertrainees to Adjustment.

1. INTRODUCTION:

The quality of school education is a function of large number of factors including Teachers, Principal and Students with their numerous characteristics. The teacher is supposed to be the key position in the process of education. It is true to say that teacher is the heart of any educational institution and the success of any institution depends largely upon the qualities and characteristics of a teacher. Teachers are the schools' greatest assets. They stand at the interface of the transmission of knowledge skills and values.

The place and importance of a teacher in a society can never be underestimated. He is responsible for imbibing, interpreting, disseminating the cultural values knowledge and tradition to the future generations, and thus his position is unique in society. Both the layman and professional educators agree that the objective of an educational programme is determined to a large extent by teachers. The desirable educational outcomes are attainable if competent teacher are these at the pivot to carry the programme, in the right direction. The school may have excellent material resources in the form of equipment, building and text book, the curriculum may also be appropriately adopted to the community requirement but if teachers are misfit or are indifferent to their responsibilities the whole programme is likely to be ineffective and largely wasted. Teacher will only be able to fulfil their educational purpose of teaching if they have desirable personality characteristics.

Many educators believe that the teachers 'personality characteristics are important to support the belief that personality characteristics may be considered as an important factor in teacher's success in somewhat the same way as scholastic proficiency, understanding of children and verbal fluency. Whether, one consider personality as a factor in teacher's success, depend on how one conceive the personality and its relation to means, goals and process of education.

Personality of a teacher not only affects his behaviour in the class but also influences the behaviour of the students. Thus for the professional preparation of teacher, the study of personality needs and self concept and attitudes held by them is very important. How a teacher performs his duties is dependent to a great extent on his personality characteristics, personality needs, positive self concept and adjustment. A positive self concept makes the work not only easier but also more satisfying and professionally rewarding, a negative self concept and adjustment make a teacher's task harder, more tedious and unpleasant. For the above mentioned reasons personality needs, adjustment and self concept are relevant and important variables of this study. Historically, India has remained a society of hierarchies in which the constituent members were placed in a well established and explicitly defined set of social positions determining the extent of their entitlement to respect, prestige influence, wealth and education (Hulton-1961). Since after independence, scheduled caste (SC) and scheduled tribes (ST) which from the lowest rung of Hindu social order came to be accepted as equal to other citizens of the country to avail equal opportunities in national life (Govt. of India, 1991). With the higher castes, reservation policy was introduced offering them the advantage of basic education and professional education among other benefits.

1.1 Statement of the Problem

The problem for the present study is specifically stated as below:

"A comparative study of General and OBC category B.Ed. teacher trainees in relation to adjustment".

1.2 Review of Literature:

Adjustment is the condition of harmony arrived at by a person whom we call well adjusted descriptively, this person is relatively efficient and happy in an environment which we judge to be reasonable satisfactory.

Coleman (1924), Piaget (1952), Gates et al.(1955), Drcvadahal (1956), Boring, Langfeld and weld (1962), Flower & Garbin (1989), I.P. Verma (1968), G. K. Samanta Roy (1971), P. P. Khatry (1973), Pandey (1973), Pandit, K.M. (1973), Panday (1974), Chhaya (1974), Malhotra (1976), V.P. Gupta (1977), Gupta B.P.(1978), Sharma M.C. (1981) P. Prasad (1985), N. A. Kuchay (1986), V.P. Singh (1987), Kailash, G. (2002), Shailendra Prasad (2004), Ravneet (2005), S. Sahoo (2005), Brown. R.P. and Gerberg, P.L. (2005), Gupta, A. K. (2007), Yadav, Pooja and Naved. Iqbal (2009). Studied impact of life skill training on self-esteem, adjustment and empathy among adolescents. Results showed that subjects improved significantly in post conditions on self esteem emotional

Created by Universal Document Converter

adjustment, educational adjustment, total adjustment and empathy. However, no significant difference was found on social adjustment. Over all training was very effective and it was concluded that Life Skill Training do show positive results in bringing change on adolescents attitudes

1.3 Need and Significance of the Study

The problem of scheduled caste and untouchability is an age-old one with manifold social, economic educational and political implications. However, since independence the Government of India has been providing greater concession and reservations in technical, vocational and professional education and reservation of the post in the Government services for them. The progress made during last sixty years is no doubt very significant and yet, the magnitude of the problem is so great that still it is a long way to go if the constitutional goals are to be realized. Facilities for higher education specially for scheduled caste students have increased enormously. The national literacy rate for the scheduled caste category to the 2001 census is 47.4% within the scheduled castes groups. The disabilities of these groups were not only economical, cultural and structural they suffer from many psychological and sociological problems. Feelings of inferiority, anxiety, lack of self control, maladjustment, negative self concept, lack of verbal intelligence and so many problem are still found in their personality.

At all these levels research has mostly concentrated on comparing whether scheduled caste and non scheduled caste students differ significantly with regard to socio-economic status, occupational aspirations, intelligence, personal values and academic achievement etc. Very few researchers have tried to conduct studies on personality needs adjustment behaviour and level of self concept of B.Ed. teacher trainees in relation to caste. Thus review shows a great need of research in this direction. Therefore in the present study the investigator has decided to compare the personality needs adjustment.

1.4 Delimitations of the Study

In research we study a minute segment of reality, for obtaining, an accurate focus it become essential to delimit the problem therefore, the present study was delimited as follows:

1. The present study was delimited to B.Ed. teacher trainees. It was restricted to three hundred and seventy five male and female teacher trainees studying in different teacher training departments of Moradabad Commissionary affiliated to M.J.P.R.U. Bareilly.
2. There are many aspects of human behaviour which may be influenced by Caste system. All of them could not be studied at a time due to various limitations. Hence, the study is delimited to only three variables viz. Personality Needs, Adjustment and Self-Concept of B.Ed. Teacher Trainees.

1.5 Objectives of the Study:

This study is planned to achieve the following objective:

1. To find out how the teacher-trainees of general category differ from OBC category with regard to Adjustment.
2. To find out how the teacher- trainees of general category differ from Scheduled Caste teacher-trainees with regard to Adjustment.
3. To find out how the teacher-trainees of OBC differ from SC category teacher-trainees with regard to Adjustment.

1.6 Hypotheses of the Study:

In order to achieve the foregoing objectives of the study following hypotheses are formulated:

H1 There is no significant difference between the general and OBC category B.Ed. teacher-trainees with regard to Home Adjustment. H2 There is no significant difference between the general and OBC category B.Ed. teacher-trainees with regard to Health Adjustment. H3 There is no significant difference between the general and OBC category B.Ed. teacher-trainees with regard to Social Adjustment. H4 There is no significant difference between the general and OBC category B.Ed. teacher-trainees with regard to Emotional Adjustment. H5 There is no significant difference between the general and OBC category B.Ed. teacher-trainees with regard to Educational Adjustment.

2. Methodology:

2.1 Population of the study

The population for the present study was consisted of the B.Ed. teacher-trainees of Moradabad who were studying in the teacher-trainees departments of college affiliated to M J P Rohilkhand University, Bareilly.

2.2 The Sample and Sampling Procedure

Before the investigator collects the data he has to choose a specific sample from which he has to collect it. The selection of the sample is one of the most important steps of research. Therefore, much care has been taken it selection of the sample for the study. In the present study systematic random sampling techniques was used to select the colleges of the total population. As the total number of teacher training departments affiliated was 24 and it was not possible to include all the colleges of this commissionary. One of 24 B.Ed. departments running in aided and self financing colleges 7 were selected randomly in the sample. At the second stage 375 male and female teacher trainees of General, OBC and SC category have been selected randomly. One of these 375 B.Ed. trainees 125 of each category have given the usual return of data.

2.3 The Tool Used

The tool used in the present research work is Adjustment Inventory for college students (AICS) by A. K. P. Sinha and Singh.

2.3.1 Description of the Tool:

The inventory has been presented in Hindi and it has 102 items (Home- 16, Health-15, Social-19, Emotional-31,

Created by Universal Document Converter

and Educational-21)

(I) Home Adjustment:

Low scores indicate satisfactory adjustment. Individuals scoring high tend to be unsatisfactory adjusted towards their home surroundings.

(ii) Health Adjustment:

Low scores indicate satisfactory health adjustment and high scores unsatisfactory adjustment.

(III) Social Adjustment:

Individuals scoring high are submissive and retiring. Low scores indicates aggressive behaviour.

(IV) Emotional Adjustment:

High scores indicate unstable emotion. Individuals with low scores tend to be emotionally stable.

(V) Educational Adjustment:

Individuals scoring high are poorly adjusted toward their curricular and co-curricular programmes. Persons with low scores are interested in the Educational activities.

2.4 Statistical Techniques

Mean, Standard Deviation and 't' value test were used to find out the significant between two groups.

2.5 Analysis and interpretation of Data

Education in India has historically been the property of the few. Since educational development took place within the framework of a stratified social system. It has always been focused on the privileged ones. The status of education for various groups is dependent upon their social political profile. Since after independence. Scheduled castes (SC) which from the lowest rung of Hindu-Social order, came to be accepted as equal to other citizens of the country to avail equal opportunities. Choudhary et al,(1997) in their study on

various categories of medical students found that SC and ST group of students performed poorly as compared to general category students. Malik and Manchanda (1994) who studied characteristics of successful medical college entrants, found that majority of them come from English medium Public schools. Economic status plays an important role in stimulation of adequate intellectual growth. Studies reveal that SC and ST students carry very low aspiration; they have lower need of achievement (Gokulnath & Mehta,1972).

Hypothesis

This hypothesis was aimed at testing if there was any significant difference between the B.Ed., trainees of general and backward categories with regard to adjustment. In other words, the interest of the researcher was in investigating if caste factors were related to their adjustment, if trainees of general category had better adjustment or poor adjustment as compared to the trainees of backward category. The null hypothesis formulated for this purpose was that there is no difference on adjustment scores between the trainees of these two groups.

For this purpose the trainees of these two groups were compared. Means and S.Ds. on all the dimensions of adjustment and global adjustment were computed. Total mean adjustment scores for the trainees of general and backward category were found to be 27.00(12.00) and 29.48 (10.68) respectively. In order to test whether there was any significant difference on total adjustment of trainees of both the groups, t-test was applied. The table 1.0 revealed that the obtained t-value was 1.57 which was no significant. The hypothesis of no difference was accepted and it was concluded that both the groups of trainees do not differ among themselves in respect of total adjustment scores.

S.N.	Adjustment	Gen.(Total) n_1 =104		OBC n_2 = 101		D = M_1 M_2	t-value	Lev. Of Sig.
		M_1	SD_1	M_2	SD_2			
1.	Home	2.62	1.98	3.97	2.94	1.35	4.09	.01
2.	Health	2.82	1.96	3.07	1.80	0.25	0.96	NS
3.	Social	6.87	2.82	6.56	2.69	0.31	0.83	NS
4.	Emotional	8.93	5.27	9.48	4.27	0.55	0.82	NS
5.	Educational	5.70	2.80	7.51	3.44	1.81	4.20	.01
6.	Total	27.00	12.00	2948	10.60	2.48	1.57	NS

2.51 Testing of Sub-Hypothesis:

India has started the process of structural reform since 1990s. In the globalised words, recent policies of government have become the main motivating force and knowledge has assumed a crucial role. Educational advancement as well as social and political awareness of backward section of society has led to their quicker assimilation and faster socio-economic development.

Dimension wise analysis of adjustment scores revealed that both the groups of B.Ed. teacher trainees differ significantly to each other in 'home' and 'Educational' areas of adjustment. In case of 'home' and 'Educational' areas of adjustment t-values i.e. 4.09 and 4.20 were found significant at .01 level. As stated earlier the low scores shows better adjustment. Low mean scores 2.62 (1.98) and 5.70 (2.80) for 'home' and 'Educational' areas are in case of general group is the indication of better adjustment of general group in these areas.

B.Ed. teacher---- trainees belonging to the economically and socially weaker sections of the society leg behind in educational and economic areas. Non-adoption of modern educational practices make them leg behind the others educationally. The members of this backward category are unable to take advantage of the upcoming employment opportunities, as they mismatch the qualifying educational

Created by Universal Document Converter

requirement. In case of 'health' areas, 'social area and 'emotional 'areas of adjustment both the groups scored more or less same scores t'-values for these areas were not found significant. It indicates that both the groups were equal in these areas of adjustment. Result in the present study indicated that there is a significant difference between adjustment in 'home' and 'educational' areas of adjustment of general and backward category teacher trainees.

Conclustion : Case plays a decisive role in the social behaviour of an individual. Every individual has to adjust his behaviour in a set of behavioural pattern according to these caste-traditions. People of different castes possess different experiences from birth through entire like span, as they get different treatments. Verma (1968) studied the adjustment of teacher. It was found that adjustment and personal problems were highly and significantly related Good adjustment resulted in the reduction of a number of problem, while the poor adjustment increased their number. Malhotra (1976) found that the poorly adjusted teachers were more direct in their classroom behaviour than teacher who was will adjusted Gupta, B.P.(1978) also found a negative impact of law income on adjustment.

3. Discussion:

The groups of B.Ed. teacher trainees i.e. General and OBC was identified on the basis of castes. The major findings of the study revealed the comparison of different groups in relation five adjustment is neither more favourable nor unfavourable. In this study, it is found that General and OBC teacher trainees differ significantly to each other in relation of 'home' and 'educational'. General and OBC teacher trainees do not differ significantly to one another with respect to rest of the five adjustment i.e. home adjustment, health adjustment, social adjustment, emotional adjustment, and educational adjustment.

References:

1. Dr. Kishor Ram "A comparative study of General and SC category B.Ed. teacher trainees in relation to personality needs." Indian Journal of Social Concerns Volume-7, Issue- 31 Oct.-Dec, 2018.
2. Agarwal A (2000) A study of some educational problem of SC students. Indian jour of Edl Res 19 (1): 37-4..
3. Gupta, A.K. (2007) Impact of Yoga Practice on Adjustment Pattern and Self Concept. "jou. Of Indian Psy, Vol. 25, No.112.and Jan. and 74-83.
4. Johnson, D.W. (1991), Student-Studed interaction neglected variable in edu., Edl. Res. 10, 5-10.
5. Lal, K. (1985), A Study of Adjustment Problems of SC students in school of Haryana, Ph.D.Del. Uni. 1985
6. Pal, R. (1984) A comparative study of perso, Patter of SC and High Caste Students, Haryana, Ph.D. Edu. Kur. Univ., 1984
7. Prasad, P. (1985). Aespiration, Adjustment and role conflict in Pri and Sec. School teachers, Ph.D. Psy Bhagalpur.
8. Sharma, O.P. (1990), A comparative study of pupil teacher belonging to different sub-castes Ph.D., Edu.,Univ. of Jodhpur.
9. Srivastava, Neelima, (1992) Effect of sex, Self Conciousness and Variants of Feedback, Ph.D. Psy. Uni. Of Lucknow.
10. Salve, R.N.(1993). The impact of Government Welfare measures on SC. Dr. B.S. Ambedkar Marathwadi Univ.
11. Sharma B. (2008). The effectto self concept on school environment. Indian Jour. Of Psychology and Education 39 (1): 88-90
12. Bhati MS and Bhati AK (2011). Caste system in modern Indian. Indian Streams Res Jour Vol.-1 (v).

Dr. Ramkishor
Head of Department in Education
North India College of Higher Education
Najibabad, Bijnor (U P)

Created by Universal Document Converter

Picture of Women Entrepreneurship in Rural India

Ms Gargi Sharma

ABSTRACT: Women entrepreneurship has become an important part of social and economic development of a country. India is a developing country. Entrepreneurship is a process by which different entrepreneurs contribute in the development of an economy by using their knowledge and skills.Avery small percentage of women are entrepreneurs in India. According to the Sixth Economic Census released by the Ministry of Statistics and Programme Implementation, women constitute around 14% of the total entrepreneur base in India. But this small percentage of women entrepreneurs has made an indispensable contribution in social and economic activities in urban as well as rural India. There are many rural women who have become successful entrepreneurs in last few years. They have contributed in the development of rural areas and semi-urban areas of India. In last few years rural women entrepreneurs has come forward to show their creativity and knowledge. All of these rural women are not well educated but they have excellent entrepreneurial skills to do something different from other women. The commercial development of rural sector is possible with the rural entrepreneurship. Along with rural men now rural women has also become an important part of rural entrepreneurship in India. In this paper the main focus is on status of women entrepreneurs in rural area of India.We will discuss the various challenges and opportunities for ruler women entrepreneurs. In last few years Government of India has launched various schemes for development of rural areas. Government has also launched micro finance credit schemes and provided funds for micro enterprises in rural areas of India. In this paper the secondary sources of information have been used.

(**Keywords-**Entrepreneurship,Entrepreneur,Government, India, Rural, Women)

1.INTRODUCTION

Definition of Entrepreneur

Oxford English Dictionary (1933) defined entrepreneur as "one who undertakes an enterprise, especially a contractor-acting as intermediary between capital and labour."

Richard Cantillon was the first to introduce the term 'entrepreneur'. He defined entrepreneur as "the agent who buys means of production at certain prices in order to combine them in to a product that he is going to sell at prices that are uncertain at the moment at which he commits himself to his costs".

In a study of American agriculture, Danhof has classified entrepreneurs in the following categories-

- ✧ Innovating entrepreneurs
- ✧ Adoptive entrepreneurs
- ✧ Fabian entrepreneurs
- ✧ Drone entrepreneurs

Women Entrepreneur-

Women entrepreneur may be defined as a woman or a group of women who undertakes the risks and makes use of available opportunities by using their knowledge and skills in an optimal manner.

The Government of India has defined- " women entrepreneur as an enterprise owned and controlled by the women having a minimum financial interest of 51% of capital and giving at least 51% of employment generated in the enterprise to women".

Rural Women Entrepreneurs-

In simple words we can say that the women entrepreneurs who are working in rural or semi-urban areas are calledrural women entrepreneurs.

Rural women entrepreneurs may work for the rural or semi-urban areas either as an individual or in a group. They may start their enterprises as an individual entrepreneur or as a group of entrepreneurs in the rural areas. Rural women entrepreneurs work for the economic and social development of rural or semi-urban India. They use their education, economic resources, skills, knowledge, creativity and social linksfor the commercial development of their rural areas. They start their enterprises and give jobs to other needy rural women too. They undertake all the risks associated with their new innovation and work for the profit of their own and for the benefits of their villages. In the last few years, many rural women have come forward to start up their own enterprises. Mostly rural women entrepreneurs start their business on very small level. They have to face various challenges to become entrepreneurs. They have to overcome various financial,

Created by Universal Document Converter

social, psychological, family and other obstacles to become successful.

2.OBJECTIVES OF THE STUDY

✧ To discuss various challenges faced by rural women entrepreneurs in India.

✧ To present some schemes launched by government for rural entrepreneurs in India.

✧ To discuss the need for development of rural women entrepreneurs in India.

3. RESEARCH METHODOLOGY

This study is based on secondary data. The information has been collected from secondary sources. The sources of information are on- line journals, research papers, articles and books.

The collected information has been analysed properly to make this study more meaningful.

4.LIMITATIONS OF THE STUDY

This study is completely based on secondary sources of information. Due to time limitation any primary data has not been collected for the study. No quantitative tools have been used for this paper.

5.CHALLENGES FACED BY RURAL WOMEN ENTREPRENEURS

To start up their own enterprises invillages or semi-urban areas, women entrepreneurs have to face various challenges. In this paper efforts have been made to present those challenges to understand the picture of rural women entrepreneurs.

✧ **LACK OF FAMILY SUPPORT-** People living in rural areas are orthodox by nature. According to their culture, women is for household works only. Only men are made for earning living for their families. A very small percentage of families support their female members to start up their own businesses.

✧ **LOW RATE OF LITERACY-** Some parts of rural areas are so backward that these areas do not have proper education facilities for village children. Hence a very small percentage of people are educated. And a very small number of female population go to school in these backward areas.

✧ **LACK OF COMPLETE KNOWLEDGE-** Mostly rural people are not aware of the proper procedure to start up their enterprises. They do not know how to arrange money and other resources to establish their enterprises in their villages. And because of incomplete knowledge mostly women have to quitbefore starting up their own work and only few number of women become entrepreneurs but after facing various troubles.

✧ **LACK OF FINANCIAL RESOURCES-**The basic need to start a business is money. Without money no one can start its business. Mostly rural women are not able to get financialhelp from their families and relatives. They even are not aware of various credit schemes available for rural entrepreneurs.

✧ **NO TECHNICAL KNOWLEDGE-** Mostly rural women do not have knowledge about the technology suitable for their production process. They also do not aware of latest technologies in the market. A large percentage of rural women even do not know how to operate computers and smart phones. They are notaware of the power of digital world.

✧ **MARKETING PROBLEMS -** After starting up their new enterprises, they do not know how to make use of marketing tools in the promotion and distribution of their new products or innovations in the target market.

✧ **COMPETITION FROM LARGE SCALE ENTERPRISES IN URBAN AREAS-**

Already a number of large scale enterprises have been established in urban areas. Hence it is very difficult for rural women entrepreneurs to compete with these large scale industries. It is very difficult for them to come forward with their new products or services in the market.

✧ **EXPLOITATION BY MIDDLEMEN -** Mostly rural women are dependent on middlemen for the distribution of their produced. Because of lack of knowledge and illiteracy, they blindly trust middlemen and these middlemen take advantage from the situation and make their own profits. Ultimately innocent rural women get a small percentage of profit.

✧ **LACK OF SELF CONFIDENCE-** Rural women are dependent on their father or on their husband (after marriage) for their decisions. Because of this they have lost their self-confidence. They are always having a fear of loss in whatever they are trying to do independently.Hence male dominated society has killed the self- confidence of talented women of rural areas.

✧ **LOW RISK BEARING CAPACITY-** Mostly rural women entrepreneurs do not have support from family as well as from society. They can not handle too much risks associated with production and distribution of goods or services in market. Taking a huge amount of loan is not an

Created by Universal Document Converter

easy task for them. They mostly prefer to work on a small level which requires less investment.

✧ **POOR INFRASTRUCTURAL FACILITIES-**There is a major role of infrastructural facilities in the procurement of raw materials and distribution of goods. Because of poor communication, transport and storage facilities, rural entrepreneurs have to bear huge losses sometimes.

6.OPPORTUNITIES FOR RURAL WOMEN ENTREPRENEURS

✧ **LOWER LABOUR COST-** A large percentage of rural population is dependent on agricultural production. For doing agricultural activities they need not hire labour from outside ,hence in comparison to urban areas the labour cost in rural areas is less.

✧ **JOINT FAMILIES-** In rural areas mostly people live in joint families. So it is an advantage for new women entrepreneurs in rural areas that there are so many family members with them to handle different tasks together to set up a new enterprise.

✧ **LOWER OVERHEADS -** In rural areas the electricity bill charges, telephone bill charges and other charges are relatively lower as compared to urban areas.

✧ **GOVERNMENT SCHEMES-** In last few years Government of India has introduced various schemes for the development of rural entrepreneurs. These schemes focuses mainly on the growth of urban as well as rural entrepreneurship.These schemes have considered the importance of rural entrepreneurship for the economic development of country. Here we will discuss some of those schemes:

Schemes beneficial for rural entrepreneurs are-

MSME Ministry is a government body which is working on various schemes for the growth and development of rural areas in India. The common objectives of these schemes are-

a) To provide collateral- free credit

b) To provide incubation centres' facilities to the new rural entrepreneurs

c) To provide employment opportunities

i. SCHEMEOF FUND FOR REGENERATION OF TRADITIONAL INDUSTRIES (SFURTI)- It is a cluster based scheme.

Objectives-

a) To provide better equipments

b) To provide business development services

c) To provide better premises

d) To provide marketing support

e) To provide common facilities centres

Who can apply?

a) NGOs

b) Central, state and semi- government institutions

c) Field functionaries of central and state government

d) Panchayati raj institutions

e) Corporates

f) Private sector bodies

g) Corporate social responsibility foundations

ii. A SCHEME FOR PROMOTING INNOVATION, RURAL INDUSTRY AND ENTREPRENEURSHIP (ASPIRE)- According to Budget 2019, 80 livelihood business incubators and 20 technology business incubators were proposed to set up under this scheme in the year 2019-20.

Objectives-

a) To create new jobs

b) To promote entrepreneurship culture in India

c) To provide innovative business solutions

d) To promote innovation

iii. CREDIT LINKED CAPITAL SUBSIDY SCHEME (CLCSS) - This scheme works for the technological upgradation of small scale units such khadi, village and coir industrial units by providing 15% capital subsidy.

Objectives-

a) To provide upgraded plant & machinery

b) To provide upgraded technology to micro and small scale industrial units in villages and rural areas

iv. PRIME MINISTER'S EMPLOYMENT GENERATION PROGRAMME (PMEGP)- This scheme was introduced in 2008. It has been implemented by Khadi and Village Industries Commission (KVIC).

Objectives-

a) To generate self- employment opportunities.

b) To establish micro-enterprises in non-farm sectors.

c) To assist traditional artisans and unemployed youth.

v. TRAINING OF RURAL YOUTH FOR SELF **EMPLOYMENT (TRYSEM)-This scheme was launched on 15th Aug 1979 by Government of India.**

Objectives-

a) To provide training and technical knowledge in the field of agriculture, industries, services and other business activities.

Created by Universal Document Converter

b) To assist the rural women for entrepreneurship.

c) To support SC/ ST for rural development.

d) To help poorest families first.

vi. RAJIV GANDHI UDYAMI MITRA YOJNA- This scheme was launched on 7th Feb, 2008 specially for supporting potential first generation entrepreneurs.

Objectives-

a) To train the first generation entrepreneurs.

b) To help the first generation as well as existing entrepreneurs in accessing bank loans.

c) To provide financial help to Udyami Mitras (Lead agencies) for assisting and supporting potential first generation entrepreneurs.

vii. NATIONAL PROGRAMME FOR RURAL INDUSTRIATION (NPRI) - This scheme was announced by Finance Minister in Budget speech for year 1999-2000. This programme was launched mainly for promotion of cluster of units in rural areas with the aim of setting up 100 rural clusters in each year. For proper implementation of the scheme, Khadi & Village Industries Commission has taken up 50 rural industrial clusters for development during the year 1999-2000. SIDBI has selected 25 clusters and the remaining clusters have taken up by DCSSI, NABARD & the office of the states.

Objective-

The main objective of this scheme is to promote cluster of units in rural areas.

viii. PRIME MINISTER'S ROZGAR YAJANA (PMRY) - This scheme was launched for providing self -employment to the educated unemployed youth. It was announced by Prime Minister on 15th August, 1993. But formally it has been launched on 2nd October, 1993. It has been launched with the aim of providing self -employment to more than 1 million unemployed educated youth by setting up various micro enterprises.

Objectives-

a) To provide self- employment opportunities to the unemployed educated youth.

b) To assist weaker sections (SC/STs)

c) To support women for entrepreneurship.

Apart from self- employment facility this scheme also provides various other facilities

to the needy people.

★ **MICRO FINANCE-** Micro finance programme was introduced by NABARD in India. It was a step by NABARD for rural development. Micro finance programme works through Self Help Groups (SHGs). There are several SHGs working in the rural and semi-urban areas of India. These groups are linked with banks and work as mediator between poor section and financial institutions. Micro finance programme provides financial assistance to unbanked and underbanked areas of India. Micro finance is an important source of finance for potential rural entrepreneurs. In this programme special financial assistance is provided to the rural women entrepreneurs.

WHY THERE IS NEED FOR DEVELOPMENT OF RURAL WOMEN ENTERPRENEURSHIP?

In India about 3/4th population is living in rural and semi-urban areas. And a major percentage of rural and semi-urban population is dependent on agriculture. In last few years male rural population has been migrating to urban areas for earning their living.According to Economic Times report- The Economic Survey 2017-18 has proposed an agricultural policy with the aim to integrate women as active agents in rural transformation. The main objective of this policy is to help rural women in accessing credit, technology, land, water and training for the development in agricultural sector. An increase in agricultural production will lead to increase in India's GDP.

Government is also working on non-agricultural activities in rural areas. According to World Bank estimate, by the year 2050, half of Indian population would be urban. A major percentage of Indian population consists of rural and semi-urban people. So it is important to develop these areas. For developing rural areas , rural women can play an important role. Participation of rural women in entrepreneurial activities will be an addition to the entrepreneurial activities by rural men. Contribution of both rural male and female entrepreneurs will accelerate the growth rate of rural development in India. Rural development will ultimately lead tothe economic development of country. Already many Government schemes and NGOs are working on it. But due bad communication system these schemes are not working properly. It is very essential to make rural women aware of all the schemes available for them.

SUGGESTIONS

★ Proper training centres should be established in rural areas so that rural women can get the proper knowledge about various activities related to entrepreneurship.

★ For educated rural women there should be provision to train them for using smart phones and computers also.

★ At least primary education should be provided to the

Created by Universal Document Converter

uneducated rural women so that they can read and sign necessary documents.

★ Reward system should be there to motivate a major percentage of rural women to contribute in entrepreneurial activities.

★ A special campaign should be organised by Government at regular intervals in rural areas to educate rural people about the importance of entrepreneurship.

★ People should be given proper knowledge about how rural development leads to the improvement in their standard of living.

★ Loans of special concessional rates should be determined for rural women so that they can invest in their start-ups.

★ Loan formalities should be simplified and minimised for rural women.

★ Rural people should be given proper knowledge about the importance of women education and women entrepreneurship.

★ Documentary movies on importance of working women should be shown by Government in rural backward areas.

★ There is a need to encourage MFIs for opening new branches in areas of low financial penetration by providing financial assistance and subsidies. This is a proven way to increase the outreach of microfinance in the state.

CONCLUSION-

Growth in rural entrepreneurship is very important to convert a developing country in to a developed country. In India majority of area is rural area. So it is very important to develop all rural areas properly. Only few rural areas have been developed properly in last few years. Rural entrepreneurship plays an important role in the development of rural areas. When people of rural areas start up their enterprises, they can provide jobs to various unemployed people in rural areas. Rural people should be aware of all the opportunities available for them. Rural women should aware of their rights and should live with freedom without any fear. Rural women should become active so that they can convert their challenges in to opportunities. In last few decades various programmes have been launched by Government for providing all required resources to the rural people who want to start up their small and micro enterprises. Reservation is also there for SC/STs and rural women. Rural women entrepreneurial development is very important tool for the commercial development of the rural areas. It will improve the status of rural women in our backward society. Now time has come to think in a new and improved way for rural women entrepreneurship in India -'A NEW THINKING CAN CREATE A NEW INDIA'.

References-

1. Aggarwal, M.S. (2015),Opportunities and Challenges faced by Women Entrepreneurs in India. IOSR journal of Business and Management,69-73.
2. Dr. C.B. Gupta and Dr. N.P. Srinivasan, Entrepreneurial Development.
3. https://blogs.worldbank.org
4. https://www.entrepreneur.com/article/292918
5. https://inc42.com/features/union-budget-2019-aspireng-75k-rural-entrepreneurs-and-bharat-net-to-boost-rural-entrepreneurship
6. www.womensweb.in
7. https://yourstory.com/smbstory/msme-rural-entrepreneurship-government-schemes
8. https://www.slideshare.net/mobile/vkumarab/role-of-microfinance-in-promoting-micro-entrepreneurship
9. RESEARCH EXPLORER-A Blind Review & Refereed Quarterly International Journal ISSN: 2250-1940 (P) 2349-1647 (O)
10. EPRA International Journal of Economic and Business Review ISSN:2347-9671

Ms Gargi Sharma
Assistant Professor
Department of Commerce
D.A.V Centenary College, Faridabad
9971710668
Email-gargi.sharma84@gmail.com

Created by Universal Document Converter

Importance of ADR (Alternative Modes of Disputes redressal) in Indian Society

Dr. Vineet Bala

Abstract : India is a big country. The population of India is more than 130 Crore at present. There are different types of religions, caste- creeds, languages, geographical conditions, environment, different types of clothing and costumes of people, even the physical structure of people of different states is also differs from each other in India. Inspite of having so many diversities, the spirit of Indian people is common. They are emotionally attached with each other. India is the best example of unity in diversity in the world. This country is governed by constitution of India. India is one of the biggest countries in the world where democratic system is adopted. As we know to govern the people there needs a healthy governance. In India all powers confer under Constitution of India. There are three main pillars and foundation of our democratic system, the legislative powers, the judicial powers and the executive powers.

The most powerful pillar is Judicial system of our country. Modern judicial system (court system) in India was firstly introduced in 1775 by East India Company. Later on, after independence, we make it more refine as per requirements of our country. "The court is the bureaucracy of the law. If you bureaucratise popular justice then you give it form of court". Michel Foucault. No doubt, Indian judicial system is one of the most powerful and effective systems in the world to deliver justice. Sometime, it takes place the legislative powers also and the verdict of Hon'ble Apex court of India is to be followed by all concerned. For equity and justice, the Hon'ble courts have to take these types of steps.

As of January 2017, there were about 1248 laws/ Acts in existence approximately. However, there are central laws as well as States Law, it is difficult to ascertain the exact numbers. But it is very difficult to adjudicate all the matters through court of law. The implementation and enforcement of every law and enactment in well manner is a very tough job.

✧ As report provided by new agency PTI (June 27, 2019) Law Minister Ravi Shankar Prasad in a written reply said 43.55 lakh cases are pending in the 25 high courts and out of these 18.75 Lakh relate to civil matters and 12.15 lakh are criminal cases. 8 lakh cases among these are more than a decade old. Because of the huge pendency of cases, the then chief justice of India Sh. Ranjan Gogoi had written to Prime Minister of India seeking to increase 37 % or 399 posts the strength of judges and raise the retirement age of high court judges to 65 years. As on June, 1,58,699 cases were pending in the Supreme court. -There are more than 2.18 crore cases pending in district courts across the country; -12 states have more than 5 lakh cases to decide;more than 20 lakh cases, 13 LAKH in Haryana) - almost 10 per cent have been filed by women. While over 3 per cent are being fought by senior citizens. Almost more than 3 crores cases are pending in India in all courts.

✧ Need of ADR:-To overcome the above said problem of pendency of cases and to remove the over burden of courts there needs a lot of infrastructure, new posting of judges on district level, state level as well as in Supreme court also. It is very difficult and expensive job. This process certainly needs a lion share in Budget of Indian economy and a lot of time also. This is also universal truth that Justice delayed justice denied. The need of the Hour is also to develop ADR (Alternate modes of disputes redressal)

✧ With a view to implement the129th Report of the law Commission of India and to make conciliation scheme effective, it is proposed to make it obligatory for the court to refer the disputes after the issues are framed now at any stage for settlement either by way of arbitration, conciliation, mediation, judicial settlement or through Lok Adalat. It is only after the parties fail to get their disputes settled through any one of the alternate dispute resolution methods that the suit shall proceed further in the court in which it was filed".

In the year 1999, Indian Parliament passed the CPC Amendment Act of 1999 inserting Sec.89 in the Code of Civil Procedure 1908, providing for reference of cases pending in the Courts to ADR which included mediation. The Amendment was brought into force with effect from 1st July, 2002.

✧ Section 89 says;-Settlement of disputes outside of the courts

✧ Where it appears to the court that there exist elements of a settlement which may be acceptable to the parties for their observations and after receiving the observations of the parties, the court may reformulate the terms of a possible settlement and refer the same for a) arbitration B) conciliation c) Judicial settlement including settlement through Lok Adalat or d) Mediation"

✧ On 27th July 2002, the Chief Justice of India, formally inaugurated the Ahmadabad Mediation Centre, reportedly the first lawyer-managed mediation centre in India.

✧ The Chennai Mediation Centre was inaugurated on 9th April, 2005 and it started functioning in the premises of the Madras High Court. This became the first Court-

✧ The Mediation and Conciliation Project Committee (MCPC) was constituted by the then Chief Justice of India Hon'ble Mr. Justice R.C. Lahoti by order dt. 9th April, 2005.

✧ The Supreme Court of India upheld the constitutional validity of the new law reforms in the case filed by Salem Bar

Created by Universal Document Converter

Association and appointed a committee chaired by Justice Mr. Jagannadha Rao, the chairman of the Law Commission of India, to suggest and frame rules for ironing out the creases, if any, in the new law and for implementation of mediation procedures in civil courts.

In CIVIL APPEAL NO.6000 OF 2010, (Arising out of SLP (C) No.760 of 2007) titled Afcons Infrastructure Ltd. &Anr. Vs. Cherian Varkey Construction Co. (P)Ltd. &Ors. The Hon'ble court has analysed the object, purpose, scope and tenor of the provisions of section 89 C.P.C. The said provisions are extracted below : "89. Settlement of disputes outside the court. - (1) Where it appears to the Court that there exist elements of a settlement which may be acceptable to the parties, the Court shall formulate the terms of settlement and give them to the parties for their observations and after receiving the observations of the parties, the Court may reformulate the terms of a possible settlement and refer the same for -

(a) arbitration;

(b) conciliation;

(c) judicial settlement including settlement through Lok Adalat; or

(d) mediation.

The following categories of cases are normally considered to be not suitable for ADR process having regard to their nature :

(i) Representative suits under Order 1 Rule 8 CPC which involve public interest or interest of numerous persons who are not parties before the court.

(In fact, even a compromise in such a suit is a difficult process requiring notice to the persons interested in the suit, before its acceptance).

(ii) Disputes relating to election to public offices (as contrasted from disputes between two groups trying to get control over the management of societies, clubs, association etc.).

(iii) Cases involving grant of authority by the court after enquiry, as for example, suits for grant of probate or letters of administration.

(iv) Cases involving serious and specific allegations of fraud, fabrication of documents, forgery, impersonation, coercion etc.

(v) Cases requiring protection of courts, as for example, claims against minors, deities and mentally challenged and suits for declaration of title against government.

(vi) Cases involving prosecution for criminal offences.

All other suits and cases of civil nature in particular the following categories of cases (whether pending in civil courts or other special Tribunals/Forums) are normally suitable for ADR processes :

(i) All cases relating to trade, commerce and contracts, including

✧ disputes arising out of contracts (including all money claims);

✧ disputes relating to specific performance;

✧ disputes between suppliers and customers;

✧ disputes between bankers and customers;

✧ disputes between developers/builders and customers;

✧ disputes between landlords and tenants/licensor and licensees;

✧ disputes between insurer and insured;

(ii) All cases arising from strained or soured relationships, including

✧ disputes relating to matrimonial causes, maintenance, custody of children;

✧ disputes relating to partition/division among family members/coparceners/co-owners; and

✧ disputes relating to partnership among partners.

(iii) All cases where there is a need for continuation of the pre-existing relationship in spite of the disputes, including

✧ disputes between neighbours (relating to easementary rights, encroachments, nuisance etc.);

✧ disputes between employers and employees;

✧disputes among members of societies/ associations/ Apartment owners Associations;

(iv) All cases relating to tortious liability including

✧ claims for compensation in motor accidents/other accidents; and

(v) All consumer disputes including

✧ disputes where a trader/ supplier/ manufacturer/ service provider is keen to maintain his business/professional reputation and credibility or 'product popularity.

The above enumeration of 'suitable' and 'unsuitable' categorization of cases is not intended to be exhaustive or rigid. They are illustrative, which can be subjected to just exceptions or additions by the court/Tribunal exercising its jurisdiction/discretion in referring a dispute/case to an ADR process.

Dr. Vineet Bala
Assistant Professor in Geography
Vaish college, Rohtak (Haryana)

Created by Universal Document Converter

REASON AND MOTIVES FOR AMALGAMATION, MERGER AND ACQUISITIONS.

Dr. Santosh Kumar Sharma

Abstract: The liberalized economic policies have exposed Indian industry to several challenges. Time is evident of various economic activities that have grown over a period of time which led to various forms of business organizations. Initially as the transactions were limited the businesses used to be a one-man show. But the shortcomings of the sole trader business led to the development of small organizations known as 'partnerships' 1, later the use of the partnership form of business also suffered from various mistakes due to (a) lack of specialization of management and (b) large capital basis as it was not possible for partners to undertake various infrastructural activities. Even though mergers and acquisitions (M & A) have been an important element of corporate sector all over the world from several decades, research on mergers and acquisitions has not been able to provide the complete knowledge about legal framework of Amalgamation. There is no conclusive evidence on whether they enhance efficiency or destroy wealth. There is thus an ongoing global debate on the effects of mergers and acquisitions on industries.

Keywords: Amalgamation, Merger, Acquisitions, Takeover, Motives and Reasons

1. Meaning of Amalgamation, Merger, Acquisitions and Takeover

1.1 Amalgamation

When two or more companies carrying on similar business decide to combine, a new company is formed to take over their business. This process is known as Amalgamation. Amalgamation is a blending of two or more existing undertakings into one undertaking, the shareholders of each blending company becoming substantially the shareholders in company which is to carry on the blended undertakings. There may be amalgamation either by transfer of two or more undertakings to a new company or by the transfer of one or more undertakings to an existing company.

1.2 Merger

A merger is a corporate strategy of combining different companies into a single company in order to enhance the financial and operational strengths of both organizations. A merger usually involves combining two companies into a single larger company. The combination of the two companies involves a transfer of ownership, either through a stock swap or a cash payment between the two companies. In practice, both companies surrender their stock and issue new stock as a new company.

1.3 Acquisitions

An acquisition is the purchase of all or a portion of a corporate asset or target company. An acquisition is commonly mistaken with a merger - which occurs when the purchaser and the target both cease to exist and instead form a new, combined company. When a target company is acquired by another company, the target company ceases to exist in a legal sense and becomes part of the purchasing company. Acquisitions are commonly made by using cash or debt to purchase outstanding stock, but companies can also use their own stock by exchanging it for the target firm's stock. Acquisitions can be either hostile or friendly. Jaykumar A. Sathavara / International Journal for Research in Management and Pharmacy Vol. 3, Issue 5, June-July 2014 (IJRMP) ISSN: 2320- 09011717 Online International, Reviewed & Indexed Monthly Journal www.raijmr.com RET Academy for International Journals of Multidisciplinary Research (RAIJMR)

1.4 Takeover

A takeover is the purchase of a company. A takeover is different from a merger, which occurs when the purchaser and the target both cease to exist and instead form a new, combined company. Takeovers can create a bigger, more competitive, more cost-efficient entities. This synergy -- that is, the idea that the two companies together are more valuable to the shareholders than they are apart -- is elusive, but it is what justifies most takeovers.

2. Types of Mergers or Amalgamation and Acquisitions

2.1 Horizontal combination

This is a merger of two competing firms belonging to the same industry which are at the same stage of the industrial process. These mergers are carried out to obtain economies of scale in production by eliminating duplication of facilities and operation and broadening the product line, reducing investment in working capital, eliminating competition through product concentration, reducing advertising costs, increasing market segments and exercising a better control over the market. It is also an indirect route to achieving technical economies of a large scale.

2.2 Vertical combination

This is one where a company takes over or seeks a merger with another company in order to ensure backward integration or assimilation of the source of supply or forward integration towards market outlets. The acquirer company gains a strong position due to the imperfect market of its intermediary products and also through control over product specifications. However these gains must be weighed against the adverse effects of the merger.

2.3 Conglomerate Mergers

The conglomerated combination is in amalgamation of two companies engaged in unrelated industries. It enhances

Created by Universal Document Converter

the overall stability of the acquired company and improves the balance in the company's total portfolio, the her quiet phone gives access to the existing proctor resources of the conglomerate which result in technical efficiency and furthermore it could have access to the greater financial strength of the present acquirer which provides a financial basis for further expansion by acquiring potential competition.

2.4 Within stream mergers

Such mergers take place when the subsidiary company mergers with the parent company or vice-versa. The former arrangement is called downstream and the latter is called the upstream merger. Recently ICICI Limited a parent company has merger with its subsidiary ICICI Bank signifying the downstream merger.

3. Reasons and Motives for Amalgamation, Merger and Acquisitions:

Companies undertake merger and acquisition to achieve certain strategic and financial objectives. In modern finance the shareholder wealth maximisation theory and managerial utility theory is being considered as a rational criterion as to what fundamentally derives acquisitions and mergers. The factors which motivate shareholders, managers and promoters to lend support to these combinations can be summarised as follows:

1. **Economics of scale :** This generally refers to a method in which the average cost per unit is decreased through increased production.
2. **Increased revenue / Increased Market share :** This motive assumes that the company will be absorbing the major competitor and thus increase it's to set prices.
3. **Cross selling :** For example, a bank buying a stock broker can sign up the bank' customers for brokerage account.
4. **Corporate synergy :** Better use of complimentary resources. It may take the form of revenue enhancement and cost savings.

Jaykumar A. Sathavara / International Journal for Research in Management and Pharmacy Vol. 3, Issue 5, June-July 2014 (IJRMP) ISSN: 2320- 0901

18 Online International, Reviewed & Indexed Monthly Journal www.raijmr.com RET Academy for International Journals of Multidisciplinary Research (RAIJMR)

5. **Taxes :** A profitable can buy a loss maker to use the target's tax right off i.e. wherein a sick company is bought by giants.
6. **Geographical or other diversification :** This is designed to smooth the earning results of a company, which over the long term smoothens the stock price of the company giving conservative investors more confidence in investing in the company. However, this does not always deliver value to shareholders.

3.1 From the viewpoint of the shareholders

It is based on the shareholders wealth maximisation theory that means a firm's decision or merger of acquisition should be based on the objective of maximising the wealth of shareholders of the firm. This approach hypotheses that managers try to pursue those mergers and acquisition activities which offer positive net present value. The basic pattern of merger and acquisition activities is that the divesting company moves from a diversifying strategy to concentrate on core activities in order to increase competitiveness. Both patterns are based on an attempt to create value for the shareholders. Management buyouts help to restructure the firms, resulting in a realignment of the interests of the shareholders and managers. Managements buyouts provide incentive to managers (who are shareholders themselves) to maximised shareholding. The shareholder wealth maximised criterion is satisfied when the added value created by acquisition exceeds the cost of acquisition.

Added value from acquisition = value of acquirer and acquired after acquisition - their aggregate value before

Increase in acquirer share value = added value - cost of acquisition

Cost of acquisition = acquisition transaction cast - acquisition premium

Acquisition transaction cost is incurred when an acquisition is made, in the form of various advisers' fees like the stock exchange fees, cost of underwriting, regulators fees. The acquisition premium is the excess of offer price paid to the target over the target pre-bid-price and is also known as the control premium. Then investment made by the shareholders in the companies subject to merger should enhance in value. Shareholders may gain from mergers in different ways viz. from the gains and achievements of the company through:

1. Realisation of monopoly profits
2. Economics of scale
3. Diversification of product line
4. Better investment opportunities in combination

3.2 From the Standpoint of Managers

In the modern corporate economy relation between shareholders and the managers is equivalent to that of principle and agents may not always act in the best interests of their principal. The cost to the shareholders of such behaviour is called the agency cost representing loss of value to the shareholder. Thus the managers act in disregard to their principles promoting their own self-interest. In acquisition context self-interest result in bad acquisition and loss of shareholder value and may be undertaken to satisfy managerial objectives. Managers may undertake acquisition for the following mentioned reasons:

To pursue growth in size of their firm, since their remuneration status, prerequisites and power are functions of firm size (the empire building syndrome). Managers' compensation can be inter-related to firm size because it creates complexity of large firms. Managers may derive intangible benefits such as power and social statues when

Created by Universal Document Converter

they run large firms.

To deploy their currently underused managerial talents and skills. When a firm is in a mature industry/declining industry its survival depends on an orderly exit from that industry in to another with greater growth opportunities. The present industrial operations may not exhaust the managerial energies and talents available into the firm. Without moving into the growth industry, the firm may lose young managers and thus accelerate its own decline (self-fulfilment motive).

Jaykumar A. Sathavara / International Journal for Research in Management and Pharmacy Vol. 3, Issue 5, June-July 2014 (IJRMP) ISSN: 2320- 0901

19 Online International, Reviewed & Indexed Monthly Journal www.raijmr.com RET Academy for International Journals of Multidisciplinary Research (RAIJMR)

To diversify risk minimize the cast of financial distress and bankruptcy (the job security motive). Risk diversification is achieved when the acquiring and the acquired firms' cash flows are not highly positively correlated thus reducing the overall variability of the combined entity's cash flows.

Financial distress is a condition where the firm finds it difficult to meet its obligations and is forced to make suboptimal operating, investment and the financing decisions. Both firms' failure and the financial distress may have greater impact on the managers than shareholders. It is observed that managers hold highly undiversified portfolios overwhelmingly invested in their own firms. Thus total risk (including firm specific risk i.e. risk of failure) is more important to managers.

To avoid being taken over (job security motive). Target manager often go to extraordinary lengths to defeats hostile takeover bids. To achieve immunity from the threat of takeover, managers undertake the acquisitions, assuming falsely, that increased from size confers such immunity.

3.3 Trade and other advantages

1. **Diversification and expansion -** merger and acquisition are motivated with the objectives to diversify the activities so as to avoid putting all eggs in one basket and obtain advantage of joining the resources for the enhanced debt, the financing, and the better service ability to shareholders.
2. **Taxation advantage -** a company may find it beneficial to accumulated losses for having benefits of tax laws that will shield income from taxation. Section 72A of Income Tax Act 1961 provides this incentive for reverse mergers for the survival of the sick units.
3. **Vertical integration -** it is profitable for a company to amalgamate with another company which supplies it with raw material and channels its products into market. Fusion of such two companies leads to reduction of overheads and thus creates trade advantage.
4. **Production capacity reduction -** amalgamation of two units manufacturing or dealing in the same product may lead to reducing the cost of research, production, advertisement and sale.
5. **Purchase of management/growth advantage -** the merger and acquisition are motivated with a view to sustain growth. To develop new areas becomes costly, risky and difficult than to acquire a company in the growth sector even though acquisition is on premium rather than investing in new assets.
6. **Financial advantage -** companies functioning in the same group are treated more favourable by its financers. Thus a company outside the group and facing difficulty in obtaining finance may be likely to join the group and thereby solve its tight financial position.

References

1. Beena, P.L (1998). "Mergers and Amalgamations: An Analysis in the changing structure of Indian Oligopoly", Ph.D. thesis submitted to the Jawaharlal Nehru University, New Delhi.
2. Chand, S. (2013). Advanced Accounts
3. Komal, (2013). "A study of Amalgamation of companies in India", Ph. D. thesis submitted to the Maharshi Dayanand University
4. Ronald, W. Moon Business-Mergers and Takeovers
5. Sudarsanam, P.S. (1977).The Essence of Merger & Acquisition
6. Weinberg, Takeovers & Mergers, Third Edition.
7. http://www.investinganswers.com/financial-dictionary/businesses-corporations/merger-1821
8. http://www.investinganswers.com/financial-dictionary/businesses-corporations/takeover-5694
9. http://www.investinganswers.com/financial-dictionary/stock-valuation/acquisition-2224

Dr. Santosh Kumar Sharma
M. COM, MBA, LLB, WITH PhD; LLM.
Mo.-9899882948-santosh.sharma2013@gmail.com

H. No. 5113 Sec. 3, Faridabad, Haryana

Created by Universal Document Converter

Utopian and Dystopian Literature: A Comparative Study

Ish Kumar

Abstract : This paper is an attempt to contrast utopian and dystopian world views. The argument is for a realistic goal for a modern society. Literature, over the ages, has been influenced by the psychologies of people living in changing times. That is how literature is classified into various genres. The utopia and its derivative, the dystopia, are two such genres (opposite to each other) of literature that explore social and political structures. Where Utopian fiction portrays a setting that agrees with the author's ethos and is portrayed as having various attributes that readers often find to be characteristic of that which they would like to implement in reality or utopia, as the setting for a novel. Whether in Dystopian fiction, the opposite is the portrayal of a setting that completely disagrees with the author's ethos and is portrayed as having various attributes that readers often find to be characteristic of that which they would like to avoid in reality, or dystopia. Many novels combine both, often as a metaphor for the different directions humanity can explore, ending up with one of two possible futures.

Introduction

"There is a tyranny in the womb of every Utopia.

"Bertrand De Jouvenel

"Every dystopia is masked by a utopia.

" Mackenzie Draman

The word utopia comes from the Greek words ou, meaning "no" or "not," and topos, meaning "place." Since its original conception, utopia has come to mean a place that we can only dream about, a true paradise. Dystopia, which is the direct opposite of utopia, is a term used to describe a utopian society in which things have gone wrong. Both utopias and dystopias share characteristics of science fiction and fantasy, and both are usually set in a future in which technology has been used to create perfect living conditions. However, once the setting of a utopian or dystopian novel has been established, the focus of the novel is usually not on the technology itself but rather on the psychology and emotions of the characters who live under such conditions. Although the word utopia was coined in 1516 by Sir Thomas More when he wrote Utopia, writers have written about utopias for centuries, including the biblical Garden of Eden in Genesis and Plato's Republic, about a perfect state ruled by philosopher-kings. More's Utopia protested contemporary English life by describing an ideal political state in a land called Utopia, or Nowhere Land. Other early fictional utopias include various exotic communities in Jonathan Swift's famous Gulliver's Travels (1726).The idea of utopias continued to be popular during the nineteenth century. For example, English author Samuel Butler wrote Erewhon (1872) ("nowhere" spelled backward) and Erewhon Revisited (1901), and William Morris wrote News From Nowhere (1891). In the United States, people have attempted to create real-life utopias. A few of the places where utopian communities were started include Fruitlands, Massachusetts; Harmony, Pennsylvania; Corning, Iowa; Oneida, New York; and Brook Farm, Massachusetts, founded in 1841 by American transcendentalists. Although the founders of these utopian communities had good intentions, none of the communities flourished as their creators had hoped.

Dystopias are a way in which authors share their concerns about society and humanity. They also serve to warn members of a society to pay attention to the society in which they live and to be aware of how things can go from bad to worse without anyone realizing what has happened. Examples of fictional dystopias include Aldous Huxley's Brave New World (1932), Ray Bradbury's Fahrenheit 451 (1953), and George Orwell's Animal Farm (1944) and Nineteen Eighty-Four (1949). Lois Lowry chose to write The Giver as a dystopian novel because it was the most effective means to communicate her dissatisfaction with the lack of awareness that human beings have about their interdependence with each other, their environment, and their world. She uses the irony of utopian appearances but dystopian realities to provoke her readers to question and value their own freedoms and individual identities.

Jonas' community appears to be a utopia, but, in reality, it is a dystopia. The people seem perfectly content to live in an oily- garchy - a government runs by a select few - in which a Community of Elders enforces the rules. In Jonas' community, there is no poverty, starvation, unemployment, lack of housing, or prejudice; everything is perfectly planned to eliminate any problems. However, as the novel progresses and Jonas gains insight into what the people have willingly given up - their freedoms and individual-ities - for the so-called common good of the community, it becomes more and more evident that the community is a bad place in which to live. Readers can relate to the disbelief and horror that Jonas feels when he realizes that his community is a hypocrisy, a society based on false ideals of goodness and conformity. As Jonas comes to understand the importance of memory, freedom, individuality, and even color, he can no longer stand by and watch the people in his community continue to live under such fraudulent pretenses."All utopias are dystopias. The term "dystopia" was coined by fools that believed a "utopia" can be functional."

— A.E. Samaan

Created by Universal Document Converter

Some Utopian And Dystopians Books

Plato, Republic : In a sense, the utopian genre might be said to begin with Plato's Republic, in which he sets out his ideal society (famously, no poets were allowed). The Republic sees Socrates debating with a number of other people about the nature of justice and the ideal city-state. The book also discusses various possible forms of government, discussing the advantages and disadvantages of each. "I am the wisest man alive, for I know one thing, and that is that I know nothing."

— Plato, The Republic

Sir Thomas More, Utopia : This 1516 work is the book that gave us the word 'utopia' - from the Greek meaning 'no-place', though with a pun on eu-topos, 'good place', implying that such an ideal society is too good to be true. More's island utopia has variously been interpreted as a sincere description of the perfect world and as a satirical work poking fun at the world's excessive idealists. Mind you, given that in Utopia adulterers are taken into slavery, and repeat offenders are executed, it makes you wonder whether More's Utopia isn't more dystopian than anything…"Nobody owns anything but everyone is rich - for what greater wealth can there be than cheerfulness, peace of mind, and freedom from anxiety?"

— Thomas More, Utopia

Margaret Cavendish, The Blazing World: Cavendish's work is frequently interested in the idea of utopia, such as the all-female University she imagines in The Female Academy and The Convent of Pleasure, in which a group of women remove themselves from society in order to devote themselves to a life of pleasure. But The Blazing World, published in 1666 when London was quite literally ablaze with the Great Fire, is her most representative utopian work, a fictional account of a young woman's fantastic voyage to an alternative world, which she accesses via the North Pole. Cavendish's looking-glass utopia anticipates the world of Lewis Carroll's Alice books in a number of startling ways.

Jonathan Swift, Gulliver's Travels : In this work of 1726, which was an immediate bestseller, Lemuel Gulliver actually visits four different fantasy worlds, but the one that's especially interesting here is the world of the Houyhnhnms, horses endowed with reason and speech, and a world in which humans are yobbish Yahoos flinging their muck around. Gulliver interprets the Houyhnhnms' society as a utopian world, though whether Swift is inviting us to agree, or to distance ourselves from Gulliver, remains a contentious point.

Samuel Butler, Erewhon: This hugely inventive 1872 satire by the author of the anti-Victorian novel The Way of All Flesh is perhaps more accurately described as 'anti-utopian', though it follows the utopian narrative structure. The fictional land of Erewhon - almost 'nowhere' backwards - is the setting for this novel. Among the things satirised by Butler in this book is the rise of the machines, which Butler argues will evolve at an ever-faster rate - along the lines of Darwinian evolution - until the machines eventually overtake humans.

The Dispossessed is a novel of anarchy and individualism, of utopias and paradise. Shevek travels to Urras despite the mild protest of many on his home planet of Anarres. When he arrives, Shevek is treated like a celebrity, but he finds the customs of Urras radically different from those he has known before.

The Voyage to Icaria (Voyage en Icarie) is a novel written by Étienne Cabet published in 1840. In this romance he described a communistic Utopia, whose terms he had dreamed out; and he began at once to try to realize his dream. He framed a constitution for an actual Icaria.

A Crystal Age is a utopian novel/ Dystopia written by W. H. Hudson, first published in 1887. The book has been called a "significant S-F milestone" and has been noted for its anticipation of the "modern ecological mysticism" that would evolve a century later. The book was first issued anonymously in 1887.

Modern utopian book is **James Hilton's Lost Horizon**. Four people survive a plane crash and are kidnapped. They are taken to the Tibetan mountains. A mysterious, Chinese man leads them to a monastery hidden in 'the valley of the blue moon"---a land of mystery and beauty where life is tranquil and beyond the troubles of the other world.

Childhood's End is a 1953 science fiction novel by the British author Arthur C. Clarke. The story follows the peaceful alien invasion of Earth by the mysterious Overlords, whose arrival begins decades of apparent utopia under indirect alien rule, at the cost of human identity and culture."Science is the only religion of mankind."

— Arthur C. Clarke, Childhood's End

Nineteen Eighty-Four (1984) by George Orwell: This novel is a critique of totalitarianism and the oppression of power. It's set in 1984 in an English society dominated by a system of "bureaucratic collectivism" controlled by Big Brother. Due its magnificent analysis of the power and the dependency it creates in the individuals, 1984 is one of the most disturbing novels of this century.

We (1921) by Yevgeni Zamiatin: We is a novel that even inspired George Orwell's 1984. Like the novels mentioned above, this one describes a world of harmony and conformity within a united totalitarian state.Zamiatin wrote the novel based on his experiences during the Russia Revolution. It's about a gloomy future in a city where the houses are made of glass (so that the police can better watch over citizens) and where there are no proper names; only file numbers and everything is oriented exclusively to efficiency in production

"A man is like a novel: until the very last page you

Created by Universal Document Converter

don't know how it will end. Otherwise it wouldn't even be worth reading."**— Yevgeny Zamyatin, We**

The Iron Heel (1908) by Jack London: Jack London wrote this novel to denounce the conformation of a cruel and bloody capitalist system that sows death and misery to the workers of the whole world; and especially the Americans in the second decade of the twentieth century.

Therefore, the novel describes the struggle over 400 years between the oligarchy (also known as Iron Heel) and the working class, as well as its eventual triumph, leading to a more egalitarian society.

The Handmaid's Tale (1985) by Margaret Atwood:

This is one of the most important works by the Canadian writer Margaret Atwood. It emphasizes social criticism and the treatment of women. The novel shows a society in which religion has become extremist and women are an object used to procreate children.

Women are divided between wives, aunts, marthas, and maids. Besides, society is controlled only by men and women have snatched everything, including their name. The protagonist's name, Offred, indicates she's property of commander Fred, with whom she has the duty to procreate a son.

"We were the people who were not in the papers. We lived in the blank white spaces at the edges of print. It gave us more freedom. We lived in the gaps between the stories." Margaret Atwood, **The Handmaid's Tale**

William Morris, News from Nowhere. Morris was a socialist whose 1890 utopian novel, set in the London of 2035, envisions a future world in which common ownership of the means of production has been achieved and Morris's socialist dream has come true. Morris wrote News from Nowhere partly in response to Bellamy's novel above.

Ursula Le Guin, The Dispossessed. Published in 1974 when the Cold War had become established as a leading theme of much speculative and science fiction, The Dispossessed is a utopian novel about two worlds: one essentially a 1970s United States replete with capitalism and greed, and the other an anarchist society where the concept of personal property is alien to the people. One of the finest examples of the utopian novel produced in the last fifty years.

Fahrenheit 451 (1953) by Ray Bradbury: the temperature at which book paper catches fire, and burns. This novel is about a society where thinking for oneself is forbidden. So the fire department has as mission to burn books because they are cause of discord and suffering and people who still keep and read them are persecuted. Like 1984 by George Orwell or Brave New World by Aldous Huxley, Fahrenheit 451 describes a Western civilization enslaved by the media, tranquilizers, and conformism.

The Children of Men (1992) by P.D. James: In a near future, humans have become totally infertile. No new human beings have been born since the so-called "Year Omega," which condemns humanity to disappearance in a few decades and eliminates hope for any better future. However, there is still a small group of resisters who don't share the disappointment of the masses. In this context Great Britain has become a totalitarian state governed by the so-called Warden of England.

A Clockwork Orange (1962) by Anthony Burgess: The novel tells the story of Alex and his three friends in a world of extreme cruelty and destruction. Alex has the main human attributes: love of aggression, love of language, love of beauty; but he is young and has not yet understood the true importance of freedom, which enjoys a violent way. Only when he falls into the same game of violence with the authorities, he seems capable of becoming a true human being.

"You were not put on this Earth just to get in touch with god" ***— Anthony Burgess, A Clockwork Orange***

The Giver (1993) by Lois Lowry : Lowry wrote this novel about a futuristic society that is presented, first, as a utopian society; but gradually it seems to be rather a dystopian. Society has eliminated pain and differences by turning to monotony and equality.

Jonas is a boy selected to be the "Receiver of Memory", the person who stores all the memories before Monotony. That's necessary in case the bosses need help to make decisions in which nobody has experience. But when Jonas receives the memories, he discovers how superficial is the life of his community; as well as the secrets that underlie the fragile perfection of his world.

"The worst part of holding the memories is not the pain. It's the loneliness of it. Memories need to be shared."? Lois Lowry, The Giver

Spinrad's short novel, Journals of the Plague Years, juxtaposes anxieties about disease with a repressive government crackdown. Told from multiple perspectives, the book frequently evokes the onset of the AIDS crisis, but magnified and transposed to a few years from now. Spinrad's dystopian visions are notable for showcasing what activism and resistance can really look like.

Dark Knight Returns is certainly a dystopia, but it's also a throwback to the real-life dystopia of Reagan-era America from which it emerged. With the help of Janson and Varley, the great comics auteur Frank Miller crafted a story about Batman returning to active duty in middle age, seeking to re-conquer a Gotham that looks suspiciously like Times Square circa 1985, writ large. A Reagan stand-in is the POTUS, Superman is his stooge, war is imminent, and all the classic baddies from the rogues' gallery have come out to rule the streets again. The dystopian aspects of the story are

Created by Universal Document Converter

deliberately over the top: talk shows fawning over serial killers, street gangs dressed like Johnny Rotten in a German porno, televised talking heads grinning through the madness, and so on. But that's what makes it a fun read and not just the grim-and-gritty self-parody that many of its imitators went on to become.

The utopian literature has four major qualities.(1) The society was have equality (2)The society has to be a working communal society.(3) There must be a council or some kind of group who works for the good of the society.(4) There must be a message of hope.

The qualities of a dystopian literary work might include these traits. (1) A government body, military force, or evil leader is in place in society. (2) There is inequality among the citizens and a class system that is followed. (3) Society is segregated and oppressed. (4) The underlying message promotes desperation and a feeling of doom.

Conclusion

"A map of the world that does not include Utopia is not worth even glancing at, for it leaves out the one country at which Humanity is always landing. And when Humanity lands there, it looks out, and, seeing a better country, sets sail. Progress is the realization of Utopias."

— Oscar Wilde, The Soul of Man Under Socialism.

"We can only know what we can truly imagine. Finally what we see comes from ourselves." **— Marge Percy.**

In our modern environment, works of fiction that are focused on the futuristic visions of dark dystopias are common and widespread. These visions of futuristic worlds produced some of the most famous novels, movies, comics and music of our time. Numerous philosophers and authors imagined the dark visions of the future where totalitarian rulers governed the life of ordinary citizens. Their works explored many themes of dystopian societies - repressive social control systems, government coercion of citizens, influence of technology on human mind, coping mechanisms, individuality, freedom of life and speech, censorship, sexual repression, class distinctions, artificial life and human interaction with the nature (and often the consequences of its destruction). Thus where utopia is an imagined community or society that possesses highly desirable or nearly perfect qualities. Dystopia is the vision of a bleak future.

To conclude, we can say that through dystopia, authors express their concerns about issues of humanity and society and warn the people about their weaknesses. Authors use dystopia as a literary technique to discuss the reality and depict issues that might happen in future. Thus the role of dystopia in literary works is to educate and give awareness to the audience in 'a however' negative way. Dystopias also serve as warnings about the current state of affairs of a government, or of those in power. In a dystopia, authors point out the wrong doings in a society or a system - the reason that it is often called a critique.

"A pretty face may be enough to catch a man, but it takes character and good nature to hold him."

— Thomas More, Utopia

"Isn't all politics about revenge, mostly?"

"No, it's about doing good."

"But your good is my bad. Your utopia is my dystopia."

— Gordon Jack

References:

1. https://www.cliffsnotes.com/literature/g/the-giver/critical-essays/what-are-utopias-and-dystopias
2. https://en.wikipedia.org/wiki/Utopia
3. https://en.wikipedia.org/wiki/List_of_utopian_literature
4. https://bookstr.com/list/13-quotes-from-dystopian-novels-to-get-you-fired-up/
5. http://emokymasis.weebly.com/tinklarascarontis/what-is-the-difference-between-utopia-and-dystopia
6. https://www.enotes.com/homework-help/what-difference-between-utopias-dystopias-443253
7. Orwell George,1949, Nineteen Eighty-Four (1984), Secker & Warburg
8. Swift Jonathan,1726, Gulliver's Travels, Benjamin Motte
9. Bradbury Ray,1953, Fahrenheit 451, Ballantine
10. Zamiatin Yevgeni, 1924, E.P. Dutton
11. Lowry Lois,1993, The Giver, Houghton Mifflin Harcourt
12. James P.D.,1992, The Children of Men, Faber and Faber
13. Pandey Pushpa, Teacher, Feb 27, 2020

Ish Kumar
Assistant Professor
Shambhu Dayal College of Education
Sonepat(131001)
Haryana
Contact no. 9896699899, 8607188877
E-mail: ish.johar@gmail.com

H.N. 199-R, Model Town
Sonipat(131001)
Haryana

Created by Universal Document Converter

Job Satisfaction and Performance of Management academic Colleges- Bhiwaniin Haryana : A Study

Jitender Kumar, Dr.Dharmpal, Dr Ramchander

Abstract : Data collected from the respondent as per our convenience and comfort. Finally data collected from 80 teaching staff from 20 management colleges in Bhiwani and TIT Bhiwani. From which 60 respondents belong to colleges based in Bhiwani and 16 respondents from colleges based in TIT Bhiwani.

Teachers are verbal, introspective, collaborative, instructional. Learning is successful if an effective teacher is present. If an effective teacher was missing, an effective syllabus and best curriculum are useless. The teaching quality depends not only on the teacher's expertise, but also on how confident he is with the profession. There are various external factors responsible for the comfort. The maker of teachers for social and economic growth is not happy at the moment. As a result, there is a lack of talent in the profession. In this research study, we highlight the different dimensions of jobsatisfaction, the effect of different dimensions on the job satisfaction level of management college teachers and their performance level. We used statistical technique such as correlation weighted arithmetic mean test and multiple regression analysis for data analysis in this study.

Key words; Teacher, Job Satisfaction, Weighted Arithmetic Mean (WAM), Multiple Regression,Performance.

INTRODUCTION

1.1. Job Satisfaction

Job satifaction simply means a person's content with his or her job. Simply put, job satisfaction is nothing other than the extent or degree to which you like or dislike the job. Job satisfaction can be emotional job satisfaction and cognitive job satisfaction. Affective job satisfaction category is related to one's pleasurable emotional feelings towards the job. Whereas cognitive job satisfaction is related to various aspects of work, such as pay, working hours, promotion, career development, pension agreements and many other aspects of work. Nonetheless, academics and professionals working in human resources typically differentiate between affective job satisfaction and mental job satisfaction. Job Satisfaction enjoys one's job and finds satisfaction in what you're doing. This incorporates the feeling and emotion of an entity about their work and how it affects their personal lines. Job satisfaction is therefore such a phenomenonthat depends not onlyon the jobor organization, but also on the personal, social, emotional, educational and economic situation of the individual.Job is a professional act performed by an individual in return for a reward. Satisfaction refers to the way in which one feels about events, rewards, people, relationship, and a great deal of mental pleasure at work. Job satisfaction is also an emotional response to a job situation that can not be seen, is simply inferred and simply how people feel about their work and the different aspects of it. Job satisfaction and job attitudes are alternate terms and are usually used interchangeably. They both refer to the individual's affective orientation towards the work roles that they are currently occupying. Positive attitudes towards work are conceptually equivalent to job satisfaction, and negative attitudes towards work are conceptually equivalent to job dissatisfaction. Job satisfaction is governed, to a large extent, by the perception and expectations of the workforce. Any discrepancy between aspirations and perceptions is a cause of dissatisfaction. Besides wealth, work also provides a person with many other things, such as a sense of doing something worthwhile, a sense of having some goals in life, and a certain status in society.

1.2. Job Satisfaction and Performance

Job performance is described as how the job is essential to the employee and how the employee has mastered the important skill required for the job if the employees have the authority to determine how their work should be done. In other words, job performance is the perceived activities people do in their employment that are important to the organization's goals. A correlation between job satisfaction and productivity is found from the literature review and report research.

1.3. Management Education in Bhiwani

The national knowledge commission set up in the year 2005 recommends certain reforms in the higher education, particularly education in the field of management. As per the report of working group onmanagement education there are over 1600 management colleges in the country. Out of which 68 colleges are belongs to the Bhiwani, which is near about 14% of total colleges. Bhiwanileading with the figure jointly with the state Haryana.The Technological Insitute of Textile & Science , Bhiwaniand name a few are operating in the state.

REVIEW OF LITERATURE

Sharad Kumar and SabitaPattnaik (2002). The study reveals that there is a difference between teaching staff in job satisfaction. Sex is the essential cause of that difference. Nwachukwu Prince

Oloube (2007) A research on Nigerian teachers ' job satisfaction found that male teachers are more unhappy with their career than female teachers. As a result, male teacher turnover is very high. A research study on job satisfaction of post graduation teachers was done.

Pronay (2011) Report on job satisfaction by Bangladesh's non-governmental colleges reveals that most teachers are unhappy with vague promotion policies and

Created by Universal Document Converter

payment systems. Good working conditions, employment and job performance are the factors that pleased them.

Rajkatoch (2012). The degree to which one feels good about the work indicates job satisfaction. Good wages, work environment, career as per academic training, preferred occupation, job security and fringe benefits are the major components of job satisfaction. The study concluded that women teachers are more happy than men.

OBJECTIVES OF THE STUDY

1. To research the relationship between success and job satisfaction.
2. Determine the effect of aspects of job satisfaction on job satisfaction

RESEARCH METHODOLOGY

Through correctly formulating research methodology, the solution to the scientific problem or study issue can be found. Methodology of research is nothing but systematic observation or otherwise obtaining as part of the research study data, facts or information. For this article, the research design is descriptive in nature. Only primary data collected by questionnaire were used. We used convincing sampling approach in the research study. Data collected from the respondent as per our convenience and comfort. Finally data collected from 80 teaching staff from 20 management colleges in Bhiwani and TIT Bhiwani. From which 60 respondents belong to colleges based in Bhiwani and 16 respondents from colleges based in TIT Bhiwani.

Tools and technique:-A statistical method such as Weighted Arithmetic Mean (WAM) correlation test and regression analysis was used to fulfill the research purpose of this study.

DIMENSIONS OF JOB SATISFACTION

Job satisfaction can be described as a physical state of mind reflecting an effective response to the situation at work and life.Typically important aspects of job satisfaction include salary, work environment, promotion process, career development scheme, co-workers, supervision and retirement benefits and a few titles.

Figure 1.1 reflects different dimensions of job satisfaction for teachers in management

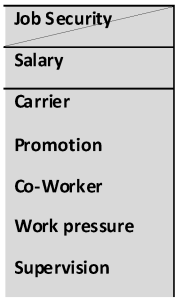

Job Satisfaction Performance

DATA ANALYSIS AND INTERPRETATION

Sr. No	Performance	Job Satisfaction of level			Total	WAM
		High	Medium	Low		
1	Averge	07(16.27)	11(25.58)	25(58.13)	43	18.52
2	Good	4(21.05)	5(26.31)	10(52.63)	19	7.42
3	VERY GOOD	5(35.71)	3(21.42)	6(42.85)	14	4.99
	Total	16	19	41	100	

Table-A: level of job satisfaction and performance of management teachers.
Note: Figures in the parentheses are the percentages.

Weighted Arithmetic Mean (WAM)

This is clear from the table that the majority of respondents are very good at 57.13 per cent high / medium with the relationship between management and library staff. A large majority of respondents, with an average of 41.85 per cent, believed that their work and knowledge was valued by the high / medium top management. A majority of the respondents good 47.36%) were high/medium agreed that new ideas, rather than other staff members. In the Table that majority of the responents very Good 35.71% job satisfaction high level and Performance very good medium level 21.42% and very good low level 42.85%. job satisfaction level good respondents high level 21.05% Medium level 26.31% and low level 52.63%. Job satisfaction averge high performance 16.27% medium level 25.58% and low level 58.13%.A total majority of respondentsavergePerformance (n=43, 18.5 per cent). A total majourity respondents good Performance (n=19,7.42%) and respondents very good Performance (n=14, 4.99%).

CONCLUSION

In the last 15 years, there has been a dramatic movement in the management of education with its growing demand. The management experts overpower others in choice-making skills with their idealized ambition. Although the level of job satisfaction of these gurus is very much affected by the work force and wage package. Varying from the traditional teaching management system, teachers rely on realistic or corporate research approach, which requires them to work hard. Working hard with the production of future corporate leaders, they are not financially compensated for what they deserve. This has become one of the great strengths or dimensions of job satisfaction. Which has an indirect influence on management teacher performance. The important

Created by Universal Document Converter

factor is workplace health. It is also found from study that teachers at private college are afraid of job losses.

REFERENCES

1. Kumar,S. and Patnaik,S.(2002).A Study of Organisational Commitment ,attitude towards work and job satisfaction of post graduate teachers of goa. Journal of Education Reasearch and Extension.
2. Ngimbudzi,W. (2009).Job Satisfaction Among Secondary Scool Teachers in Tanzania:A case Study of Njombe District. Master Thesis of Education. University of Jyvaskyla
3. Desmukh,V.etal(2011).A Comparative Study of Performance Measurement in Selected Professional Management Institution:A Case Study of KaradCity.International Journal of Enterprise Computing and Business Sysytems.
4. Pronay,B. (2011).Job Satisfaction of Non-Government College Teachers in Bangladesh.Journal of Education and Practice.
5. Rajkatoch,O.(2012).Job Satisfaction Among College Teachers:A Study on Government College Teachers in Jammu. Asian Journal of Research in Social Sciences & Humanities. 4(2),164-180
6. 2(1).http://www.ijecbs.com
7. www.cblu.ac.in

Jitender Kumar,
Research Scholar
Dept.Library I. Science
Singhania University
Pacheri Bari(Raj)

Dr.Dharmpal
Librarian
Research Guide
Singhania University
Pacheri Bari(Raj)

Dr Ramchander
Librarian
Co-Guide
Aggarwal College
Ballabhgarh(Faridabad)

Created by Universal Document Converter

Abstract : The issue of Union Territory status has been very much on the agenda of BJP manifesto. In a historic decision, the Central Government has bifurcated the Jammu & Kashmir state into two Union Territories viz, UT Jammu & Kashmir and UT Ladakh through Jammu and Kashmir Reorganization Act, 2019. As such UT is a new experiment which may pose many challenges but may offer many opportunities in equal parts. This paper is an attempt to understand the challenges and opportunities amidst sudden political transformation.

Key words: Ladakh, Union Territory, Sixth Schedule, Kargil.

Political background

Historically speaking, Ladakh was an independent kingdom for a long time (A.D. 950-1842). However, it was only during fifteenth and sixteenth century that Ladakh as an independent Kingdom gained political status when Namgail dynasty came into power. The reign of Namgail dynasty lasted until 1842, when a Dogra General Zorawar Singh annexed Ladakh into the Dogra Empire of Jammu. Historian D.N. Dhar sums up the Dogra period in these words "Dogra rule in Kashmir and Ladakh presents a unique basket of the worst form of feudal exploitation, seeds of modernism and the birth of people's revolt against economic exploitation."

Post-Independence: Evolution of UT Demand

The politics of post-independence Ladakh has had many ups and downs, and has inevitably been influenced by the recurrent troubles in neighbouring Kahsmir, with which it remains constitutionally yoked in the state of Jammu and Kashmir. When Maharaja Hari Singh had decided to go under Indian dominion, Ladakh's Young Men Buddhist Association also made their stand clear on behalf of Ladakh (Behera, 2000). Given the bitter experiences which they have had under the Dogra regime, their growing apprehensions for future were communicated by the Association through a memorandum. However, the Maharaja's inability to reply due to sudden development in the state made them obfuscated. Though in the wake of Kashmir incursion the Ladakhis somehow reconciled to their ties with Kashmir, but they disgruntled with the prevailing state of affairs, and they, therefore, desired to have direct links with the centre (Samphel, 2000). Thereafter, from time to time, the separation of Ladakh from Jammu and Kashmir came up before the Government of India. LBA has launched a violent agitation for UT status in 1989 which resulted into the formation of Hill Council in Leh while Kargil took up the same in 2003. However, the Council was not able to reach the expectations of the masses and the UT movement has been continued by all the local political parties irrespective of party ideologies. After, decades of political agitation, UT has become a reality particularly for Leh because Kargil has not supported it for many reasons.

UT Ladakh: Challenges and Opportunities

UT for Ladakh has been a long standing demand and a distant dream of Ladakhis since the accession of Jammu and Kashmir State with the Indian Union. The Central Government has bifurcated the Jammu & Kashmir state into two Union Territories viz, UT Jammu & Kashmir and UT Ladakh through Jammu and Kashmir Reorganization Act, 2019 (Stawa, 2019).

Since the declaration of UT for Ladakh, people from all walks of life have floated many questions about the pros and cons of the UT as it has come all of a sudden. The same has invited a lot of hue and cry especially from Kargil district as they have many apprehensions and reservations about the same because it is believed and claimed that UT has always been a Leh centric demand spearheaded by Ladakh Buddhist Association (Stawa, 2019). There is a great misunderstanding and communication gap between the people of Leh and Kargil which has often proved detrimental to the relationship of the duo and resulted into trust deficit. If we trace back the history of Ladakh, people of both the regions have always shared a common civilization, language, culture, traditions and even pains and pleasures. People of Kargil including the educated youth seemed to have succumbed to some sycophants and pity politics. However, they strongly needed to look forward with long term vision and policy by side-lining the political myopic. The leaders of Kargil who are chanting anti-UT slogan must also take some pause to ponder before moving ahead in any direction without having any blueprint to embark on. They really needed to accept the fact that the people of Leh as well as Kargil have always suffered in one way or the other which is a bitter truth. When Ladakh was granted Autonomous Hill Council in 1995, Kargilis were sceptical and declined the formation of Hill Council in Kargil as a mark of their resentment against such move because the people of Kargil in general and their leaders in particular did not fully support the centripetal forces of Ladakh. Ironically, they have often tried to defend and consolidate their interests with Kashmir on the basis of religious affinity leaving behind the age old shared civilisation. But, significantly, with the advancement of time and situation they have realised the implications of Hill Council which prompted them to establish the same in 2003. This time again they are repeating the same mistake despite knowing the fact that UT for Ladakh

Created by Universal Document Converter

seems to be the only panacea to be materialised given the present context of political turmoil in the Valley, under which the Ladakhis have also suffered by default.

Moreover, there is no such negative risk to Kargilis which is being presumed and believed to become a scapegoat under UT Ladakh as they have their own Autonomous Hill Council to serve and safeguard their interests. It is pertinent to mention that the LAHDC Act, 1995 also envisages the provision for establishment of Regional Council to advice on common interests of both the districts (Government of India, Gazette, 1995). But for utter dismay, it has not been constituted yet. The formation of Regional Council will further boost the ties and pave the way to resolve the internecine strife.

Ladakh is now a UT which necessitates all the stakeholders from both the districts to join hands together and sit on a round table to discuss and deliberate upon the issues which they have been facing and are going to face in the near future. Though, of course, Ladakhis are going to give up some of the special privileges which they have had in the erstwhile state but there are many wholesome things to find and explore for their advantage. The first and foremost which people should concern is the constitutional safeguards of aboriginal rights and primordial identities which are the hallmark and backbone of our peculiar society.

Ladakh has been granted Scheduled Tribe status in 1989 through Jammu and Kashmir Scheduled Tribe Order, 1989. Subsequently, Ladakh has also been given an Autonomous Hill Council on the basis of Darjeeling Gorkha Hill Council rather than the Hill Councils which fall under the VI Schedule of Indian Constitution. Though, Ladakh has been recognised as a distinct region with geographical isolation, culture, language and script in LAHDC Act, 1995 (Government of India, Gazette, 1995). However, both of these moves do not ensure such guarantees to the distinctiveness, as Ladakh has neither been declared Scheduled Area under V schedule nor been incorporated in the VI Schedule which envisages and guarantees constitutional safeguards to the Tribal population of India, who have not been able to assimilate with the mainstream and remained neglected and marginalised through the ages (Basu, 2002).

Ladakh is the only UT with an Autonomous Hill Council but without Legislature. Locating into the current context of myth and mistrust, distress and disagreement among the people and between the leaders of two districts, the UT Ladakh without Legislature seems more reliable and having high relevancy. Having legislature will obviously boost the electoral competition with allegations and counter allegations between Leh and Kargil which might turn into communal politics. The same argument was also put forth by the former MLC Tsering Dorjay in his recent interview. To argue more, the MP election in Ladakh has always been a bone of contention between the two districts. Moreover, it becomes a contest between Buddhists vs. Muslims. As such UT is a new experiment which may pose many challenges to Ladakhis and the same needs to be set in motion with great maturity, statesmanship and farsightedness. Moreover, the national interest of India demands the timely execution of the same. The urgency of streamlining the administration of Ladakh region is also underlined due to its geo-strategic location as the region is bounded by two International Borders of China and Pakistan.

The way forward

Keeping in view the above facts and larger interests of the region, all the stakeholders must strive to have a healthy and thoughtful negotiation. The actual need of the hour is to rise above the party politics and religious affiliation so as to give a unified fight to impress upon the Government of India for inclusion of Ladakh in the VI schedule of the Constitution which shall empower the Hill Council with Legislative, Executive, Financial and Judicial powers. The empowerment of the existing Council with legislative powers in the lines of VI schedule shall enable the Council to safeguard the major interests consisting of the allotment and acquisition of Land, employment, protection of aboriginal rights, customary laws and many more. The V and VI Schedules are the special administrative machinery perceived to be the heart and soul of the Tribal communities in India who are having unparalleled uniqueness in every facets of life. Although insignificant in the politics of Jammu and Kashmir, Ladakh constitutes two-third of the territory and three per cent of its population. But having been treated just as a 'district' Ladakhis could not assimilate with the mainstream in the state which drove them towards the Centre.

Conclusion

Given the geo-strategic importance of the region, Ladakh deserves to be administered as a Special Areawith strong measure of constitutional safeguards. Furthermore, an economically developed Ladakh with a vibrant grass-root democracy is the best defence against any future Chinese hostility. Hence, the saying goes that Necessity is the Mother of Invention; it is high time for Ladakhis especially the leaders and policy makers to search and research all those modalities which might directly help to erect a constructive foundation of UT in the political history of Ladakh. Ultimately, all is going to travel in the same ship of UT and miles to go...!

References

1. Basu, D.D. (2002). Introduction to the Constitution of India. New Delhi: Wadhwa and Company Law Publishers.
2. Beek, M.V. (2000). Beyond Identity fetishism: Communal Conflict in Ladakh and the Limits of Autonomy. Cultural Anthropology, 15 (4), 525-569.
3. Behera, N. C. (2000). State, Identity and Violence: Jammu, Kashmir and Ladakh. Delhi: Manohar Publishers.

Created by Universal Document Converter

4. Chhorol, K. (2019, December 16-31). Sixth schedule a must for Ladakh. Reach Ladakh Bulletin, 7 (23), p. 5.
5. Cunningham, A. (1997). Ladakh: Physical, Statistical, Historical. Srinagar: Gulshan Publishers.
6. Dasal, S. (2019, December 1-15). Sixth schedule for Ladakh: What do they say about it? Reach Ladakh Bulletin, 7 (22), p. 4.
7. Government of India. (1995), Ladakh Autonomous Hill Development Council Act, 1995.
8. Jammu and Kashmir Reorganisation Act. (2019). Gazette of India. Retrieved from www.google.egazette.nic.in
9. Jina, P.S. (2006). Ladakh Himalaya Past and Present. New Delhi: Anmol Publications Pvt. Ltd.
10. Kak, B.L. (1978). Chasing Shadows in Ladakh. New Delhi: Light & Life Publishers.
11. Kaul & Kaul. (1992). Ladakh through the Ages: Towards a New Identity, New Delhi: Indus Publishing Company.
12. Lundup, T., &Fazily. M. (2019, November). Contrasting responses greet the birth of Ladakh UT. Stawa, 6 (11), pp. 6-9. (Stawa 'Perspective'-- a local Magazine publishing from Leh-Ladakh since 2014).
13. Madhok, B. (1987). Jammu, Kashmir and Ladakh-- Problem and Solution. New Delhi: Reliance Publishing House.
14. Samphel. T. (2000). Why Union Territory status for Ladakh? Memorandum to Members of Parliament. New Delhi: Ladakh Buddhist Association.
15. Stobdan, P. (1995, May). Mishandling Ladakh may prove Costly. LadagsMelong, 1, p.7.

Konchok Chhorol
Assistant Professor
Political Science
Department of Higher Education (Ladakh) UT
Pin Code: 194101
E-mail ID: kchocho2008@gmail.com
9419115383

Created by Universal Document Converter

Academic Stress of Senior Secondary School Students in relation to their Locus of Control

Jitender Kumar, Seema Chandna

Abstract : Stress is certainly a huge word with even bigger effect, though this can be dispensed with small alterations that we take along in our everyday life. Students of Senior Secondary School feel stress due to academic pressure, competition etc. It is essential to identify the cause of the stress, so that it can be addressed precisely and efficient interferences can be outlined. This research paper is an attempt to find out the relation of academic stress and Locus of Control of Senior Secondary school students. A Sample of 400 students of four districts namely Rohtak, Jhajjar, Bhiwani and Sonipat of Haryana State was selected randomly. From each district, two Govt. and two Private Schools were taken. The sample was administered through Academic Stress Scale by Seema Rani and Basant Bahadur Singh and Locus of Control Scale by Hasnain and Joshi.Mean, Standard Deviation (S.D) and t-value were used for analysis and interpretation of the data. The findings of the study revealed that there is no significant difference between Academic Stress and Locus of Control.

Key Words: Academic Stress and Locus of Control

INTRODUCTION

Education is a process to enlighten human for the attainment of leading quality life. It is a man making process to facilitate learning that accelerates the holistic development ofbody, mind and soul. Education, in its general sense, is a sort of learning that assists in transferring information, dexterity, habitsand accumulated experiences of a group of people from generation to generation through didacticism, training, teaching and investigation process. It provides the right- type of attitudes, values, adequate knowledge and essential skills. It is considered as both developer and depository of knowledge. In this era of knowledge, societal transformation and wealth generation are possible only through the process of education. In every society education means life both for individual as well as teachers. Academic stress is defined as the anxiety and stress that comes from schooling and education which impose extra academic workload (Awino J. O & Agolla J. E., 2008) upon students beyond their capacities and capabilities like- over expectations of parents, teachers, inadequate study facilities at school or home, inadequate teaching methods and lack of supportive environment etc. (Sonali, 2016). The high expectation of parents for their children to achieve higher grades and to perform better, is becoming a big burden which is unbearable for them to carry out anymore (Deb. et al., 2015). People who tend to see that all the things that happen to them as primarily under their control, such people are referred as internals. Their perceived locus of control is internal or within themselves. In contrast, other persons may tend to see their achievements as largely outside their own control. They believe that events are controlled by several other factors such as luck, chance and help by teacher, friends or relatives. Such people have external locus of control and referred as externals. Pascoe, M. C., Hetrick, S. E., & Parker, A.G. (2020)studied "the impact of Stress on Secondary School and Higher Education. A snowball strategy was used. The study concluded that academic related stress is a major concern for Secondary and tertiary students. The stress has negative impact on students learning capacity, academic performance, education and employment attainment, sleep quality and quantity, physical health, mental health and substance use outcomes. So, there is a need to adopt stress management skills". Singh and Kour (2019) found thatthere is a correlation between achievement motivation and academic achievement motivation but not at very significant level and locus of control do not have any significant correlation with academic achievement motivation and achievement motivation. Halder, U. and Alum, K. (2018) studied on the topic "Academic Stress and Academic Performance among Higher Secondary Students: A Gender Analysis and explored the significant difference in academic stress due to the gender of the students of class XI". Naik, A. R. (2015) conducted a study to focus on locus of control and difference in it among different variables such as gender, course of study (arts and science) and locality. The results could not find significant differences on locus of control among males & females, Science and Arts and Urban & Rural students. Rinn and Boazman (2014) indicated that locus of control do not significantly predict academic dishonesty for the non-honors group but several relationships were found among variables for the aggregate group and for the honors and non-honors groups.

Stress

Stress is a perception of emotional or physical tension. There are number of incidents in a person's life that leads to negative emotions like anger, frustration and nervousness that further develops stress in an individual. Stress is the body's reaction to challenge or demand. It can be positive at times; however prolonged stress can lead to severe health conditions.

Academic Stress

Academic stress is defined as the anxiety and stress that comes from schooling and education which impose extra academic workload on students beyond their capacities and capabilities like- over expectation of parents, teacher, inadequate study facilities at school or home, wrong teaching method, lack of supportive environment etc.

Created by Universal Document Converter

"Academic Stress is a mental distress with respect to some anticipated frustration associated with academic failure or even awareness of the possibility of such failure" (Gupta and Khan, 1987).

Locus of Control

The concept "Locus of Control" was first developed by Julian B. Rotter. According to Rotter, it refers to a personality dimension that helps explain one's behavior.

Persons with internal locus of control consider that the results of their activities are the outcome of their personal abilities. Internals rely on that their tough efforts would lead them to achieve progressive outcomes. However, persons with an external locus of control tend to believe that the things which happen in their lives are out of their control and even that their own actions are a result of external factors, such as fate, luck, the influence of powerful others.

April et al., 2012:- "Locus of Controlrefers to the individuals' belief about controllability over what happens to them in life, it is defined as a personality trait or construct that reveals how individuals perceive their ability to control life events or environment. This belief can be characterized as one continuum on which two extremes can be recognized: internal locus of control and external locus of control."

INTERNAL VS. EXTERNAL LOCUS OF CONTROL

People who tend to see that all the things that happen to them as primarily under their control, such people are referred as internals. Their perceived locus of control is internal or within themselves. In contrast, other persons may tend to see their achievements as largely outside their own control. They believe that events are controlled by several other factors such as luck, chance and help by teacher, friends or relatives. Such people have external locus of control and referred as externals.

OBJECTIVES OF THE STUDY

1. To Study and Compare Externally Controlled and Internally Controlled Senior Secondary School Students on Academic Stress.
2. To Study and Compare Male Externally Controlled and Male Internally Controlled Senior Secondary School Students on Academic Stress.
3. To Study and Compare Female Externally Controlled and Female Internally Controlled Senior Secondary School Students on Academic Stress.
4. To Study and Compare Urban Externally Controlled and Urban Internally Controlled Senior Secondary School Students on Academic Stress.
5. To Study and Compare Rural Externally Controlled and Rural Internally Controlled Senior Secondary School Students on Academic Stress.

HYPOTHESES OF THE STUDY

1. There is no significant difference between Externally Controlled and Internally Controlled Senior Secondary School Students on Academic Stress.
2. There is no significant difference between Male Externally Controlled and Male Internally Controlled Senior Secondary School Students on Academic Stress.
3. There is no significant difference between Female Externally Controlled and Female Internally Controlled Senior Secondary School Students on Academic Stress.
4. There is no significant difference between Urban Externally Controlled and Urban Internally Controlled Senior Secondary School Students on Academic Stress.
5. There is no significant difference between Rural Externally Controlled and Rural Internally Controlled Senior Secondary School Students on Academic Stress.

METHODOLOGY

In the present study, the descriptive survey method was used to investigate Academic Stress of Senior Secondary School Students in relation to their Locus of Control.

SAMPLE

The sample was taken from four districts of Haryana State i.e. Rohtak, Jhajjar, Sonipat and Bhiwani. From each district, four schools were selected using random sampling technique. A sample of 100 students from each district was randomly selected making a total sample of 400 students. The sample of 400 students was equally divided into gender and locality.

TOOLS USED

Standardized Tests

Stress Inventory for School Studentsby (Seema Rani & Basant Bahadur Singh, 2008) Locus of Control Scaleby (Hasnain & Joshi, 1992)

OPERATIONAL DEFINITIONS OF KEYWORDS

Academic Stress

Academic Stress is a state of organism which is due to academic frustration, conflicts, pressure, and anxiety.

Locus of Control

"An extent to which people perceive their lives as internally controlled by their own efforts and actions or as externally controlled by chance or outside efforts."

DELIMITATIONS OF THE STUDY

✧ The study was confined to Senior Secondary Students only.

✧ Only Academic Stress was taken as dependent variable.

✧ The study was delimited to two variables only: Academic Stress and Locus of Control

✧ Sample of the study was delimited to 400 only. It

Created by Universal Document Converter

was drawn from four districts i.e. Rohtak, Jhajjar, Bhiwani and Sonipat districts of Haryana State.

✧ Descriptive statistics i.e. Mean, Standard Deviation, Standard Error of Mean and inferential statistics t-test was computed with the help of SPSS and all results were delimited accordingly.

VARIABLES USED

I. Dependent Variable: Academic Stress

II. Independent Variable: Locus of Control

STATISTICAL TECHNIQUES USED

The investigator used t-test to show the significant difference between various groups of independent variable.

DATA ANALYSIS AND INTERPRETATION

Table 1

Internally Controlled and Externally Controlled Senior Secondary School Students Means, SDs, SEMs & 't' value on Academic Stress

Variable	Locus of Control	N	Mean	S.D.	SEM	df	't' value	Level of Significance
Academic Stress	External	200	108.90	19.03	1.34	398	0.042	Non-Significant
	Internal	200	109.10	19.20	1.36			
	Male External	100	107.41	21.75	2.17	198	0.37	Non-Significant
	Male Internal	100	108.52	20.65	2.06			
	Female External	100	117.11	15.70	1.57	198	0.57	Non-Significant
	Female Internal	100	115.74	17.90	1.79			
	Urban External	166	109.30	19.30	1.89	198	0.52	Non-Significant
	Urban Internal	34	107.40	19.20	3.29			
	Rural External	88	109.30	17.20	1.83	198	0.30	Non-Significant
	Rural Internal	112	109.40	20.40	1.94			

The table 1 shows that on Academic Stress the value of 't' is equal to .042 not significant. So, the hypothesis H1 (a) i.e. "There is no significant difference between Externally Controlled and Internally Controlled Secondary Senior Secondary School Students on Academic Stress", is retained. Further, by observing the mean score, one can say that the mean score of Externally Controlled Sr. Secondary School students (M=108.90) is lower than the Mean Score ofInternally Controlled Senior Secondary School students (M=109.10), it indicates that externally controlled students have more academic stress than internally controlled but 't' value shows no significant difference between them. It means that both the groups of students experience same stress. It implies that there is no effect of Locus of Control on Academic Stress. This result is in concordance with study of Uma & Manikandan (2013) as they also found that Locus of Control don't show any effect on academic stress. It can be interpreted that both locus of control groups experiences same academic stress. Male Students:The above table 1 reveals that the Mean Score of Male Externally Controlled Sr. Sec. School Students (M=107.41) is lower than the mean score of Male Internally Controlled Sr. Secondary School students (M=108.52) on academic stress score, it means externally controlled male students have less stress than internally controlled male students but this difference is not significant as the value of 't' is 0.37, which is non-significant. It indicates that both the groups of male students are similar on academic stress. The hypothesis H1(b) i.e. "There is no significant difference between Male Externally Controlled and Male Internally Controlled Senior Secondary School Students on Academic Stress", is retained. It can be interpreted that both locus of control male groups have moderate but similar academic stress.

Female Students : It can be inferred from the table 1 that the Mean Score of Female Internally Controlled Sr. Secondary School students (M=117.11) is higher than the mean score of Female Externally Controlled Senior Secondary School students (M= 115.74), it means the stress of Female internally controlled students is more than Female externally controlled but calculated 't' value is 0.57, which is not significant. It implies that the difference in both the groups of Female students is not significant. It means that both the groups of female students are similar on academic stress pertaining to equal involvement in stress. The hypothesis that "There is no significant difference between Female Externally Controlled and Female Internally Controlled Senior Secondary School Students on Academic Stress", is retained.

Urban Students : The study of the scores from the table 1 reveals that there is no significant difference between Urban Externally and Urban Internally Controlled Senior Secondary School students on academic stress as the mean score of Urban Internally Controlled Sr. Secondary School students (M=107.4) is significantly lower than the mean score of Urban Externally Controlled Sr. Secondary School students (M=109.3), 't' value is 0.52, which is not significant. So, the hypothesis i.e., "There is no significant difference between Urban Externally Controlled and Urban Internally Controlled Senior Secondary School Students on Academic Stress", is retained. It can be interpreted that Urban students for both locus of control groups have same experiences of academic stress.

Rural Students : The table 1 shows that the mean score of Rural externally Controlled Senior Secondary School Students (M=109.3) is lower than the mean score of Rural Internally Controlled Senior Secondary School Students (M=109.4), 't' value is 0.30 which is not significant at any level. It indicates the similarity of both the groups of rural students on Academic Stress. So, the hypothesis "There is

Created by Universal Document Converter

no significant difference between Rural Externally Controlled and Rural Internally Controlled Senior Secondary School Students on Academic Stress", is retained. It can be interpreted that rural students for both locus of control groups have same academic stress.

CONCLUSION

No significant difference has been found between Externally Controlled and Internally Controlled students on Academic Stress. So, both the groups experience same academic stress.The family and school environment should be congenial and the learning process should be made pleasurable and parents should avoid making it a stressful. Finally, supportive and stimulating atmosphere is very necessary for the students to progress in their academic life and to achieve their goal.

REFERENCES

1. Abouserie, R. (1994). Sources and levels of stress in relation to locus of control and selfesteem in university students. Educational Psychology, 14(3), 323-330.
2. Agrawal, R. K & Chahar, S. S. (2007). Examining Role Stress among Technical Students in India. Social Psychology of Education, 10(1), 77-91.
3. April, K. A., Dharani, B., & Peters, K. (2012). Impact of Locus of Control Expectancy on Level of Well-Being. Review of European Studies Vol. 4, No. 2. 124 - 137.doi:10.5539/res.v4n2p124.
4. Awino, J. O & Agolla, J. E. (2008).A quest for sustainable quality assurance measurement for universities: case of study of the University of Botswana. Res. Rev., 3(6), 213-218.
5. Behera, P. (2008).A Study of Socio-economic Status, Locus of Control and Personality Adjustment of High School Students. Journal of Educational Research and Extension, 23 (1), 9-15.
6. Burger, J. M. (1984). Desire for control, locus of control and proneness to depression. Journal of personality 52:1 Duke University press.
7. Chen, Colin Silverthorne (2008).The impact of locus of control on job stress, job performance and job satisfaction in Taiwan. Leadership & Organization Development Journal, 29(7), 572 - 582.
8. Deb S., Strodl E. & Sun, J. (2015).Academic stress, parental pressure, anxiety and mental health among Indian high school students. International Journal of Psychology and Behavioral Sciences, 5(1), 26-34.
9. Gowda K. V.,Venkata Chalapathi G., Siddeshwarappa.(2017). The influence of Socio-Economic Status on Locus of Control of Sportsmen, Inernational Journal of Physical Education & Sports Sciences, 11(18), 346-348.
10. Gupta, K., & Khan, B. N. (1987). Anxiety level as factor in concept formation. Journal of Psychological Researches.
11. Kadapatti M.G & Vijayalaxmi A. H. M.(2012).Stressors of Academic Stress- A Study on Pre-University Students. Indian Journal of Scientific Research;3(1):171-175.
12. Kaur, P. (2012). Educational Aspiration of Adolescents in Relation to their Intelligence. International Multidisciplinary e-Journal,1, 37-42.
13. Lal, K. (2014).Academic Stress Among Adolescent In Relation To Intelligence And Demographic Factors. American International Journal of Research in Humanities, Arts and Social Sciences, 5(1),123-129.
14. Lee, M. & Larson, R. (2000). The Korean 'Examination Hell' Long Hours of Studying Distress and Depression.
15. Lee, M., & Larson, R. W. (1996). Effectiveness of Coping in Adolescence: The Case of Korean Examination Stress. International Journal of Behavioral Development, 19, 851-869.
16. Naik, A. R. (2015). A study on locus of control among college students of Gulbarga City. The International Journal of Indian Psychology, 2(4), 47-54.
17. Pascoe, M. C., Hetrick, S. E., & Parker, A. G. (2020). The impact of stress on students in secondary school and higher education. International Journal of Adolescence and Youth, 25(1), 104-112.
18. Rinn, A., Boazman, J., Jackson, A., & Barrio, B. (2014). Locus of control, academic self-concept, and academic dishonesty among high ability college students. Journal of the Scholarship of Teaching and Learning, 88-114.
19. Singh, A. K., & Kaur, J.(2019). Achievement Motivation and Locus of Control as predictors of academic achievement motivation among students.
20. Sonali, S. (2016). Role of Socio-economic Status in Academic Stress of Senior Secondary Students. International Journal of Advanced Education and Research ISSN: 2455-5746.
21. Uma, K. & Manikandan. K. (2013). Influence of Locus of Control, Self-esteem and Sex on Academic Stress among adolescents, Guru Journal of Behavioral and Social Sciences, 1(4), 186-193.

Jitender Kumar
Prof., Department of Education,
M.D. University Rohtak,
India

Seema Chandna
Research Scholar,
Department of Education,
M. D. University,
Rohtak, India

Created by Universal Document Converter

SATIRICAL ASPECTS IN THE NOVELS OF GEORGE ORWELL

Dr. Prabhat Kumar Sharma

Abstract : Eric Arthur Blair, known by his pen name George Orwell, is an English Novelist, Essayist, Journalist, Critic and Satirist. He colored Twentieth century especially with Essays, Articles and Novels that explore issues of social justice and political awareness. Orwell born in Motihari, India in 1903 to Richard and Ida Blair, is one of the major satirical novelists of the twentieth century and can be classed with Swift or Gold smith. He has, in his novels, presented a satirical picture of the political and social situations around him and has attacked various social and political evils of the contemporary world. The main targets of his political satire are Imperialism, Totalitarianism, Dictatorship and Communism, and those of his social satire poverty, class divisions, inequality and private school system In England. He has also employed religious satire to attack the hypocracy and ineffectiveness of the Church and the ignorance and superstition of the common people.

Orwell was not a whole time or pure satirical novelist Like Peacock, Thackeray or Waugh. He was, like Swift and Huxley, a partially satirical novelist since only some of his important novels, viz. Animal Farm, Nineteen Eighty Four and The Road to Wigan Pier are predominantly satirical, others being realistic social treatises containing incidental satire. Burmese Days, A Clergyman's Daughter, Keep the Aspidistra Flying and Coming Up For Air contain satire on some particular aspect or object, but the main purpose in them is the depiction of social reality.

Orwell was a staunch supporter of decency, equality, justice and individual freedom, and hated all forms of duplicity, injustice, tyranny and oppression. Whereas on the one hand he advocated the ideal cherished by him, he attacked those he disliked. Thus, his novels, essays, autobiographical pieces and journalistic writings are, on the one hand, full of polemic arguments in favour of certain ideas, systems and theories, and on the other, they also contain a bitter satirical attack on various evils of his time. Orwell was a traditional novelist who adopted traditional methods of novel writing such as those of Dickens. Wells and Emile Zola. His main aim being the portrayal of social reality and the exposure of its evils, he hardly had any concern experimentation in the field of technique. As a satirical novelist also, he adopted the traditional satirical techniques. In Animal Farm, for example, he takes up the old device of allegory and the animal fable to satirize the contemporary political situation. Through the simple story of the animals on the Manor Farm, he exposes the futility, failure and betrayal of the great October revolution in 1917 in Russia. In Nineteen Eighty Four he has, like Huxley in The Brave New World and Wells in Men Like Gods, adopted the method Of Utopian fiction. He has satirized totalitarian trends of the modern world and presented a dark anti-utopian fiction. He has satirized totalitarian trends of the modern world and presented a dark anti-utopian picture of the political situation around him and the consequences it might lead to. Satire in Orwell's other novels is only one of the elements appearing occasionally and colouring his vision and presentation of social reality. It is there as an incidental element in an overall picture of social reality presented in the traditional realistic and naturalistic manner.

Thus, both form the viewpoint of form and content, Orwell has employed the weapon of satire to lash out against the various social and political evils. A look at some of the examples of satirical presentation of ideas, characters and systems will suffice to convince one of his statuses as a satirical novelist. His novel Burmese Days, contains several weaknesses and flaws as a novel. "It is satire and caricature which give the book its special quality."[1]

A Clergyman's Daughter, though the least successful novel Of Orwell, contains satirical attack on religion, the church and private schools. Orwell satirizes the popular view of some people who believe that the poor in this world should not grieve because they enjoy riches in the next world. This is what Mrs. Pither says to Dorothy: "That's the best way, Miss Dorothy — poor in this world and rich in the next."[2] Orwell also attacks the English private schools where, in the words of Mrs. Creevy, "the fees comes first and everything else comes afterwards."[3] Thus, whereas Burmese Days contains much political satire, A Clergyman's Daughter has much social and religious satire in it.

Money or the struggle against money forms the central theme of Keep The Aspidistra Flying. The novel is unflinching in its attack, which sometimes seems overdone - on money - God and its worship by people. The attack is made through Gordon Comstock who realizes that "Money, money, always money.... without money you can 't be straightforward in your dealings. With women, constancy, like all other virtues, has got to be paid for in money."[4] By finally embracing a life of middle class values with its usual concern with money. Comstock himself becomes a target of Orwell's satirical attack. Orwell's next novel Coming Up For Air, contains an attack on modem society, which is "more precise and more controlled than in earlier books."[5] Orwell satirizes war by presenting it as a "great flood rushing you along to death" and suddenly shooting "you up some back water where you'd find yourself doing and drawing extra pay for them."[6]

Building societies are exposed in this novel as "probably the cleverest racket of modern times."[7] Thus, war; war-machinery and building societies and evils of unchecked industrialization are attacked in Coming Up For Air.

Created by Universal Document Converter

The Road to Wigan Pier, a typical social satire was written on an invitation from Victor Collanoz, who had published some of his earlier works, to report on the social conditions existing in the depressed industrial areas of England. Orwell satirizes the squalid coal areas of the towns, Lancashire and Workshire in the north of England. The condition of working classes is satirized in these towns where more than one-third of the people were unemployed. Giving up his job in a Hampstead bookshop, Orwell settled down in the region to come in close contact with the working people. Staying in a cheap lodging house in Lancashire and braving bug-bites and black beetles, he acquired a first-hand knowledge of the working classes there and satirized that life in The Road to Wigan Pier.

The Road to Wigan Pier is a typical social satire in which Orwell satirizes the conditions of the lower middle class people, working men and coal miners in a very socialistic manner. Orwell satirises as well as sympathesises with the poor unemployed and explains the mental and physical agony they have to undergo. The last two novels of Orwell, viz. Animal Farm and Nineteen Eighty Four are both works of exquisite political satire and contain vigorous attack on the evils of totalitarianism and the betrayal of the Revolution. The hypocracy, oppression, tyranny, the loss of individual freedom, perversion of language for political ends and suppression of truth for political expediency under the dictatorial regimes such as that in Russia of the post-revolutionary days, are some of the evils satirized in both these novels.

Animal Farm is a great typical political satire, as Orwell has remarked in 'Why I write', "Animal Farm wag the first book in which I tried, with full consciousness of what I was doing, to fuse political purpose and artistic purpose in to one whole."8 This remark points to the success that Orwell achieved in fusing his political satire in a perfectly artistic form of a beast-fable. In all his novels before Animal Farm his propagandist or polemical intention tended to overshadow the novelistic design and purpose, and his main characters usually were self portraits acting as mouthpieces of his social and political satires. In Animal Farm, for the time Orwell has succeeded in blending his political satire with the literary form he adopted.

Animal Farm depicts the failure of the Russian revolution through the failure of the revolution at the Manor Farm. The common animals are shown leading as wretched a life as in the pre-revolution days, and are as ill-fed and ill clad as then. A new class of exploiters and a dictator among them is presented through the pigs who enjoy all privileges and exploit the poor animals. There is no difference between the human exploiters and the fellow animal exploiters. Ultimately they fail to distinguish between men and animals, and find it "impossible to say which was which."[9]

The ultimate object of satirical attack is the corruption of the English language. "Language was a subject on which Orwell felt as deeply as Swift."10 He was an amateur philologist of genius, possessed of a skill in manufacturing absurd and memorable slogans unequalled by anyone in the advertising profession. Nineteen Eighty Four satirizes the loss of individual freedom in a totalitarian regime where not only the physical lives and actions of people are controlled but also their thoughts, their feelings and their private life including their sexual activity. Through this great political satire, Orwell pillories the totalitarian tendencies of the contemporary world, and presents a dismal picture of the world, as it would become if these tendencies were allowed to continue. Through the presentation of the anti-utopian world of Nineteen Eighty Four, the novel satirizes the political trends of the present where an individual has no right of dissent and has to admit that two and two make five, if is rulers want him to believe it. Thus, I find that Orwell is a satirist who has employed the weapon of satire to expose the social and political evils of his time. In doing this, he seeks and serves the purpose of reforming this world by correcting its evils.

Conclustion : Hence, now we come to conclusion that Orwell is one of the major satirical novelists of the twentieth century and can be placed with Aldous Huxley, Elveyn Waugh, Anthony Powell and Rex Warner. He has, in his novels presented a satirical picture of the socio-political situation about the times he lived and work.

REFERENCES-

1. Lawrence Brander, George Orwell, p.76.
2. A Clergyman's Daughter, p.20.
3. A Clergyman's Daughter, p.208.
4. Keep the Aspidistra Flying, p.112.
5. Jenni Cadler, Chronicles of Conscience, p.164.
6. Coming up For Air, p.116.
7. Coming up For Air, p.15.
8. Collected Essays, p.426.
9. Animal Farm, p.120.
10. Miriam Gross, The World of George Orwell, p.142.

Dr. Prabhat Kumar Sharma
E-36 Balwant Nagar, Gwalior M.P.

Professior English
Govt. K.R.G.(Auto)
P.G. College Gwalior M.P.
9039131915
prabhatgwl1960@gmail.com

Created by Universal Document Converter

DHEERAJ PACHNANDA

Goods Transportation Services

Abstract : I have worked with practical problems of Goods Transportation Services in systematic manner. It comprises of many examples and theoretical aspects.

Background

The Levy of Service Tax on Road Transportation Service has always been a contentious issue. The Finance Act, 1997 had levied Service Tax on Goods Transport Operators w.e.f 16-11-1997 which was subsequently withdrawn after nation-wide strike. Thereafter by the Finance (No.2) Act, 2004 Service Tax was imposed on transport of Goods by Road service rendered by a goods transport agency with effect from 10-09-2004.However, the levy was deferred until further notice again in view of transporters¡¦ strike. The legal position prevailing under Service tax is being continued under the GST regime. The services of transportation of goods by road (except services of GTA) continue to be exempt even under GST regime. In so far as the services of GTA is concerned, if the Services (of Goods Transportation) are provided (by the GTA) to specified classes of persons, the tax liability falls on such recipients under the reverse charge mechanism. The following discussion will clarify the position.

Key Points - Services by way of transportation of goods (Heading 9965):

✦ It is to be seen that mere transportation of goods by road unless it is a service rendered by a goods transportation agency, is exempt from GST.

Question is that who is Goods Transport Agency (GTA)

✦ wgoods transport agency¡ü means any person who provides service in relation to transport of goods by road and issues consignment note, whatever name called;

Thus it can be seen that issuance of a consignment note is the important for a supplier of service to be considered as a Goods Transport Agency. If such a consignment note is not issued by the transporter, the Service provider will not come within the ambit of goods transport agency.

(4) What is consignment note :

✦ Consignment Note means a document, issued by a goods transport agency against the receipt of goods for the purpose of transport of goods by road in a goods carriage, which is serially numbered and contains the name of the consignor and consignee, registration number of the goods carriage in which the goods are transported, details of the goods transported, details of the place of origin and destination, person liable for paying service tax whether consignor, consignee or the goods transport agency.

(5) Charge of GST on services provided by GTA

✦ Services of goods transport agency (GTA) in relation to transportation of goods (including used household goods for personal use) (Heading 9965 & 9967 respectively) attracts GST @2.5% or 6% CGST. Identical rate would be applicable for SGST also, taking the effective rate to 5% or 12%. However, the rate of 5% is subject to the condition that credit of input tax charged on goods or services used in supplying the service has not been taken.

✦ Credit of input tax charged on goods or services used exclusively in supplying such service has not been taken.

✦ Credit of input tax charged on goods or services used partly for supplying such service and partly for effecting other supplies eligible for input tax credits, is reversed as if supply of such services is an exempt supply and attracts provisions of sub-section (2) of section 17 of the Central Goods and Services Tax Act, 2017 and the rules made there under.

Note : Section 17 (2) attracts Apportionment of credit and blocked credit.

✦ GST @ 6% CGST (12% cumulative) is subject to the condition that the goods transport agency opting to pay central tax @ 6% under this entry shall, thenceforth, be liable to pay central tax @ 6% on all services of GTA from taking ITC if option is availed.

✦ Thus, where the GTA is not eligible to take ITC for the supplies effected by it and liability under GST is discharged under reverse charge basis, the recipient of GTA service discharging the tax liability is entitled to take Input Tax Credit of the amount of tax paid under reverse charge, provided it is used in the course or furtherance of business at this end. Further the recipient would be eligible for ITC of the GST paid by GTA on forward charge basis.

(6) One issue is that in Goods Transport Services who is recipient consignor or consignee and what tax is applicable if both consignor and consignee belongs to different state.

Let us take example: Mr. A (consignor) belongs to U.P send goods to Mr. B (consignee) of Delhi by Goods Transport Agency through Consignment Note. Here question is that who is recipient Mr. A or Mr. B and what Tax (CGST,SGST,IGST) will be charged

If in Consignment Note word ¡§Paid¡¨ is indicated then Mr. A is Recipient CGST and SGST will be charged.

If in Consignment Note word ¡§To be Paid¡¨ is indicated then Mr. B is Recipient IGST will be charged.

(7) In term of Notification no. 12/2017- Central Tax (Rate) dated 28-06-2017 The Following services are exempt from GST.

Created by Universal Document Converter

Entry No.	Chapter, Section, Heading, Group or Service Code (Tariff)	Description of Services	Rate PK(per cent.)	Condition
18	Heading 9965	Services by way of transportation of goods- (a) by road except the services of— (i) a goods transportation agency; (ii) a courier agency; (b) by inland waterways.	Nil	Nil
20	Heading 9965	Services by way of transportation by rail or a vessel from one place in India to another of the following goods – (a) relief materials meant for victims of natural or man-made disasters, calamities, accidents or mishap; (b) defence or military equipments; (c) newspaper or magazines registered with the Registrar of Newspapers; (d) railway equipments or materials; (e) agricultural produce; (f) milk, salt and food grain including flours, pulses and rice; and (g) organic manure.	Nil	Nil
21	Heading 9965 or Heading 9967	Services provided by a goods transport agency, by way of transport in a goods carriage of - (a) agricultural produce; (b) goods, where consideration charged for the transportation of goods on a consignment transported in a single carriage does not exceed one thousand five hundred rupees; (c) goods, where consideration charged for transportation of all such goods for a single consignee does not exceed rupees seven hundred and fifty; (d) milk, salt and food grain including flour, pulses and rice; (e) organic manure; (f) newspaper or magazines registered with the Registrar of Newspapers; (g) relief materials meant for victims of natural or man-made disasters, calamities, accidents or mishap; or (h) defence or military equipments.	Nil	Nil
21 A		Services provided by GTA to an unregistered person, including an unregistered casual taxable person, other than the following recipients, namely:- (a) any factory registered under/governed by the factories act, 1948 or (b) any Society registered under the societies Registration Act, 1860 or under any other law for the time being in force in any part of India; or (c) any Co-operative Society established by or under any law for the time being in force; or (d) any body corporate established, by or under any law for the time being in force; or (e) any partnership firm whether registered or not under any law including association of persons; (f) any casual taxable person registered under CGST Act or IGST Act or SGST Act or UTGST Act.	Nil	Nil

(8) Conclusion:-

The above discussion shows that not all transport of goods by road is by a GTA. To qualify as services of GTA, the GTA should be necessarily issuing a consignment note. Only Services provided by a GTA are taxable under GST. Services of transportation of goods by a person other than GTA are exempt.

Moreover, in cases where the service of GTA is availed by the specified categories of persons in the taxable territory, the recipients who avail such services are the ones liable to pay GST and not the supplier of services unless the GTA opts for collecting and paying taxes @ 12% (6% CGST + 6% SGST).

In all other cases where GTA services is availed by persons other than those specified, the GTA service suppliers is the person liable to pay GST. The GTA service suppliers is not entitled to take ITC on input services availed by him if tax is being charged @ 5% (2.5% CGST+ 2.5% SGST). In case the GTA service suppliers hires any means of transport to provide his output service, no GST is payable on such inputs.

(9) FAQS ON TRANSPORT & LOGISTICS

Q. (i) I am a single truck owner-operator and I ply my truck mostly between States, carrying the goods booked for my truck by an agent; aggregate value of service which I provided exceeded twenty lakh rupees during last year. Am I supposed to take registration?

Ans. You are not liable to registration, as services provided by way of transportation of goods by road are exempt. Notification No. 12/2017- Central Tax (Rate), dated 28th June, 2017 refers.

Q(ii). I own a single truck and I rent it to a major player, who provides GTA service; should I take a registration? Does my monthly rental/lease income attract GST?

Ans. Registration is not required since services by way of giving on hire, a means of transportation of a goods to a GTA are exempt from tax vide entry no. 22 of Notification No. 12/2017- Central Tax (Rate) dated 28th June,2017.

Q (iii). In my truck, I only carry fruit and vegetables, in relation to whose transportation of service GST is exempt; should I take registration?

Ans. Service by way of transportation of goods by road other than by a GTA or a courier agency are exempt from tax under entry no. 18 of Notification No. 12/2017-Central Tax (Rate) dated 28th June, 2017 and thus you are not liable for registration.

Q(iv). I am truck supplier/broker. My job is get

Created by Universal Document Converter

orders for truck owners. I quote the rate for transportation to GTA on behalf of truck owners and I get a small amount as commission out of the truck hire fixed with the GTA. This brokerage is paid by the truck owners. As the services provided by way of transportation of goods by road are exempt from tax, am I liable to registration?

Ans. You are liable to registration if the aggregate amount of commission received by you in a financial year exceed Rs. 20 lakhs (Rs. 10 lakh is special category States except J & K).

Q(v). As a transporter, am I required to maintain any records of my services of transportation?

Ans. Yes, in terms of section 35(2) of the CGST Act, 2017 you are required to maintain records of the consigner, consignee and other relevant details of the goods. Further, in terms of rule 56 of the CGST Rules, 2017 you are required to maintain records of goods transported, delivered and goods stored in transit by you along with the GSTIN of the registered consigner and consignee for each of your branches.

Q(vi). Are intermediary and ancillary services such as, loading/ unloading, packing/unpacking, transhipment and temporary warehousing, provided in relation to transportation of goods by road to be treated as part of the GTA service, being a composite supply, or these services are to be treated as separate supplies

Ans. The GTA provides service to a person in relation to transportation of goods by road in a goods carriage , which is a composite service. The composite service may include various intermediary and ancillary services, such as, loading/ unloading, packing/unpacking, transhipment and temporary warehousing, which are provided in the course of transport of goods by road. These services are not provided as independent services but as ancillary to the principal service, namely, transportation of goods by road. The invoice issued by GTA for providing the said service includes the value of intermediary and ancillary services.

In view of this, if any intermediary and ancillary service is provided in relation to transportation of goods by road, and charges, if any, for such services are included in the invoice issued by GTA, such service, would form part of the GTA service and would not be treated as a separate supply. In fact, any service provided along with the GTA service that is part of the composite service of GTA shall be taxed along with GTA service and not as separate supplies. However, if such incidental services are provided as separate services and charged separately, whether in the same invoice or separate invoices, they shall be treated as separate supplies.

Q(vii). As per Notification number 05/2017-Central Tax dated 19th June2017, the persons who are only engaged in asking supplies or taxable goods or services or both, the total tax on which is liable to be paid on reverse charge basis by the recipient of such goods or services or both under sub-section (3) of section 9 of the CGST Act, 2017 are exempted from obtaining registration under the said Act. Please clarify whether a GTA providing service in relation to transportation of goods by road under the reverse charge mechanism (RCM) can avail of the benefit of the exemption

Ans. Yes, a GTA providing service in relation to transportation of goods by road under RCM can avail of the benefit of the exemption.

Q(viii). Can a GTA obtain registration for one vertical (Rail, Cargo, Renting, Warehousing etc.) for which tax needs to be paid while not obtaining registration for another vertical (GTA under RCM) on which there is no tax liability

Ans. No, because the business entity is not engaged exclusively in the supply of services liable to tax under reverse charge mechanism.

Q(ix). In transport industry, old vehicles, old tyres, scrap material etc, on which no input tax credit (ITC) has been taken, are disposed after completion of their useful life. As a truck owner disposing of these goods, am I required to pay GST considering that no ITC has taken at the time of their initial purchases? Would levy of tax in such cases not amount to double taxation, as tax has already been paid at the time of initial purchases?

Ans. Under section 7 of the CGST Act, 2017 supply includes all forms of supply of such goods such as sale, transfer, barter, exchange, licence, rental, lease or disposal made or agreed to be made for a consideration by a person in the course or furtherance of business. Sale or disposal of old vehicles, old tyres, and scrap material for a consideration would therefore attract GST regardless of whether ITC has been availed or not.

Q(x). Please clarify whether input tax credit is available to the recipient of service, when the GST paid by him is at a concessional rate of 5% under RCM.

Ans. Yes, input tax credit is available in such cases.

Q(xi). When a GTA hires a truck (with driver) from another GST registered entity for the purpose of providing goods transport service to a registered recipient, whether tax credit is available to the GTA on the GST paid by him to the owner of the truck registered under GST

Ans. Services by way of giving on hire to a GTA, a means of transportation of goods are exempt from GST under Notification No/ 12/2017-Central Tax (Rate) dated 28th June 2017. When the tax is not payable, the question of talking any tax credit does not arise.

References

1. www.gstcouncil.gov.in
2. www.cbic.gov.in
3. www.cbec-gst.gov.in
4. Tax Publishers, Jodhpur

CA DHEERAJ PACHNANDA (Research Scholar) C.C.S. UNIVERSITY MEERUT Reg. No:Res/2A/1700822/9349 Email:- cadheeraj2011@gmail.com Address:- H.No: 2A/ 2302, Opp. S.A.M Inter College, Ram Nagar, Guru Dwara Gali, Saharanpur, UP,Pin-247001 Mob:-8791067333

Created by Universal Document Converter

A STUDY OF JOB SATISFACTION OF MALE AND FEMALE SENIOR SECONDARY SCHOOL TEACHERS IN RELATION TO THEIR TECHNOLOGICAL, PEDAGOGICAL & CONTENT KNOWLEDGE(TPACK)

DR. UMENDER MALIK, NIDHI MADAN

Abstract : That time has gone when teachers conveyed a concept orsubject by applying ordinary and customary strategies however in the present situation just this won't exercise as in present time one must be technologically stable having content information and the craftsmanship to show it moreover. In this way, in teaching-learning process, utilization of increasingly innovative and technologically sound techniques has become the basic necessity. Consequently, so as to examine whether any relation existed among TPACK and job satisfaction and arrangement of progressively innovative & technologically sound techniques and strategies can enhance the job satisfaction, this very research paper had through light on this objective. Job Satisfaction has been treated as dependent variable and TPACK as independent variable. Descriptive survey method was used. The sample comprised of 600 private school teachers selected through stratified random sampling technique. Teachers Job Satisfaction Scale by Malik and Madan (2019) and TPACK Scale by Sharma and Sharma (2017) were used for data collection. Data was analysed by Pearson Product Moment Correlation and Linear Regression Analysis. The present study showed a positive correlation between TPACK and job satisfaction of private male & female school teachers. In addition to this, significant relation also existed of TPACK on job satisfaction. To interpret the data scatter diagram was used.

Keywords: Job Satisfaction, Technological, Pedagogical and Content Knowledge(TPACK), Private School Teachers.

INTRODUCTION

As globalization hasa huge effect on practically all circles of our life thus education is no exemption. The developing requests of globalization has likewise contacted the educational framework and it set forward entire parcel of difficulties before it. The quality and standard of education is for the most part relies upon the quality and competency of the teachers. Along these lines, keeping in view this thing, one can infer that it's imperative to have satisfaction of teachers in their own jobs. The idea, "Job Satisfaction" not just contributed towards proficient development of the employees & employers, however it additionally impacts the general existence of them.Robbins (2002) defines job satisfaction as a subjective measure of worker attitudes, that is, an individual's general attitudes to his or her job. A person with high job satisfaction holds called positive attitudes towards the job and one who is dissatisfied with, has negative attitudes towards its job.TPACK includes entire part of implantation and coordination among all the components discussed previously. It gives theteacher a specialist approach to coordinate technology with the most ideal decision of the techniques, systems and materials to instill the comprehension and the utilization of the concerned content taught. It gives the teaching plan as how to teach in this advanced age.The TPACK framework acknowledges that teaching is a highly complicated practice using flexible and integrated knowledge. It is the intersection of pedagogy, content and knowledge which is the centre focus of TPACK. (Mishra, Koehler, Hanriksen, 2011,23).TPACK confine itself to 'what' to teach however amplifies itself to 'how' to teach and 'why' to teach and 'why' to utilize technology. It gives the chances to advancement, to address and fulfil the technological needs of the 21st century classroom and teaching-learning process. In this way, Technological Pedagogical and Content Knowledge (TPACK) is a system that is intended to comprehend and depict the sorts and nature of the knowledge that is required by a teacher for successful use of pedagogical practices in a technologically improved learning condition.Ali & Akhtar (2009)considered "job status, sex & levels of education as factors of job satisfaction of senior secondary educators". 80 senior secondary educators (males-40 & females-40, Post-graduate educators 45 & part time educators-35, Ph.D. holders-51 and non-Ph. D-29) were chosen randomly. The "outcomes discovered that the level of female's job satisfaction was seen as essentially more than the male educators". Further, Post-graduate educators holding Ph.D. degree demonstrated significantly high extent of job satisfaction than part-time educators holding just post graduate degree. Post graduate educators holding Ph.D. were altogether more fulfilled than the educators holding just post graduate degree. Klassen, K.M. & Anderson, C.J. (2009) in their article titled, "How Time Change: Secondary Teachers, Job Satisfaction & Dissatisfaction which focused on the job satisfaction level & bases of dissatisfaction". 210 teachers of South West England were taken to rate their job satisfaction level from the 1962 study. "Teachers in 2007 appraised significantly lesser job satisfaction, however in 1962 were related frequently with peripheral bases of job satisfaction like pay, state of building & apparatus & poor human relations". Teachers in 2007 have shown greater concerns for aspects associated to teaching itself (example time strains & pupil's behaviour). The deviations in dissatisfaction bases are apprehended correct for both male & female teachers with no differences in ranking in milieu to teaching years' experience.Bingimlas., K. (2018)studied the knowledge of

Created by Universal Document Converter

Saudi teachers on 3 dimensions of TPACK- technology, content & pedagogy. A sample of 111 males & 132 females were selected, from that 116 were of primary grade, 55 of middle & 72 were of secondary. Approx. 32% teachers hold 10-20 years of experience & about 27% having experience of 5-10 years. Most of the teachers reported average confidence level of knowledge comparative to the TPACK context but certain variances occurred in terms of sex, teaching topics & experience. Substantial variance was seen between technological content knowledge & teaching experience. Suggestions given that educators should altertheir teaching style from conventional to effective learning methods with the usage of technology. Additionally, Education Ministry will focus on providing all schools with educational technologies along with teacher's training on effective technologies. Mai & Hamzah (2016) aimed to address the teacher's perceptions towards the affordance of technology application in instruction along with primary science teacher's perception of TPACK. A sample of 133 Malaysian teachers (67-females, 66-males) was taken. For data collection, TPACK scale used by Schmidt et.al (2009)having 47 questions was used. The "tool comprised of 7 factors: TK, PK, CK, TCK, TPK, PCK & synthesized knowledge of Technology, Pedagogy & Content (TPC)". Finding showed that teachers perceived higher confidence in PK whereas no differences existed in terms of gender but differences existed in the perception towards PK, CK & PCK in terms of age.

RESEARCH OBJECTIVES

O1 To find out the correlation of TPACK with job satisfaction of senior secondary school teachers.

O2 To identify the role of TPACK in predicting job satisfaction of senior secondary school teachers.

O3 To find out the correlation of TPACK with job satisfaction of male senior secondary school teachers.

O4 To identify the role of TPACK in predicting job satisfaction of male senior secondary school teachers.

O5 To find out the correlation of TPACK with job satisfaction of female senior secondary school teachers.

O6 To identify the role of TPACK in predicting job satisfaction of female senior secondary school teachers.

RESEARCH HYPOTHESES

H01 There exists no significant correlation of TPACK with job satisfaction of senior secondary school teachers.

H02 There exists no significant role of TPACKin predicting job satisfaction of senior secondary school teachers.

H03 There exists no significant correlation of TPACK with job satisfaction of male senior secondary school teachers.

H04 There exists no significant role of TPACKin predicting job satisfaction of male senior secondary school teachers.

H05 There exists no significant correlation of TPACK with job satisfaction of female senior secondary school teachers.

H06 There exists no significant role of TPACKin predicting job satisfaction of female senior secondary school teachers.

TOOLS USED

✧ Job Satisfaction Scale which was constructed and standardized by Dr. Umender Malik and Nidhi Madan.

✧ TPACK Scale developed by Sharma and Sharma (2017)

OPERATIONAL DEFINITIONS OF KEY TERMS

✧ **Job Satisfaction**

Job Satisfaction is the combination of physiological, psychological and environmental circumstances that cause a person truthfully to say. "I am satisfied with my job" - Hoppock.

In the present study, Job Satisfaction refers to the scores obtained by senior secondary school teachers in the Job Satisfaction Scale by Malik and Madan (2019).

✧ **Technological, Pedagogical & Content Knowledge (TPACK)**

TPACK is the knowledge of subject matter(content), what is good for learning(pedagogy) and Technology (ICT). The combination is described as Technological, Pedagogical & Content Knowledge (TPACK).It is more than simply adding ICT to traditional approaches. It depends upon deep knowledge of how ICT can be used to access and process subject matter (TCK) and understanding how ICT can support and enhance learning (TPK) in combination with PCK (Schmidt et al,2009).In the present study, TPACK refers to the scores obtained by senior secondary school teachers in the TPACK Scale developed by Sharma and Sharma (2017).

✧ **Private Senior Secondary School Teachers**

In the present study, it refers to teachers teaching 11th and 12th classes of private schools situated in Haryana State.

DELIMITATIONS OF THE STUDY

✧ Study was confined to the Senior Secondary Schools situated in the Jhajjar, Rohtak and Sonepat districts (State - Haryana) only.

✧ The Study was confined to some of the Private Senior

Created by Universal Document Converter

Secondary School Teachers situated in Haryana state only.

✧ The Study was delimited to two variables only: Job Satisfaction and TPACK.

✧ The study was delimited to only 600 teachers as a sample.

VARIABLES USED

✧ Dependent Variable: Job Satisfaction

✧ Independent Variable: Technological, Pedagogical and Content Knowledge (TPACK)

STATISTICAL TECHNIQUES USED

The investigator used appropriate techniques. The investigator had used Pearson product moment correlation and Linear Regression analysis for studying the correlation and prediction of dependent variable by independent variable.

SAMPLE AND PROCEDURE

For collecting data, various private schools of Jhajjar, Rohtak and Sonepat districts had been taken. Stratified Random Sampling Technique was used to collect data of 600 teachers. The investigator personally visited the schools. After that the investigatoradministered the tools on the private school teachers. After collection of data, the results were presented as given below:

DATA ANALYSIS AND INTERPRETATION

O1 To find out the correlation of TPACK with job satisfaction of senior secondary school teachers.

H01 There exists no significant correlation of TPACK with job satisfaction of senior secondary school teachers.

✧ Correlation of Technological, Pedagogical and Content Knowledge (TPACK) with Job Satisfaction in Overall Sample

Table No. 1.1 - Correlation Coefficient (r)

Variable	N	Mean	S.D.	Correlation
Job Satisfaction (Dependent)	600	90.11	15.19	0.268
TPACK (Independent)	600	227.22	23.97	

0.05 Level of Significance = 0.088& 0.01 Level of Significance = 0.115 at df (598)

The above Table No 1.1 has shown that correlation coefficient is 0.268 which is positive andsignificant. So, null hypothesis is rejected at 0.05 and 0.01 levels of significance.Thus, there exists significant positive correlation of TPACK with job satisfaction.

Fig. No. 1.1 Scatter Diagram Showing Correlation in Overall Sample

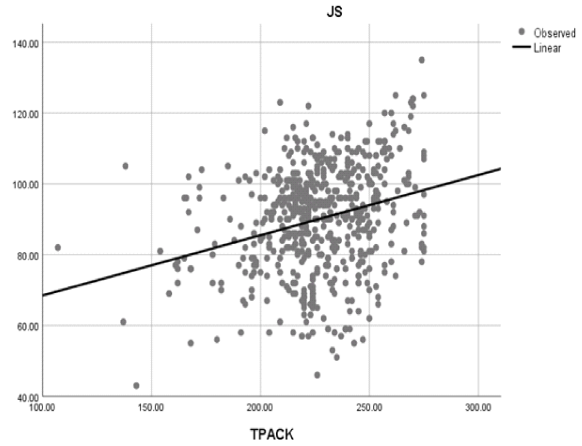

Above correlation analysis depicted the positive correlation of TPACK with job satisfaction but this did not indicate how much and how well TPACK had logical bearing on job satisfaction, for this regression analysis was done.

Regression Analysis

O2 To identify the role of personality in predicting job satisfaction of senior secondary school teachers.

H02 There exists no significant role of personality in predicting job satisfaction of senior secondary school teachers.

Prediction of Job Satisfaction by TPACK as Predictor in Overall Sample

Model	R	R Square	Adjusted R Square	Std. Error of the Estimate
1	0.268	0.072	0.070	14.648

a. Predictor: (Constant) - TPACK

Table (b) - ANOVA

	Sum of Squares	DF	Mean Square	F	Sig.
Regression	9943.323	1	9943.323	46.343	0.000
Residual	128305.742	598	214.558		
Total	138249.065	599			

0.05 Level of Significance = 3.86 and 0.01 Level of Significance = 6.69 at df 1/599

Created by Universal Document Converter

Table (c) - Coefficients

Model	Unstandardized Coefficients		Standardized Coefficients	t	Sig.
	B	Std. Error	Beta		
TPACK	0.170	0.025	0.268	6.808	0.000
(Constant)	51.490	5.705		9.025	0.000

From the above regression summary table, it is clear that the total variance in job satisfaction contributed by TPACK is 7.2% which is known as coefficient of determination. The regression is significant at 0.01 & 0.05 levels of significance as the calculated F-value 46.343 is greater than table value and therefore null hypothesis is rejected. Thus, there exists significant role of personality in predicting job satisfaction. From the coefficient table, it is noticed that TPACK contributes positively to job satisfaction. From the unstandardized beta coefficient value, it can be interpreted that if TPACK goes for increase one unit, job satisfaction will increase by 0.170 units.

Concerned Objective:

O3 To explore the correlation of TPACK with job satisfaction in male teachers.

Concerned Hypothesis:

H03 There exists no significant correlation of TPACK with job satisfaction in male teachers.

Correlation of Technological, Pedagogical and Content Knowledge (TPACK) with Job Satisfaction in Male Teachers

Table No.1.2 Correlation Coefficient (r)

Variables	N	Mean	S.D.	Correlation
Job Satisfaction (Dependent)	300	88.33	17.34	0.279
TPACK (Independent)	300	227.24	24.69	

0.05 Level of Significance = 0.113 & 0.01 Level of Significance = 0.148 at df (298)

As the above table specify, correlation value in male teachers of TPACK with jobsatisfaction is 0.279 which is significant at 0.01& 0.05 levels, therefore, null hypothesis is rejected at 0.01 & 0.05 levels. Thus, there exists positive & significant correlation of TPACK with Job Satisfaction. For better understanding of the correlation, scatter diagram is shown as below:

Fig. No. 1.2 Scatter Diagram Showing Correlation in Male Teachers

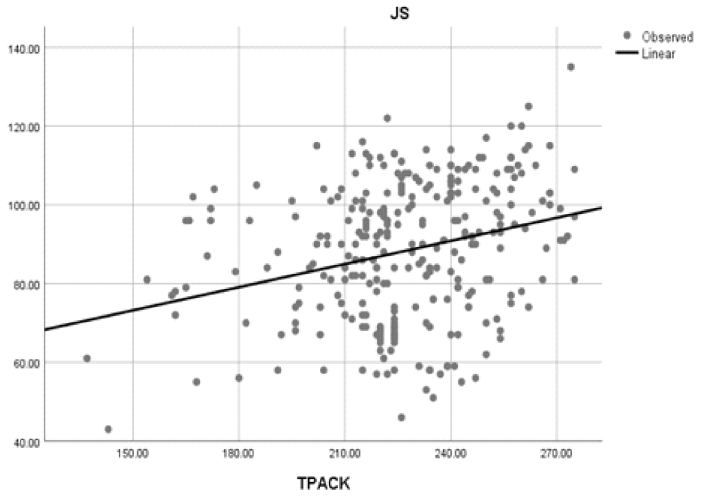

Concerned Objective:

O4 To identify the role of TPACK in predicting job satisfaction in male teachers.

Concerned Hypothesis:

H04 There exists no significant role of TPACK in predicting job satisfaction in male teachers.

Prediction of Job Satisfactionby TPACKas Predictor in Male Teachers

Table (a) Model Summary

Model	R	R Square	Adjusted R Square	Std. Error of the Estimate
1	0.279[a]	0.078	0.075	16.685

a. Predictor: (Constant) - TPACK

Table (b) ANOVA

Model		Sum of Square	Df	Mean Square	F	Sig.
1	Regression	7006.929	1	7006.929	25.171	0.000
	Residual	82955.738	298	278.375		
	Total	89962.667	299			

0.05 Level of Significance = 3.87 & 0.01 Level of Significance = 6.72 at df 1/298

Table (c)Coefficients

Model	Unstandardized Coefficients		Standardized Coefficients	t	Sig.
	B	Std. Error	Beta		
TPACK	0.196	0.039	0.279	5.017	0.000
(Constant)	43.790	8.931		4.903	0.000

From the above model summary table, R2= 7.8% & as R2

Created by Universal Document Converter

indicates the proportion of variation in dependent variable i.e. job satisfaction that is due to variation in independent variable i.e. TPACK is 7.8%. In the ANOVA table, the F-value is greater than the p-value, so the null hypothesis is rejected at 0.01 & 0.05 levels of significance i.e. there exists significant role of TPACK in predicting job satisfaction in male teachers. From the coefficient table, it has seen that there is positive correlation between TPACK & job satisfaction but one has to through light on unstandardized beta coefficient value. Beta coefficient value shows the degree of change in outcome/ dependent variable for every one unit of change in the predictor /independent variable. Now as the table shows that for each unit increase in the TPACK variable, the dependent variable i.e. job satisfaction will increase by 0.196 units.

Correlation of Technological, Pedagogical and Content Knowledge (TPACK) with Job Satisfaction in Female Teachers

Concerned Objective:

O5 To explore the correlation of TPACK with job satisfaction in female teachers.

Concerned Hypothesis:

H05 There exists no significant correlation of TPACK with job satisfaction in female teachers.

Table No.1.3 Correlation Coefficient (r)

Variables	N	Mean	S.D.	Correlation
Job Satisfaction (Dependent)	300	91.89	12.45	0.263
TPACK (Independent)	300	227.20	23.26	

0.05 Level of Significance = 0.113 & 0.01 Level of Significance = 0.148 at df (298)

As the above table specify, correlation value in female teachers of TPACK with job satisfaction is 0.263 which is significant at 0.01& 0.05 levels, therefore, null hypothesis is rejected at 0.01 & 0.05 levels. Thus, there exists positive & significant correlation of TPACK with Job Satisfaction. For better understanding of the correlation, scatter diagram is shown as below:

Fig.No. 1.3 Scatter Diagram Showing Correlation in Female Teachers

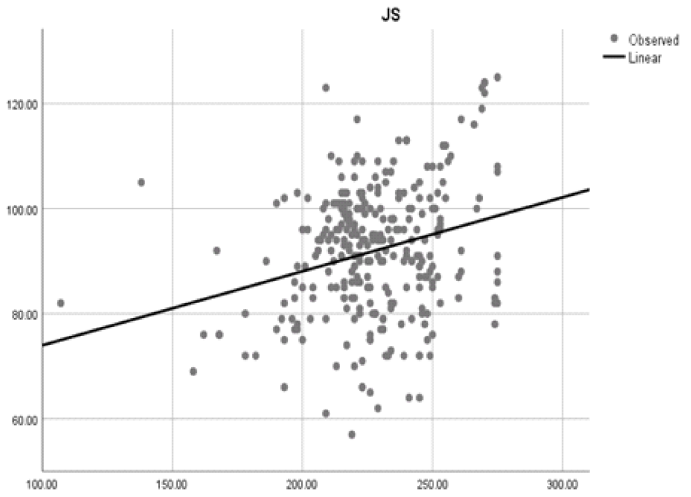

Concerned Objective:

O6 To identify the role of TPACK in predicting job satisfaction in female teachers.

Concerned Hypothesis:

H06 There exists no significant role of TPACK in predicting job satisfaction in female teachers.

5.4.3.3 Prediction of Dependent Variable (Job Satisfaction) by Independent Variable (TPACK) as Predictor in Female Teachers

Table (a) Model Summary

Model	R	RSquare	Adjusted R Square	Std. Error of the Estimate
1	0.263[a]	0.069	0.066	12.037

a. Predictor: (Constant) - TPACK

Table (b) ANOVA

Model		Sum of Square	Df	Mean Square	F	Sig.
1	Regression	3204.344	1	3204.344	22.116	0.000
	Residual	43177.453	298	144.891		
	Total	46381.797	299			

0.05 Level of Significance = 3.87 & 0.01 Level of Significance = 6.72 at df 1/298

Created by Universal Document Converter

Table (c) Coefficients

Model	Unstandardized Coefficients		Standardized Coefficients	t	Sig.
	B	Std. Error	Beta		
TPACK	0.141	0.030	0.263	4.703	0.000
(Constant)	59.918	6.835		8.766	0.000

From the above regression ANOVA table, it is seen that the calculated F-value 22.116 which is greater than the p-value. This resulted into their rejection of null hypothesis at 0.01 & 0.05 levels of significance, therefore there exists a significant role of TPACK in predicting job satisfaction in female teachers. From the model summary table, it is clear that a TPACK contributes only 6.9% variance for job satisfaction is (R2 =6.9%) which is known as coefficient of determination. From the coefficient table of regression, it can be interpreted that the magnitude of change in job satisfaction is due to change in TPACK. From the coefficient table, it is noticed that TPACK contributes positively to job satisfaction. From unstandardized beta coefficient value, it can be interpreted that if TPACK goes to increase one unit, job satisfaction will increase by 0.141 units.

CONCLUSION

The investigation has reasoned that in the present technological world where utilization of technology, information on content alongside craft of encouraging will improve the teachers' viability and there by upgrade job execution just as job satisfaction. In this way, need of great importance is to furnish basic infrastructure facilities alongside much required condition and inspiration among the teachers to utilize them to highest favourable position.

REFERENCES

1. Ali, N., & Akhtar, Z. (2009). Job status, gender and level of education as determinants of job satisfaction of senior secondary school teachers. Indian Journal Social Science Researches, 6(1), 56-59.
2. Bingimlas, K. (2018). Investigating the level of teachers' Knowledge in Technology, Pedagogy, and Content (TPACK) in Saudi Arabia. South African Journal of Education, 38(3).
3 Essays, UK. (November, 2013). The concept and definition of job satisfaction. Retrieved from https:// www.ukessays .com/ essays/ psychology/ the-concept-and-definition-of-job-satisfaction-psychology-essay. php? vref = 1.
4. Klassen, R.M. and Anderson, C.J., 2009. How times change: secondary teachers' job satisfaction and dissatisfaction in 1962 and 2007. British Educational Research Journal, 35(5), pp.745-759.
5. Mai, M.Y., & Hamzah, M. (2016). "Primary Science Teachers' Perceptions of Technological Pedagogical and Content Knowledge (TPACK) in Malaysia." European Journal of Social Science, Education and Research,6(2).
6. Mishra, P., Koehler, M. J., & Henriksen, D. (2011). The seven trans-disciplinary habits of mind: Extending the TPACK framework towards 21st century learning. Educational Technology, 22-28.
7. Robbins, S.P., (2002). Organizational Behavior, 9th edition, Pearson Education Asia
8. Schmidt, D.A., Baran, E., Thompson, A.D., Mishra, P., Koehler, M.J., & Shin, T.S. (2009). Technological Pedagogical Content Knowledge (TPACK): The Development and Validation of an Assessment Instrument for Preservice Teachers. JRTE, 42(2), 123-149.

DR. UMENDER MALIK, ASSTT. PROFESSOR-III, DEPARTMENT OF EDUCATION, MDU ROHTAK

NIDHI MADAN, RESEARCH SCHOLAR, MDU ROHTAK

Created by Universal Document Converter

हिंदी साहित्य के आधुनिककालीन रचनाकारों ने उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सामाजिक जागरण एवं सुधार की प्रवृत्ति को लेकर जो आंदोलन खड़ा किया, वह हिंदी के रचनाकारों द्वारा अनवरत रूप से जारी है। इसी कड़ी में आधुनिक हिंदी साहित्य जगत के नाटककारों में डॉ. हरिशरण वर्मा एक सशक्त हस्ताक्षर हैं। सामाजिक सरोकारों और विषय–वस्तु से लबरेज उनके नाटक समाज को सामाजिक संदेश देने के साथ–साथ जाग्रत भी करते हैं। अपनी लेखनी के माध्यम से वे सामाजिक कुरीतियों और अमानवीय परंपराओं को ध्वस्त करते रहते हैं। अपने नाटक 'संस्कार', 'चादर', 'शहीद' के माध्यम से श्री हरिशरण वर्मा समाज को संदेश देते हैं।

प्रस्तुत नाटक ट्रिपल तलाक उनकी नाटक श्रृंखला की अगली कड़ी है। इस नाटक संग्रह के माध्यम से नाटककार सामाजिक कुरीतियों, अमानवीय व्यवहार को न केवल उजागर करते हैं वरन उनसे निकलने के लिए लोगों की छटपटाहट भी दर्शाते हैं। 'ट्रिपल तलाक' में नाटककार ने विभिन्न पात्रों के माध्यम से तलाक की भयावहता और मानवीय चरित्र को रेखांकित किया है। धार्मिक पाखंड और धार्मिक अधिकारों से लैस मुस्लिम पुरूष नारी को तुच्छ, उसे अपने पैरों की जूती समझता है। उसके लिए नारी इच्छा और सम्मान का कोई महत्व नहीं है। उसके लिए नारी मात्र खिलौना मात्र है जिसे जब चाहे बीच मझधार में छोड़ा जा सकता है।

नाटक में पात्र नवाब अपने शौकीन मिजाज के लिए जाना जाता है। शराब सेवन, जुआ और वेश्यागमन उसकी प्रवृत्ति है। इसी शौक में उसे न अपनी माता का ध्यान है और मैं ही अपनी गर्भवती पत्नी का। प्रसव पीड़ा से तड़पते रईसा का अपने पति नवाब का इंतजार करना नारी मन की व्यथा को दर्शाता है। लेकिन नवाब पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। वह अपने आप को संवेदनहीन धार्मिक अधिकार से लैस पाता है जो जब चाहे नारी को तलाक दे सकता है। पत्नी रईसा द्वारा उलाहना देने और शराब बंद करने के लिए कहने मात्र से नवाब उखड़ जाता है – ''यह जानने का तुम्हे कोई हक नहीं। तुम होती कौन हो?'' रईसा द्वारा यह कहने पर, ''मैं कोई भगा कर लाई गई औरत नहीं हूं जो अपाके जुल्म बर्दाश्त करती रहूंगी। मेरा आपके साथ निकाह हुआ है। जितनी घर की जिम्मेदारी आप पर है उतनी ही मुझे पर है।'' नवाब कहता है, ''रईसा चुप हो जाओ, वरना मैं तुम्हें तलाक दे दूंगा।''

मुस्लिम पुरुष के पास तलाक जैसा अचूक अस्त्र है इससे वह मुस्लिम नारी को डराता–धमकाता है। वह उसकी बेइज्जती करता है। नाटककार ने ट्रिपल तलाक के बाद मुस्लिम नारी को जिस अमानवीय पीड़ा और बेशर्मी से गुजरना पड़ता है उसका बड़ा ही जीवंत चित्रण किया है। 'हलाला' नामक प्रथा के माध्यम से नारी शोषण और उसे वस्तु समझने की मुस्लिम सोच पर करारा प्रहार किया है। नारी को मात्र वस्तु, खिलौना समझा जाता है। उसे दोबारा पाने की चाहत में नारी को जिस अमानवीय पीड़ा और बेशर्मी से गुजरना पड़ता है, उसे नाटककार ने बड़ी जीवंतता के साथ उजागर किया है। इसके साथ ही नाटककार ने मुस्लिम समाज में ट्रिपल तलाक को लेकर आधुनिक सोच को भी रेखांकित किया है। रईसा का अख्तर के साथ दुबारा निकाह इसलिए किया जाता है कि अख्तर उसे फिर से तलाक दे ताकि नवाब रईसा से दुबारा निकाह कर सके। लेकिन रईसा ने अख्तर से परे अन्य मर्द को स्वीकार नहीं कर नारी के सम्मान को बढ़ाया है।

नाटककार ने सहज लेखनी और सरस भाषा के माध्यम से नाटक को जीवंत बना दिया है। इसके साथ ही नाटककार ने मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चरित्र को मुस्लिम समाज के सामने प्रस्तुत कर नई दिशा दिखाने की कोशिश की है। इसमें सफल भी रहे हैं।

डॉ० हरिशरण वर्मा
पुस्तक लेखक
F-120, सेक्टर–10, DLF,
फरीदाबाद (हरियाणा)
harisharanverma1@gmail.com
09355676460

ममता कुमारी, समीक्षक
सहायक प्रोफेसर (हिन्दी)
डी.ए.वी. (शताब्दी) महाविद्यालय,
फरीदाबाद
9818747616

Created by Universal Document Converter

Created by Universal Document Converter

Created by Universal Document Converter